नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन का प्रकाशन न०-14

इस्लामी अक़ीदे भाग-1

ख़ुदा का विश्वास

लेखक

आयतुल्लाह सैयद मुजतबा मूसवी लारी

हिन्दी रूप

तज़हीब नगरौरी

सम्पादन

मु० र० आबिद

प्रकाशक

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

इमामबाड़ा ग़ुफ़रानमआब, चौक, लखनऊ-3

0522-2252230 - 09335276180

किताब का नाम	इस्लामी अक़ीदे (भाग-1)
लेखक	आयतुल्लाह सैयद मुजतबा मूसवी लारी
सम्पादन	मु० र० आबिद
हिन्दी रूप	तज़हीब नगरौरी
कम्पोज़िंग	आइडियल कम्प्युटर्स प्वाइन्ट, लखनऊ-3 (09935025599)
प्रकाशन मात्रा	2000
प्रकाशन वर्ष	जनवरी 2009
मुद्रक	निज़ामी प्रेस, लखनऊ
प्रकाशक	नूरे हिदायत फाउण्डेशन, लखनऊ

मिलने का पता

नूरे हिदायत बुकडिपो

इमामबाड़ा ग़ुफ़रान मआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड,

चौक, लखनऊ-226003 (उ० प्र०) भारत

फोन न० 0522-2252230

मोबाइल 09335276180

क्या? ⇒⇒⇒ कहाँ

प्रकाशक की मेज़ से

आज अपनी चौदहवीं भेंट आपकी ख़ास मज़हबी रूचि और ज्ञान की ललक के हवाले करते हुए हमें ख़ुशी है।

यह मशहूर धर्मगुरु बुज़ुर्ग आलिम और महान लेखक आयतुल्लाह सैयद मुजतबा मूसवी लारी की (4 हिस्सों की) मूल फ़ारसी रचना 'इस्लाम के बुनियादी अक़ीदे' (मूल विश्वास) के पहले हिस्से का हिन्दी रूप है। इसमें इस्लाम के एकेश्वरवादी विचार में ख़ुदा, उसके गुण और उसके ख़ास गुण न्याय/इन्साफ को आज के ज्ञान, फिलासफी, लॉजिक और साइंस की भाषा में ऐसे ख़ूबसूरत तरीक़े से पेश किया गया है जो उन्हीं के क़लम का कमाल है। मूल रचना हाथों हाथ ली गई, वैसे ही उसके अरबी, उर्दू और अंग्रेज़ी समेत कई भाषाओं में अनुवाद। हिन्दी अनुवाद के लिए हमारे पूज्य आलिम, विचारक व शिक्षाविद 'मुफ़क्किरे इस्लाम' मौलाना (डॉ०) कल्बे सादिक़ साहब की पहल पर विद्वान लेखक ने उन्हीं को इस अनुवाद का ज़िम्मा और छापने के हक़ प्रदान कर दिये। डॉ० साहब ने 'नूरे हिदायत फाउण्डेशन' पर भरोसा करते हुए हमे अनुवाद और प्रकाशन की ज़िम्मेदारी सौंपी। हमने अपने भर भरसक कोशिश की कि यह काम अच्छे से अच्छे ढंग से हो। इससे कुछ देर ज़रूर हुई जिसके लिए हमें दिल से खेद है। ख़ैर अब अलहम्दुलिल्लाह हम इसे आपको पेश करने की पोज़ीशन में आ गये। आशा है यह आपकी आशाओं और डॉ० साहब के भरोसे पर अगर पूरा न उतरे तो कम से कम उसे ठेस न पहुँचाए। आगे आप से आशा करते हैं कि इस किताब के बारे में अपने अनमोल विचार और सुझावों से हमें ज़रूर आभारी करेंगे।

मालिक से मुहम्मद[स०] व आले मुहम्मद[अ०] के सदक़े में दुआ है कि हमारी यह पेशकश किताब— दुनिया में भला, उचित और वेलकम योगदान साबित हो और हमें ज्ञान-सेवा की ज़्यादा से ज़्यादा इबादत की तौफ़ीक़ हो।

सै० मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़' जायसी
नूरे हिदायत फाउण्डेशन
[सम्पादक मासिक ''शुआ-ए-अमल'' लखनऊ]

जनवरी-2009

ANIL MISRA, IAS

Tel. : 695700
3017914

SECRETARY
to the Hon'ble Speaker, Lok Sabha
NEW DELHI

Dated 25.11.1991

Sayyed Mojtaba Musavi Lari,
Foundation of Islamic C.P.W
21 Entezam St., Qom, I.R. Iran

Dear Sir,

I thank you very much for your book "God and His Attributes" which I found extremely interesting. I will be grateful if you could send the rest of the serials regularly to me.

With best wishes,

Yours sincerely,

(Anil Misra)

समझ की पहल

अगर कुछ बातों को आँखें बन्द करके मान लेने और (कभी कभार) बन्धेटिके रीति रिवाजों पर चल लेने का नाम धर्म है, तो इस्लाम धर्म नहीं है। इस्लाम धर्म की इस परिभाषा पर पूरा नहीं उतरता। इस्लाम- कुछ नहीं, बहुत कुछ, वह भी खुले आँखों मानने और फिर इससे पैदा हुई सोच के सांचे में विश्वास भरे भरपूर खरे चलन का सटीक मेल है। इस्लाम चाहता है कि धर्म के नाम पर जो कुछ भी जो माने, सोच समझ कर, अक़्ल की कसौटी पर परख कर, बहुत ही ठोक बजाकर, ऐसे जाने बूझे को खुले मन से माने (बद्धुओं की तरह यूँ ही नहीं, बुद्धिमानों की तरह माने, फिर अपने छुट्टा मन की न माने, आगे आपकी मनमानी भी न करे), मस्तिष्क को मन के ऊपर रखकर माने। जो यह कहा जाता हैः

Religion begins where reason ends.

(जहाँ समझ दम तोड़ दे, वहाँ से धर्म शुरु होता है)

इस साँचे को भी इस्लाम तोड़ देता है। इस्लाम तो समझ को पूरा-पूरा बढ़ावा देता है और समझ भरे सोच विचार को भरपूर सकत देता है। वह तगड़ी बढ़ी समझ से अपनी मनवाना चाहता है। वह बुद्धुओं से मनवाना नहीं चाहता, बुद्धुओं पागलों से बात भी करना नहीं चाहता (यहाँ उनकी बात नहीं जो बने हुए या बनाये हुए बुद्धु नहीं हैं या जो अपना बुद्धूपन को छोड़कर समझ के साथ हो सकते हैं), इस्लाम बुद्धिमानों और बुद्धजीवियों से ही बोलता है, सोच समझ की मनवाना चाहता है। इस्लाम के ग्रन्थ कुरआन ने कई तरह इस बुद्धि से बात की है, सूझबूझ वालों को पुकारा है (उन्हे अपने पुकारने के क़ाबिल समझा) उन्हीं से ध्यान करते रहने को कहा है। नासमझों के चुटकियाँ भी ली हैं और आख़िर आख़िर सूझबूझ से पैदल लोगों को बुरी तरह फटकारा लताड़ा तक है।

हाँ, इस्लाम वहाँ समझ भिड़ाने, अक़्ल लड़ाने को नहीं कहताः जब यह समझ लिया कि भगवान है, कैसा है, जान लिया कि उसकी मानना चाहिए, फिर यह भी जान लिया कि उसकी क्या है, तो आँख मूँद कर उसकी बात पर चलना है क्योंकि Order is Order (हुक्म, हुक्म है), अनुशासन (Discipline) की बात है। उसके आदेशों के आगे अपनी-अपनी नहीं करना है। उसके हुक्मों पर चलना है, उसके आदेशों को पूरा करना है बस। उसकी बात पर चलने के लिए उसके आर्डर पर क्यों कैसे नहीं करना है। हाँ, उसकी बात पर चलते हुए, उसके हुक्म के पीछे रही समझ पर सोच विचार कर कुछ समझ लेने से रोका भी नहीं गया है, बस यह ध्यान रहे कि जो थोड़ा बहुत हम समझ पायें उसको उसकी समझ ही न समझ लें।

यह समझ को ऊँचा रखने की बात ही है कि इस्लामी धर्मशास्त्र को भरपूर 'सोच समझ', तर्क, और फ़िलासफ़ी के ढंग में साइंसी तरह से जमा कर साफ़ सटीक सजीले रूप में पेश करते रहने की अपनी लम्बी और गहरी परम्परा रही है। (किसी दूसरे मज़हब के पास शायद ही ऐसी परम्परा रही हो)। इस्लामी शस्त्रों में एक ख़ास विधा (Speciality) 'इल्मुल कलाम' (वाक्-शास्त्र) का बड़ा विकास हुआ। इसमें धर्म के विश्वासों को सोच विचार की, समझ, फ़िलासफ़ी और तर्क (Logic) वाली दलीलों से बताने और समझाने की कोशिश होती रही।

ज्ञान विज्ञान और तकनीक के लगातार विकास के साथ समाज की बदलती हुई सोच और मान्सिकता के सामने विश्वासों को पेश करने में शोध बढ़ता रहा और उसे नये-नये आयाम मिलते रहे। ऐसे ही प्रयासों में एक नयी और अछूते ढंग की कोशिश आज के परमूपूज्य प्रसिद्ध धर्मगुरु, महान विद्वान विचारक, लेखक हज़रत आयतुल्लाह (प्रभु-प्रतीक) मौलाना (स्वामी) सय्यद मुजतबा मूसवी लारी के मंझे चमत्कारी क़लम की सराहनीय फ़ारसी रचना 'इस्लाम धर्म-विश्वास के मूल' (4 भागों में) के रूप में सामने आई। इसका पहला भाग ईश्वर के गुण (एकेश्वरवाद और ईश्वर का न्याय) के बारे में है, इस भाग का हिन्दी रूप आपके सामने है।

मूल रचना बेझिझक अपने विषय की अनूठी कही जा सकती है। नई पढ़ी-लिखी पीढ़ी की मान्सिकता का पास रखने वाली इस रचना में इस्लाम के ख़ास-ख़ास विश्वासों को आधुनिक फ़िलासफ़ी, लॉजिक, साइंस और दूसरी विधाओं का फ़ायदा उठाते हुए, ज्ञान के होनहार लहजे में जमा किया गया है। इस तरह ये ज्ञान विज्ञान का एक संगम है। एक ही विषय की किसी रचना का अनुवाद यूँ भी कठिन होता है, फिर ऐसी रचना को दूसरी भाषा का रूप देना और भी कठिन हो जाता है। यह मेरे विद्वान दोस्त तज़्हीब नगरौरी का दिल-गुर्दा था कि इस कड़े काम को बड़े अच्छे ढंग से कर दिखाया। विद्वान हिन्दी रूपकार और नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन, लखनऊ के प्रमुख धर्मविद मौलाना 'असीफ़' जायसी के आह्वान पर हिन्दी रूप की पान्डुलिपि देखी गई। इस सिलसिले में मुझ जैसे समझ और ज्ञान के दरिद्र ने अपने भर कुछ सुझाव भी दिये जो मान भी लिए गये। सबसे बड़ी कठिनाई यह आ पड़ी कि मूल फ़ारसी रचना के उर्दू और अंग्रेज़ी अनुवादों के बीच बहुत अन्तर दिखाई दिया। इसका बड़ा कारण वही मूल रचना में अलग-अलग (Specialities) का समावेश है। ऐसा समावेश ज्ञान के बाज़ार में रचना का मोल चाहे जितना बढ़ा दे, पर आम जनमानस में संचार के रास्ते में बहुत बड़ी रुकावट बन जाता है। इसको देखते हुए हिन्दी रूप में कोशिश की गयी कि परिभाषिक शब्दों (Technical Terms) से जहाँ तक हो सके बचते हुए मूल लेखक की बात को आम सरल भाषा के सहारे सभी आम ख़ास तक पहुँचाया जा सके। आगे दुआ है कि हमारी कोशिशें सफ़ल हों।

अन्त में एक और बात कहने की आज्ञा चाहता हूँ। अस्ल किताब के लिखने और आज हिन्दी रूप देने में समय का बड़ा आ गया है। इस बीच एक नई पीढ़ी ने अपना होना दर्ज करा लिया है, फिर IT के दिये संचार इन्क़ेलाब ने 'सोच' को पूरी तरह बदल दिया है। ऐसे में मूल रचना को नये सिरे से ही बनाने (लिखने) की ज़रूरत है जिसे ऐसे बनाया जाए कि वह हिन्दी और हिन्दुस्तानी मिज़ाज को भी अपील कर सके।

मु० र० आबिद
गोलागंज, लखनऊ

अपनी बात

आयतुल्लाह सय्यद मुजतबा मूसवी लारी एक बड़े धर्मगुरु आयतुल्लाह सय्यद अली असग़र लारी के बेटे और आयतुल्लाह सय्यद अब्दुल हुसैन लारी के पोते हैं। उनके दादा ने ईरान के इन्क़ेलाब में योगदान दिया और अपने समय में ईरान के लारिस्तान प्रान्त में इस्लामी राज्य की स्थापना भी की जो कुछ दिनों तक चला भी। मुजतबा मूसवी लारी सन् 1935ई० में ईरान के शहर लार में पैदा हुए। उन्होंने वहीं अपनी शुरु की पढ़ाई करके 1953ई० में ईरान की धार्मिक ज्ञान-राजधानी क़ुम चले गये, वहाँ उन्होंने उच्च्व इस्लामी शिक्षा पायी और मुजतहिद (इस्लाम के धर्म-क़ानून में शोध करने वाले विद्वान) हुए।

उन्होंने मज़हबी साइंसी पत्रिका ''मकतबे इस्लाम'' में लिखना भी शुरु किया। बाद में उनके ये लेख किताब ''नैतिक व मान्सिक समस्याएं'' के रूप में प्रकाशित हुए। 1963ई० में वे इलाज के सिलसिले में कुछ महीने जर्मनी में रहे। उसी बीच उन्होंने एक किताब ''पश्चिमी सभ्यता का चेहरा'' लिखी जिसका अंग्रेज़ी अनुवाद एक अंग्रेज़ विद्वान F.G. GOULDING ने Western Civilisation Through Muslim Eyes के नाम से किया जिसने यूरोप के लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचा। इस विषय पर यूरोप की पत्रिकाओं में लेख भी छपे और B.B.C. ने अनुवादक का इण्टरव्यु लिया। अंग्रेज़ी अनुवाद के छपने के तीन साल बाद एक जर्मन प्रोफ़ेसर RUDOLF SINGLER ने जर्मन भाषा में अनुवाद किया। इस किताब का उर्दू अनुवाद मौलाना रौशन अली साहब ने मग़रिबी तमद्दुन की एक झलक के नाम से किया।

उनकी एक पुस्तिका 'तौहीद' (एकेश्वरवाद/Divine Unity) का भी अंग्रेज़ी अनुवाद प्रकाशित हुआ जिसका हिन्दी अनुवाद बाद में 'ईश्वर का

जानना' के नाम से छपा।

1964[ई०] में उन्होंने लार में एक संस्था बनाई जिसका उद्देश इस्लाम का प्रचार करना, गावों के जवानों को इस्लाम सिखाना और ग़रीबों की मदद करना था। बाद में 1980[ई०] में आपने कुम में भी एक संस्था "विदेश में इस्लामी प्रचार-प्रचार का दफ़्तर" बनाई जो बहुत ही सक्रिय है और अलग-अलग ज़बानों में कुरआन और इस्लाम धर्म की दूसरी किताबों का प्रकाशन करके धार्मिक संस्थाओं और लाइब्रेरियों को मुफ़्त भी बाटता है।

1974[ई०] में इस्लामी सदाचार पर लेख किताब "मानव विकास में सदाचार का योगदान" के रूप में भी छपे।

1978[ई०] में अमेरिका, इंग्लैण्ड और फ्रांस का सफ़र किया। ईरान वापस आने पर इस्लामी विचारधारा पर लेखों का सिलसिला "सरोश" पत्रिका में निकाला जो जमा होकर चार भागों की किताब 'इस्लामी विचारधारा के आधार' के रूप में छपे।

यह किताब प्रसिद्ध धर्मगुरु आयतुल्लाह सय्यद मुजतबा मूसवी लारी की चार भागों पर आधारित वह रचना है जिसका अनुवाद फ़ारसी ज़बान से अरबी, अंग्रेज़ी, फ्रेन्च, जर्मन और उर्दू ज़बानों में बहुत समय पहले हो चुका था और छप भी चुका था। किताब में बहुत आसान और साइन्टिफिक तरीक़े से इस्लाम धर्म के मूल सिद्धान्तों का विवरण है। चूँकि हिन्दुस्तान के लोगों में उर्दू बोली और समझी तो जा रही है लेकिन उर्दू लिट्रेचर पढ़ने वालों की संख्या समझने और बोलने वालों के मुक़ाबले में कम है, इसलिए "नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन" ने इस किताब को हिन्दी रूप देकर छापने की ज़रूरत महसूस की और यह काम मेरे ज़िम्मे किया गया।

इस किताब के उर्दू और अंग्रेज़ी अनुवादों से भरपूर फ़ायदा उठाते हुए इसको हिन्दी का रूप दिया गया है। यह हिन्दी रूप आपके हाथों में है। उम्मीद है कि जल्दी ही इसके अगले तीन भाग भी प्रकाशित हो जायेंगे।

जबकि मुझे अपनी कमियों का एहसास है लेकिन मु० र० आबिद साहब और पूज्य भाई "तनवीर नगरौरी" साहब के सहयोग के भरोसे काम

की शुरुआत की और तनवीर नगरौरी साहब के भरपूर सहयोग के बाद जब तर्जुमा पूरा हो गया तब पूरी किताब जनाब मु० र० आबिद साहब को दी गयी। मुझे इस बात का भी पूरा-पूरा एहसास है कि अपनी तरह रचना या तर्जुमे से कहीं ज़्यादा कठिन काम सुधार के लिए किसी किताब का देखना होता है। शायद किताब के प्रकाशन में होने वाली देर का कारण भी यही बात है।

बहरहाल किताब हाज़िर है पाठकों से विनती है कि किताब को हिन्दी रूप देने में जो गलतियाँ रह गयी हों वह हमें ज़रूर बतायें ताकि अगले एडीशन में उनको सुधारा जा सके। आख़िर में दुआ है कि मुहम्मद[स०] व आले मुहम्मद[अ०] के सदक़े में किताब के लेखक को अधिक से अधिक लिखने और धर्म-सेवा की तौफ़ीक़ हो और पाठकगण इससे ज़्यादा से ज़्यादा फ़ायदा उठायें ताकि हर वक़्त और जगह उन्हें ख़ुदा के सही जलवे नज़र आयें जो इस किताब का अस्ल उद्देश्य है।

तज़हीब नगरौरी
नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन
लखनऊ

लेखक द्वारा पहले फ़ारसी एडीशन की प्रस्तावना

मन और बुद्धि का खोखलापन आदमी को सच्चाई की समझ से अपराध के भंवर की ओर घसीटता चला जा रहा है। आज हम देखते हैं कि आदमी की बहुत सी रचनात्मक ताक़तें भटक रही हैं क्योंकि वह धर्म के बनाये विचार और कल्चर के भरेपुरे ठांठे मारते समन्दर की तरफ़ से अपनी आँखें बन्द कर लेता है, मानो उसने आज के संसार की विचारधाराओं को अपने बुद्धिजीवी जीवन के मार डालने की खुली छूट दे रखी है।

हमारे समय की घबराई हुई प्यासी पीढ़ी के सामने आज बहुत से विचार लाये जाते हैं जो सिमटी सूझबूझ के फिलासफ़रों और विद्वानों की जल्दबाज़ी की और रोगी सोच से निकलते हैं। ये विचार आज की पीढ़ी की ज़रूरत के जवाब का झूठा बहाना तो हो सकते हैं पर वे जीवन के किसी माने या मक़सद को नहीं सुझाते हैं।

इन विचारों के पीछे जो ''मुर्ग़े की एक टाँग'' वाली सोच का ढंग है वह आज के सेन्सटिव मनों के पनपने के लिए ठीक नहीं है, फिर ऐसे में जहाँ अभी भी जीवन पर समझ और तर्क (Logic) की पकड़ है, इस सोच की तरफ़ कुछ भी ध्यान देना न चाहिए।

इसमें शक नहीं कि बहुत सी नाबराबरियाँ, अत्याचार, बेदर्दियाँ और बेढंगियाँ जो इतिहास में लगातार देखी जा सकती हैं, वे दुनिया और आदमी के जीवन में छाये विरोधों से पैदा हुई हैं।

हमारा मानना है कि इस्लाम और तौहीद (एकेश्वरवाद) के आधार वाली उसकी विचारधारा जिसके पास असली दुनिया, मैटर के संसार और बाहरी सच्चाई की ठोस फ़िलासफ़ी वाली और साइन्सी एनालिसिस (Analysis) और गहराई से समझ का एक लम्बा चौड़ा सिलसिला है, और आदमी से उसके अस्तित्व ('होने') के सारे आयामों (Dimensions) की पहचान कराती

है, वही इस्लाम सारे विरोधों और नाबराबरियों को जड़ से हल करने की सकत रखता है और इन्सान के कल को बनाने के लिए उसे टिकने वाले काम का रास्ता दिखा सकता है।

विश्वास के हर तरीक़े को, चाहे उसके उसूल जितने भी आम क्यों न हों और उसके आधार हमेशा वाले क्यों न हों, उसे हर पीढ़ी के लिए समय के लेहाज़ से नई तरह से पेश करना और बताना चाहिए। इसलिए समय के मिज़ाज को समझने वाले और आज की फ़िलासफ़ी और साइन्स के आविष्कारों का सामना करने के लिए बुनियादी बातों में ज़्यादा रिसर्च और खोजबीन की ज़रूरत महसूस करने वाले विचारकों और धर्म के रूहानी रखवाले उलमा को इस्लामी स्रोतों (Source) के उपयोग से इन मसलों पर समझ और होश से ख़ास और गहरा ध्यान देना चाहिए। उन्हें सच को वैसे पेश करना चाहिए जैसे इस्लाम की तरक़्क़ी वाली खुली आत्मा चाहती है और दुनिया को इस्लाम के बुद्धजीवी (Intellectual) उसूल पहचनवाना चाहिए।

यह किताब सीधे सादे शब्दों में फ़िलासफ़ी वाले तर्क के साथ इस्लामी विशवास के आधारों को थोड़े में पर जीते जागते ढंग से पेश करने की कोशिश है। हमारा मक़सद कुछ सारांश में ही पेश करना है, इसलिए हमने बहुत सारे फ़िलासफ़रों और साइन्टिस्टों के मतों को ज़्यादा विस्तार से देने से अपने आप को रोके रखा।

इसका पहला हिस्सा ख़ुदा के एक होने और उसके न्याय के बारे में है (यह किताब इसी हिस्से का हिन्दी रूप है)।

हमें आशा है इन बुनियादी मसलों पर इस्लाम के विचार समझाने में यह एक योगदान होगा।

सैयिद मुजतबा मूसवी लारी
कुम, (ईरान)
15 जुलाई 1981ई० (24 तीर 1360 हि०सौ०)

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम
(बहुत रहम करने वाले और दया वाले अल्लाह के नाम से)

ख़ुदा की पहचान

इन्सान की सोच में जो बातें छाई हुई हैं उनमें मज़हब की बातें सबसे ज़्यादा अहम हैं। हमेशा से यह हर सोच और हर नज़र का केन्द्रबिन्दु रही है इन्सान की भलाई से जुड़ी यह बात बेकार भी नहीं है बल्कि इसने बहुत बड़े और गहरे पैमाने पर प्रेक्टिकल और कल्चर पर असर डाले हैं।

विद्वानों और रिसर्च करने वालों ने इस मज़हबी सोच के पैदा होने और उसकी वजहों पर बुहत ही ज़्यादा रिसर्च की है। ऐसे नतीजे भी निकाले हैं जो उनकी अपनी ख़ास सोच और नज़रिये के हिसाब से हैं। यह एक ऐसी सच्चाई है जिसका इन्कार नहीं किया जा सकता कि ज़माना गुज़रने के साथ–साथ ज्ञान, और टेक्नालॉजी की तरह इन्सान के विश्वास और अक़ीदों में भी तरक़्क़ी हुई। इतिहास (History) से पहले के भी अक़ीदे पाये जाते थे जो इन्सानी समाज से जुड़े थे। किसी भी ज़माने में ऐसा इन्सानी समाज नहीं मिलता जो अक़ीदे से ख़ाली हो।

मज़हबी सोच एक दौर से दूसरे दौर में बदल कर पहुँचती रही है। जिस तरह ''जानने और सोचने'' के उसूल डिक्शनरियों और ज़िन्दगी के वसीलों की तरह पूरी तरह से बदले हुए एक दौर से दूसरे दौर में जाते रहे हैं उसी तरह मज़हबी सोच भी बदलती रहती है और वह अपनी पहली सूरत पर नहीं बाक़ी है।

इन्सान की सोच और उसकी जानकारियों की तरक़्क़ी के

बारे में हुई चर्चा और इतिहास की गहराईयों को पढ़कर हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि अक़्ल की दलीलों को जानने से पहले भी इन्सान किसी न किसी अक़ीदे को मानता था। इस बुनयाद पर यह बात बेझिझक कही जा सकती है कि इन्सान के इल्म और टेक्नालॉजी का पहला दौर इन्सानी अक़ीदों और मज़हबों के पहले दौर से ज़्यादा मुकम्मल नहीं था, बल्कि यह कहा जा सकता है कि ईमान और अक़ीदे की बहेस में इन्सान ने जो कोशिशें की हैं वह ज्ञान और टेक्नालॉजी के सिलसिले में की गई कोशिशों से कहीं ज़्यादा कठिन और बड़ी कोशिशें थीं, क्योंकि दुनिया की चीज़ों को जानने और समझने से कहीं ज़्यादा कठिन और सख़्त उससे बड़ी सच्चाई की पहचान है जिसके कारण सब कुछ 'नहीं' से 'है' हो गया। लोगों के लिए एक ही ज़माने में सबसे बड़ी सच्चाई का पूरी तरह पहचानना नामुम्किन है बल्कि जानकारियाँ बढ़ने के साये में आम सोच भी समय के साथ इस पहचान के लिए ज़्यादा तैयार होती जाती है।

जगमगाता सूरज सबसे ज़्यादा चमकदार और साफ़ है, फिर भी उसकी सच्चाई से सदियाँ अनजान रहीं। सूरज के चलने और आसार (प्रभावों) को अलग–अलग समझा जाता रहा जबकि उसकी अस्लियत और उजालों की किरन से इन्कार कौन कर सकता। इसके बाद भी लोगों की सोच इस बारे में गहरे अंधकार में थी। इस तरह हमें पता चला कि बड़ी सच्चाई का जानना अक़्ली दलीलों और गहरी मालूमात के बग़ैर मुमकिन नहीं है। इसीलिए पुराने लोगों की सूझबूझ नज़र में कमज़ोरी की वजह से उनके दिलों में धर्म के सिलसिले में जो, ख़ुराफ़ात और कहानियाँ ढाली गयीं, उसका मतलब यह नहीं है कि वे धर्म और उसकी असल हक़ीक़त नहीं जान सकते। बल्कि इससे पता चलता है कि

इन्सान के दिल की गहराइयों में धर्म की जड़ें बड़ी मज़बूती से फैली हुई थीं। इसलिए मशहूर फ़िलासफ़र रूनान (Ronan) कहता है कि इन्सान के नेचर में सबसे बड़ी और खुली चीज़ मज़हब है। अगर हमारी जानकारी इल्म पीछे चलकर इतिहास से पहले के ज़माने में मज़हब की सच्चाई को हम पर खोल देना चाहे तो हमको इससे ज़्यादा की उम्मीद नहीं रखना चाहिए कि जो नतीजा हमारे सामने आयगा वह उन ख़ुराफ़ात और कहानियों का गठ्ठर होगा जो धरती की परतों में पुरातत्व (Archeology) के आसार के रूप में होगा। क्योंकि उस ज़माने का इन्सान बहुत से फ़ितरत (नेचर) के हैरत भरे और ख़ूबसूरत निज़ाम (विधान) को देखता था जो बहुत बारीकी और मज़बूती से जारी था। दूसरी तरफ़ यह भी देखता कि ज़िन्दगी की ज़रूरतों में कोई चीज़ कभी अपने आप पैदा नहीं हो गयी। फिर भी इतना सब कुछ देखने के बाद भी इन्सान की सोच की सीमा ऊँचाई और हिदायत की उस जगह तक नहीं पहुँची थी जहाँ पर वह दुनिया के सिस्टम और नेचर के करिश्मे और उसके सभी ज़ाहिरी चीज़ों के बीच के सम्पर्क की एकता को समझ सकता। यह समझ लेता कि पूरी दुनिया का सिस्टम सूझबूझ और सकत वाले बनाने वाले के हाथों में है जो इन्सान या दुनिया की दूसरी मौजूद चीज़ों की तरह नहीं है। चूँकि तरह–तरह की चीज़ों की पैदाइश को वह अक़्ली बुनियादों पर समझ नहीं सकता था इसलिए उसका ख़याल यह था कि हर चीज़ की कोई वजह है। इसीलिए वह मौजूद चीज़ों की गिनती को देखकर यह समझ बैठा कि ''कई ख़ुदा हैं''। और आख़िरकार पाक खिंचाव और इन्सान का ऊँचा मिलान और उसकी रूहानियत और आत्मा की अस्ल अस्ली 'सत्य' के रास्ते से भटक गयी और सत्य के बजाए झूठे ख़ुदाओं की तरफ़ झुक गयी और उनकी पूजा करने

लगी। इन्सान के नफ़्स और उसके चारो ओर मौजूद चीज़ों पर अटकलपच्ची करके झूठे ख़ुदाओं के गुण तय करके अपने दिल को तसल्ली दे ली। जब आदमी की चाल ढाल में ख़ास एक तरफ़ असलियत और टिकाऊपन हो और दूसरी ओर मानव जाति की ख़ास बातों में भागीदारी हो तो यह बात तर्क वाली और नेचुरल है कि आत्मा की गहराइयों में इसका बाल–बाल भरोसा करें।

इतिहास के हर दौर में यहाँ तक कि इससे पहले के दौर में भी इन्सान के सदा के चलते विश्वास अक़ीदे में सिर्फ़ रस्मों और आदतों का आभार नहीं समझा जा सकता बल्कि यह एक प्यास और ज़रूरी एहसास और सबसे बड़ी सच्चाई की खोज का नतीजा है। बस यह सभी मज़हबी अक़ीदे अपने तरह–तरह के रूपों के साथ एक जोश से उबलते सोते से फ़ायदा उठाते हैं जो न लादा हुआ है न दुर्घटना से है।

शुरु से ही इन्सान के नेचर में अक़ीदे की समाई रही है और इसी की बुनियाद पर अक़ीदा ढलता है। यही भीतरी लगाव वुजूद की सच्चाई को समझने के लिए इन्सान को सोचने और खोज करने पर उकसाता है, यही मज़हब को पहचानने की ज़रूरत पर ठोस दलील है लेकिन इस निजी समाई का ज़रूरी नतीजा यह बिलकुल नहीं है कि जो मान लिया है वह सौ फ़ीसद (100%) सही हो। इसको यूँ समझिये कि इन्सान के बदन में खाना खाने की ज़रूरत है लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि उसको जो भी भोजन मिले वह सौ फीसदी (100%) सही हो। इसी तरह इन्सानी रूह को भी रूहानी भोजन (ईमान और अक़ीदे) की ज़रूरत है। लेकिन यह ज़रूरी नहीं है कि ऐसा जो खाना उसको मिले वह बिल्कुल सही हो क्योंकि रूह अपने से अच्छे और बुरे अक़ीदे में फ़र्क़ नहीं कर सकती।

रिसर्च वालों का इस बात पर एका है कि हमेशा धर्म के अक़ीदे इन्सान की ज़िन्दगी से घुलेमिले रहे हैं। लेकिन वह बुनियादी वजहें जो अस्ल मज़हब की बुनायाद हैं, उसमें उनके नज़रिये अलग–अलग हैं। इन रिसर्च वालों के फैसले ज़्यादातर ग़लत मज़हबों और कच्ची सोच पर आधारित हैं। इसलिए बहुत ही साफ़ बात है कि मज़हब के आख़री हल में उनके फ़ैसले अधूरे और बेतुके होंगे।

यह बात अपनी जगह सही है कि बहुत से धर्म ख़ुदा से जुड़े न होने की वजह से अपने पैदा होने में माहौल से असर लेते रहे लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं है कि सभी मज़हब पूरी तरह से माद्दी (Materialistic), माली या नेचर के भयानक असर के डर या अनजानेपन की पैदावार हैं। बेशक धर्म के ख़िलाफ़ जो सोचें पैदा हुई हैं या जो ख़ुदा के न मानने वालों का वजूद है इसकी वजहें कुछ मज़हबी लोगों की ही ग़लत सोच और नासमझी और उनके करतूत हैं। इसीलिए हर मज़हब की ख़ासियतों पर भी चर्चा की जाये और उन को गहरी नज़र से पढ़ा जाए।

बहुत सी ऐतिहासिक घटनाओं में आप मज़हब को सभी नियमों और क़ानूनों पर हुकूमत करता हुआ देखेंगे। अगर मज़हब की कोई बुनियाद न होती, तो वह हमेशा अपने Meterial दायरे में ही घिरा रहता। आख़िर यह कौन सी बात है जिसने मज़हबी लोगों को अपने मज़हबी मक़सद के लिए इतना मज़बूत बना दिया? क्या दुनिया के फ़ायदे की उम्मीद ने कठिनाइयों और मुश्किलों की जानलेवा कड़वाहटों को उनके लिए सुहावनी बना दिया था? जी नहीं, हरगिज़ नहीं! अगर ऐसा होता तो ये लोग अपनी सभी दुनियावी चीज़ों और चाहतों को धर्म के लिए इस बेदर्दी से क़ुर्बान न कर देते बल्कि उन्होंने तो धर्म के लिए अपनी जान तक

दे दी है।

यह नहीं हो सकता कि सिर्फ़ दुनियावी चीज़ों के लिए इन्सान धर्म को पसन्द करता है बल्कि इसकी वजह सिर्फ़ यह है कि इन्सान के अन्दर अस्ली मज़हबी एहसास मौजूद है। लोसेकैन्ट डेन्विनश (Locekant Donuish)[1] कहता है कि दुनिया में हमेशा मुकम्मल (पूरी) इबादत के लिए मज़हबी रूह और विश्वास, पूजा और भक्तिभाव की ओर मिलान और साथ ही कल्पना में और पहुँच में न आ सकने वाले परमात्मा से क़रीब होने का मिलान था। सभी लोगों में मौजूद इस इरादे का स्रोत ख़ुदा ही था।

मशहूर विद्वान[2] वेल डुवरेन्ट लिखता है: कि विश्वास नेचुरल चीज़ है। यह इन्सान के स्वभाव की ज़रूरत का आभारी है और यह इन्सान की चाहतों से ज़्यादा ताक़तवर है।[3]

और रही यह बात कि मज़हब में जो अक़ीदे अक़्ल की कसौटी पर खरे न उतरते हों उनका वजूद है, तो यह बात सिर्फ़ मज़हबी समस्याओं तक ही नहीं है बल्कि बहुत से ज्ञान–विज्ञान (सबजेक्ट) में छान फटक से पहले ख़ुराफ़ात और बेकार बातों की मिलावट थीं क्योंकि इन्सान डाक्टरी जैसे फाएदा पहुँचाने वाली सच्ची साइंस तक जादू–टोना, झाड़–फूक ही से पहुँचा है और रसायन–विज्ञान (Chemistry) तक उसकी पहुँच अलकेमी (Alchemy) के रास्ते से ही हुई है। इसी तरह अक़्ल में न आने वाले अक़ीदों पर रिसर्च के बाद ही सही (अस्ली और अक़्ली) अक़ीदों तक पहुँच हो सकती है। यह तो कोई कह ही नहीं सकता कि अगर इन्सान ने किसी चीज़ के खोजने में एक बार ग़लती कर दी तो फिर कभी अस्लियत तक पहुँच ही नहीं सकता।

---

(1) इरतेबाते इन्सान व जहान (फ़ारसी) पेज न0 69 (2) Wel Duerant
(3) समाज विज्ञान (Sociology) किंग, पेज न0 99

खुदा का इन्कार करने वाले इसी से नतीजा निकालते हैं कि 'ख़ुदा' तो इन्सान के सोच की पैदावार है। मिसाल के तौर पर एक अंग्रेज़ विद्वान ''बेरट्रेन्ड रसल'' (Bertrand Russel) का कहना है कि नेचर की चीज़ों के ख़ौफ़ से मज़हब नाम की चीज़ पैदा हुई है। देखिये! वह कहता है कि मेरी नज़र में मज़हब हर चीज़ से पहले बुनियादी तौर पर डर और ख़ौफ़ की वजह से पैदा हुआ है। यह एक 'अनजाना डर' है जिसकी वजह से लोग मज़हब मानने लगे हैं। इसके अलावा जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ कि इसी ख़ौफ़ की वजह से इन्सान में यह एहसास पैदा होता है और हर इन्सान सोचता है कि कठिनाइयों और लड़ाई झगड़ों में कोई उसका बचाने वाला रक्षक होना चाहिए। यह डर अलग–अलग तरह का होता हैः मौत का डर, हार का डर और राज़ों के खुल जाने का डर वग़ैरा–वग़ैरा।

यूँ तो यह बात सिर्फ शायर की कल्पना से ज़्यादा अहम नहीं क्योंकि यह तो सिर्फ दावा ही दावा है, इसके लिए कोई दलील नहीं दी गयी है। यह ऐसा ही है कि सैमुयेल किंग (Samuel King) कहता है कि मज़हब का श्रोत एक छिपा हुआ राज़ है। इस सिलसिले में विद्वानों के अनगिनत नज़रिये हैं। कुछ नज़रिये अक़्ल की कसौटी पर खरे उतरते हैं और कुछ अक़्ल से दूर हैं। लेकिन जो नज़रिया सबसे ज़्यादा अक़्ली है वह भी शक के दायरे में है, बस तर्क और अक़्ल के अन्दर है।

इसीलिए मज़हब के कई सोते होने के बारे में विद्वानों की राय अलग–अलग है, फिर भी रसेल के जवाब में कहा जा सकता है किः अगर हम मान लें कि खरे अक़ीदे में सबसे अहम और असली चीज़ एक अनजाना ख़ौफ़ है तो क्या उससे यह भी साबित हो जायगा कि ख़ुदा एक ख़याली चीज़ है, असल में उसका वाक़ई

वजूद नहीं है। ....अगर डर एक ऐसी चीज़ है कि जिससे छुटकारा पाने के लिए इन्सान एक पनाह ढूँढता है और इसी खोज में सच्चाई तक पहुँच जाता है, तो क्या इसमें कोई एतराज़ है? कोई हर्ज है? अगर डर ही किसी चीज़ तक पहुँचने का रास्ता हो तो क्या यह कहना सही है कि यह चीज़ जिसको इन्सान ने डर की वजह से पाया है इसलिए यह सिर्फ़ एक वहम कल्पना है इसकी कोई सच्चाई नहीं है? भला यह क्या अक़्लमन्दी की बात है कि हम यह कहने लगें कि डाक्टरी (Medical Science) सच में कोई साइंस नहीं है, क्योंकि बीमारी और मरने के डर से इन्सान ने इस पनाह को ढूँढा है। इसलिए यह सिर्फ एक वहम है। हालांकि सच्चाई यह है कि डाक्टरी हक़ीक़त में एक साइंस है, चाहे उस तक पहुँचने का रास्ता और वजह बीमारी और मरने का डर हो या कोई दूसरी वजह हो।

तमाम वाक़ेयों में ज्ञानकार और सर्वशक्तिमान ख़ुदा होने का विश्वास एक आसरा और सच्चा सहारा है। अपनी जगह पर यह ख़ुद एक समस्या है। इस का इस बात से कोई वास्ता नहीं कि इन्सान में ख़ुदा पर ईमान लाने के लिए बातों का डर असली बचाव करने वाला है। इन दोनों सवालों को अलग–अलग देखना चाहिए।

इसमें शक नहीं कि इन्सान अपनी शुरुआती ज़िन्दगी में प्राकृति के डरावने हादसों जैसे तूफ़ानों, जलज़लों और बीमारियों वग़ैरा को झेलता रहा और उसका डर उसकी पूरी ज़िन्दगी भर उसकी सोच पर अपना मन्हूस साया डाले हुए था। इस लड़ाई में इन्सान डर और बेबसी के बावजूद अपने बेहतरीन जतन के ज़रिये एक ऐसा आसरा ढूँढता रहा जिसमें ऐसे भयानक हादसों से बच सके जिससे उसकी रूह को चैन और सुकून मिल सके। आख़िरकार इन्सान ने लगातार जतन के नतीजे में ज़िल्लत और डर पर कन्ट्रोल पा लिया और कामयाबी तक पहुँच गया।

पुराने लोगों की ज़िन्दगी के बारे में खोज और विचार से यह पता चलता है कि उन लोगों की सोच पर डर का क़ब्ज़ा था, मगर इस डर का राज़ इस बात की हरगिज़ दलील नहीं है कि ख़ौफ और जेहालत ही मज़हब के पूजने की असली वजह हैं। इस तरह की सोच सूझबूझ की कमी का नतीजा है। अगर हर दौर के इन्सानों की ज़िन्दगी पर ठीक से रिसर्च के बाद पूरी तरह से यह आम नतीजा निकाला जाये तब तो एक बात है। लेकिन अगर इन्सान के इतिहास के सभी उतार चढ़ाव में से सिर्फ एक छोटे टुकड़े पर रिसर्च करके यह नतीजा निकाला जाये तो ज़ाहिर है कि यह बिल्कुल ग़लत है। इन्सान के कुछ ज़मानों को नज़र में रखते हुए इन्सान पर छाये डर को बुनियाद (बेस) बनाकर इन्सान के हर दौर पर एक ही बात तय कर देना तर्क नहीं है। क्या इन्सान की मज़हबी सोच और एहसास और हर दौर में यहाँ तक कि इस ज़माने में ख़ुदा की पूजा करने की तरफ़ मेल को जंग, बीमारी और डर का नतीजा कह देना जल्दबाज़ी नहीं है? ....और यह भी ग़लत है कि मज़हब का हर पुजारी लोगों में सबसे कमज़ोर आदमी होता है। नहीं, ऐसा नहीं है। इतिहास के पन्नों में आज भी मौजूद है कि जिन लोगों ने मज़हब का झण्डा ऊँचा किया है वह सबसे ज़्यादा ताक़तवर और मज़बूत लोग थे। ऐसा बिल्कुल नहीं है कि ईमान विश्वास जितना मज़बूत होता जायेगा इन्सान उतना ही कमज़ोर होता चला जायगा और धर्मनेता सबसे ज़्यादा ज़लील और कमज़ोर होगा।

क्या हज़ारों विद्वान जो धर्म को मानते हैं और उस पर चलते हैं वह ज़लज़लों, बाढ़ों और बीमारियों के डर की वजह से भक्त हुए हैं? क्या उनकी भक्ति को नेचर के हादसों या घटनाओं के कारण से अनजान होना कहा जा सकता है? अक़्ल वाले लोग

क्या फ़ैसला करेंगे?

इन्सान चैन सुकून के लिए मज़हब को नहीं क़बूल करता बल्कि अल्लाह पर अक़ीदा और ईमान रखने के बाद मज़हब के बहुत फ़ाएदों में से एक फ़ायदा यह भी है कि इन्सान को सुकून और इत्मीनान मिल जाये। अल्लाह को पहचानने वाले आलिमों का मानना है कि सभी काम, कारण, चीज़ें और उनके करने वालों को बहुत गहरी नज़र से जाँचा–परखा गया है, उन्हीं सब का नाम दुनिया है। दुनिया का गहरा सिस्टम (प्रभु) अल्लाह के होने पर खुला प्रमाण है और गवाह है।

किसी चौखटे में अलग–अलग बेतुकी, बेढंगी और बेमाने खिंची लकीरें किसी मंझे कलाकार आर्टिस्ट के होने पर कभी दलील नहीं होतीं है बल्कि ऐसी आर्ट जो क़ायदे, हिसाब की हो और समझ, मतलब और मानी रखती हो, उसको एक माहिर आर्टिस्ट के वुजूद की दलील बनाया जा सकता है।

एक दूसरे लेहाज़ से हम देखते हैं कि जो लोग पराभौतिकी (Metaphysics) के मानने को आर्थिक (Economic) ढंगों की पैदावार बताते हैं और मज़हब और Economy को एक दूसरे से जोड़ने के लिए जीतोड़ कोशिश करते हैं, वही लोग कहते हैं कि मज़हब तो लोगों को हमेशा से साम्राज्य और शोषण का ग़ुलाम बनाता रहा है यहाँ तक कि यह सिलसिला आज भी चालू है। वे लोग यह भी कहते हैं कि धर्म को राजा महाराजाओं ने गढ़ा है ताकि इसकी आड़ में लोगों को हमेशा अपना ग़ुलाम बनाये रखें और उसी के सहारे जनता की हर बग़ावत, विद्रोह को दबा दें और उनकी मेहनतों के फ़ल खुद ले लें और धर्म का सहारा लेकर उनकी इसी लुटी हालत पर उन्हें इत्मीनान दिला दें। वैसे इसमें भी शक नहीं कि दुनिया की दूसरी चीज़ों की तरह मज़हब से भी

ग़लत फ़ायदा उठाया गया। जब भी मज़हब को उसके असली मक़सद से अलग करके उसे ग़लत तरीक़े से इस्तेमाल किया गया है तो फ़ायदा ढूँढने वाले व्यापारियों का हथियार बन गया और उन्होंने गुटों और क़बीलों को क़ैदी बनाना चाहा लेकिन इस तरह के ग़लत इस्तेमाल को आराम की छुट्टी चाहने वालों के लिए दलील नहीं बना देना चाहिए ताकि वह दीन और मज़हब के नाम पर हर चीज़ पर बेरहमी से हमला करें। बहेरहाल, कहने का मतलब यह है कि असली और सच्चे मज़हब को फिरे हुए और अपने गढ़े मज़हबों से अलग रखना चाहिए।

यह हो सकता है कि बहुत से इन्सानी समाज में मज़हब और ईमान के साथ–साथ पैसे से ख़राब हालत, पिछड़ापन और जमाव हो, लेकिन यह साथ आपस में एक दूसरे का कारण और नतीजा नहीं है। क्योंकि बहुत से ऐसे भी इन्सानी समाज हैं कि जहाँ हर तरह का ऐश और आराम मौजूद है और माली हालत बहुत अच्छी है और वहाँ समाज ईमान और मज़हब से भी गहरा रिश्ता है। इसी तरह बहुत से इन्सानी समाज ऐसे भी हैं जो हर तरह की आसानी, आराम और अच्छी माली हालत होते हुए भी मज़हब से मुँह फेरे हुए हैं। इसी तरह बहुत सी ऐसी जगहें हैं जहाँ लोग फ़क़ीरी और पिछड़ेपन का शिकार है लेकिन धर्म का सूरज वहाँ डूबा हुआ है और इसी तरह कुछ ऐसी जगहें भी हैं जहाँ लोग फ़क़ीरी और पिछड़ेपन का तो शिकार हैं लेकिन फिर भी वहाँ धर्म की रौशनी दोपहर के सूरज की तरह फैली हुई है। मज़हब के मानने वालों की माली हालत कहीं अच्छी है कहीं ख़राब। इससे साफ़ है विश्वास और पैसे की हालत के बीच रिश्ता जोड़ने के लिए प्रमाण नाकाफ़ी है बल्कि उसके साथ एक ख़ास वजह और भी होनी चाहिए जिससे पता चले कि एक का होना और न होना दूसरे

के होने और न होने से जुड़ा है।

इसी तरह के बेढंगेपन और बेजोड़पन को हम ऐसे दो समाजों में अच्छी तरह देख सकते हैं जो शोषण के क़ब्ज़े में हों कि एक जगह मज़हब ज़िन्दगी की असलियत से बाहर है और दूसरी जगह यही मज़हब ज़िन्दगी की ज़रूरत है। हालाँकि दोनों समाज बिल्कुल बराबर हैं।

मैं फिर कहता हूँ कि मज़हब और मज़हब से लगाव दुनियावी चीज़ों की कमी की वजह से नहीं है बल्कि मज़हब से दूरी का कारण संसार का लगाव और दुनिया की रंगीनी का मोह है, जो लोग ख़्वाहिशों के ग़ुलाम और दुनिया के भक्त हैं वही लोग मज़हब से फिरे और बिफरे हैं।

घटनाएँ हमको इसी नतीजे पर पहुँचाती हैं कि इन्सान अलग–अलग तरीक़ों और हालतों से दीन की तरफ होता है इसलिए हमको उन वजहों को ढूंढना चाहिए जो मज़हब के प्रेम की असल वजहें हों, यह नहीं कि दुनियावी और माली फ़ाएदे के चक्कर में पड़ जाए। इसके अलावा अगर हम आसमानी मज़हबों के मक़सदों को तलाश करें तो इस नतीजे पर पहुँचे बग़ैर नहीं रहेंगे कि तमाम नबियों के आने की वजह और लोगों के मज़हब की तरफ़ रुझान की वजह तमाम लोगों की ''माली हालत एक जैसी'' करना थी और दीन के तमाम फ़ायदों में से एक यह भी फ़ायदा है कि इन्सानों की माली हालत भी बराबर और एक जैसी हो जाती है।

ख़ुदा की खोजः वुजूद की गहराइयों से पुकार

इस जटिल शरीर के अलावा भी इन्सान के कुछ खुले आयाम (Dimensions) या फैलाव है जो शरीर की सीमाओं से घिरे नहीं हैं। बदन के बाहर के इस आयाम को समझने के लिए रूहानी बुनियादों और अन्दर की आँख से खोज करना चाहिए जिससे शरीर के संतोष के आगे नेचर के जलवे और मन की सच्ची भावनाओं तक पहुँच हो सके।

इन्सान के वजूद में समझने का एक ख़ास सिलसिला है जिसकी जड़ें उसकी अपनी हैं और वह समझ नेचर और स्वभाव के ख़मीर से पलती बढ़ती हैं। इस तरह की जानकारी लेने के लिए बाहरी चीज़ें काम की नहीं होती हैं। इन्सान भौतिक ज्ञान (Material knowledge) और उसकी बहस में जाने से पहले अपनी इन्हीं नेचरल जानकारियों की बुनियाद पर सच्चाइयों को समझ सकता है। लेकिन साइन्सी और फ़लसफ़ी जानकारियों में जाने के बाद और उसके दिमाग़ में अलग–अलग तरह की तर्कों के जमा होने के बाद ऐसा हो सकता है कि वह अपनी उन नेचुरल जानकारियों को भूल जायें या शक और दुविधा या कन्फ़्यूज़न का शिकार हो जाये। यही वजह है कि इन्सान जब विश्वास की पहचान करने में स्वभाव (नेचर) से अलग होकर काम करता है तो वहीं से इख़्तेलाफ़ शुरु होते हैं।

मज़हब से लगाव और ख़ुदा पर ईमान पहले मरहले में

नेचुरल समझ और जानने का नतीजा होता है फिर अक़्ल और सोच–विचार की मदद से पूरी तरह से हिदायत यानी सन्मार्ग तक पहुँचता है।

इन्सान के मिज़ाज में नेचुरल एहसास (Natural Feelings) की जड़ें इतनी गहरी और खुली हुई हैं कि इन्सान अपनी सोच और रूह (आत्मा) को हर तरह के मज़हबी और धर्म की विरोधी सोच से धो डाले, और अपने और दुनिया की तरफ़ ग़ौर करे तो वह अच्छी तरह महसूस करेगा कि दुनिया का क़ाफ़ला हमेशा से एक निर्धारित (मुक़र्रर) मक़सद की तरफ चल रहा है, अपने इरादे और चाह के बग़ैर उसने जीवन शुरु किया है और अपने इरादे के बग़ैर एक बिन्दु (केन्द्रबिन्दु) की तरफ चल रहा है, चाहे वह उस बिन्दु को न जाने समझे। इस सच्चाई को संसार की सभी मौजूद चीज़ों में एक गठे हुए ढंग क़ानून और सधे हुए सिस्टम में देखा जा सकता है।

एक खुले मन का इन्सान (बुद्धजीवी) जब अपने आसपास को देखता है तो उसको अच्छी तरह यह एहसास हो जाता है कि एक परमेश्वर है जिसका उस पर बल्कि पूरी दुनिया पर क़ब्ज़ा है। जब वह ज्ञान, शक्ति और इरादे को इतने बड़े सन्सार के सामने अपनी जैसी एक बहुत ही मामूली और छोटी ज़ात में देखता है तो यह सोचने पर मजबूर हो जाता है कि यह कैसे हो सकता है कि इस दुनिया के अन्दर ज्ञान, सूझबूझ, शक्ति और चाह का काम न हो। मुख़तसर यह कि यही सिस्टम और वक़्त और हिसाब से नपीतुली इन्सानी चाल भी इस बात के मानने पर मजबूर करती है कि इस दुनिया के सिस्टम की बागडोर किसी सूझबूझ वाले जानकार के हाथ में है जो अपने हुक्म से इसके इस सिस्टम (निज़ाम) को चला रहा है क्योंकि इस मौजूदा निज़ाम (सिस्टम)

का मतलब ऐसे सूझबूझ वाले और जानकार (ख़ुदा) के होने के अलावा कुछ हो ही नहीं सकता। जो इन्सान भी ग़ौर से इस दुनिया में अपने वजूद को समझ लेगा, वह इस बात को समझ जायगा कि इस विश्व में एक ऐसी ख़ास ताक़त है जो उसको पैदा करती है जो ''नहीं है'' उसे ''है'' कर देती है और फिर उससे बिना पूछे और बिना मदद के ख़त्म कर देती है। यह नेचर का क़ानून है क्योंकि किसी इन्सान ने कहीं कभी भी यह नहीं देखा कि कोई भी चीज़ किसी बनाने वाले के बग़ैर अपने आप बन जाय या किसी करने वाले के बिना कोई काम अपने आप हो जाय। कारण और नतीजे के आपसी रिश्ते की खोज अन्दर की चाहत का नतीजा है। कारण–नतीजे के क़ानून को किसी से अलग नहीं किया जा सकता। इसलिए मज़हब का एहसास और पैदा करने वाले (अल्लाह) की खोज की चाहत भी इन्सान से अलग नहीं हो सकती। हद यह है कि अभी जिस बच्चे ने दुनिया ही नहीं देखी है अगर उसके कान में कोई आवाज़ पहुँचे या किसी हिलने–डुलने को देखे तो फ़ौरन नेचुरल तरह से जिधर से आवाज़ आयी है उधर और पैदा करने वाले की तरफ़ ध्यान देता है।

कर्म (प्रेक्टिकल लाइफ़) और ज्ञान की बुनियादें हर बात के लिए एक कारण को ज़रूरी ठहराती हैं बल्कि 'क्यों–कैसे' का क़ानून एक ऐसा आम नियम है जो बिना किसी को छोड़े हर चीज़ और हर बात पर लागू है। सारे ज्ञान–विज्ञान चाहे वह भूविज्ञान (Geological Science) या भौतिक (Physical) व रसायन (Chemical Science) हों या समाजशास्त्र (Sociology), एकोनामिक्स इन सब में 'क्यों कैसे' का नियम लागू है। इससे पता चलता है कि सभी ज्ञान–विज्ञान, कारण और नतीजे को जानने समझने का रास्ता हैं कि क्या काम क्यों और किस तरह होता है। दुनिया की हर

इन्सानी तरक़्क़ी और विकास विद्वानों के इसी कारण की खोज का नतीजा है।

अगर इस दुनिया के किसी कोने में कोई भी चीज़ में अपने आप पैदा हो सकती या बन सकती, तो हमको यह हक़ होता कि हम हर चीज़ का उसका अपना वुजूद मान लेते। यह भी ज़रूरी नहीं है कि 'कारण' का क़ानून दुनिया के सामान्य आम बात (Phenomenon) की तरह हमारे लिए बिल्कुल सामने का और खुला हुआ हो क्योंकि कारण की इतनी ज़्यादा क़िस्में है कि वहाँ तक पहुँचने और खोज करने वाले सिर्फ़ एक बात में सभी वजहों को जान समझ नहीं पहचान सकते, न कि सभी बातों में। यह बात भी तै है कि इन्सान की ज़िन्दगी के बीते और आने वाले ज़माने में किसी भी तरह चाहे वह सिर्फ एक इन्सान की हालत हो या समाज की, किसी ऐसे बिन्दु का वुजूद नहीं है जो अपने आप अचानक पैदा हो गया हो।

जब सभी प्रैक्टिकल इल्मों (साइन्स) का फ़ैसला है कि नेचर की सारी चीज़ों में एक चीज़ का वुजूद ठहराव वाला नहीं है और जब हमारे सभी तजुरबे (Experiment), समझ (Feelings) और निष्कर्ष भी इसी नतीजे पर पहुँचे हैं कि प्राकृति (नेचर) में कोई भी काम बग़ैर वजह और दलील के नहीं हुआ और सब कुछ ख़ास क़ानून और सिस्टम के हिसाब से होता है तो फिर क्या यह बात अचम्भे वाली नहीं है कि कुछ लोग सारा ज्ञान, सूझबूझ और फ़ितरी (नेचुरल) बातों को अनदेखी करके दुनिया के पैदा करने वाले सृजनहार का इन्कार कर रहे हैं।

दूसरी तरह यह भी कहा जा सकता है कि जीव के उसी स्वभाव (Biological nature) ने तरक़्क़ी की है और जो हद से इतना बाहर आ गया है कि महसूस करने की शक्तियों, ज्ञानेन्द्रियों (Senses)

की दीवारों के पार होकर जो चीज़ें छुपी हुई हैं उन्हें भी समझ लेती है और इन्सान के ज़मीर या अन्तःकरण से पैदा होने वाली हर बात और हर सवाल का जवाब देती है वह यही नेचर है, बस शर्त यह है कि वह किसी ख़ास विश्वास और ट्रेनिंग में ढले समाज के सिस्टम से न पैदा हुआ हो। असलियत और आम होने के लेहाज़ से इस नेचर में और दूसरे इन्सानी स्वभाव जैसे अपने से मुहब्बत में कोई फ़र्क़ नहीं है। इस तरह यही नेचर इन्सान को बनाने वाले ख़ुदा का पता देती हैं। लेकिन सिखाई, माहौल और समाज जैसी चीज़े नेचर की माँगों को पूरा नहीं होने देतीं। फ़िज़ियालोजी का बड़ा मशहूर विद्वान वाल्टर ऑसकार लैंड बर्ग (Walter Oscar Landburg) लिखता है कि साइन्सी पढ़ाई में कुछ लोग जो ख़ुदा के होने का एहसास नहीं कर पाते उसकी कई वजहें हैं। उनमें से एक वजह पॉलिटिकल रंगढंग, सोशल सिस्टम या धन और हुकूमत की चाह है जो इन्सान के मन में ख़ुदा के होने से इन्कार करने पर झुकाव पैदा करती हैं।

नेचर के स्रोत से पैदा होने वाली चीज़ नेचुरल सिस्टम की तरह ख़ूबसूरत है। जो लोग अपने पैदा होने के असली मक़सद में आज़ाद रहे हैं, आदतों के क़ैदख़ाने में बन्द नहीं हैं और न उनके स्वभाव ने शब्दावली (Terminology) का रंग पकड़ा है वह ज़मीर (अपने मन के अन्दर) की आवाज़ को बहुत अच्छी तरह सुन लेते हैं और कामों में अच्छे और बुरे और अक़ीदों में सही और ग़लत में फ़र्क़ कर लेते हैं। यही वजह है कि इस तरह के लोगों में बेमज़हब और नेचर से फिरने वाले बहुत कम मिलते हैं। अगर कोई उनसे कहे कि यह इतनी बड़ी दुनिया अचानक पैदा हो गयी है तो चाहे वह अपनी बातों को हज़ारों फ़लसफ़े वाले शब्दों (Terms) में ढालें फिर भी उनकी बातें ऐसे लोगों पर असर नहीं करती क्योंकि

उन्होंने अपनी फितरत (नेचर) के सहारे संसार के अचानक होने के नज़रिये को नकार दिया है। हाँ! जो लोग अपने ज्ञान के जाल में फंसे हुए हैं, वे इन ख़ूबसूरत बातों से शक और शुब्हे के चक्कर में पड़ जाते हैं। लिमिटेड और घमण्ड पैदा करने वाले ज्ञान उन रंगबिरंग शीशों की तरह हैं जो अक़्ल और फितरत की खिड़कियों में लगा दिये गये हों और ये लोग दुनिया को अपनी जानकारियों और अपने आर्ट और कलाकारी के रंग में देखते हैं और यह यक़ीन कर लेते हैं कि अक़्ल और होश के झरोखे के छोटे से घेरे से जो कुछ उन्होंने देखा है बस असली सच्चाई वही है और उसके अलावा कुछ भी नहीं है। इसका ये मतलब बिल्कुल नहीं है कि इन्सान अक़्ल की तरक़्क़ी से अलग–थलग रह जाये ताकि वह बहकने न पाये। बल्कि मेरा मक़सद सिर्फ़ इतना है कि इन्सान अपनी महदूद समझदारी और आर्ट पर घमण्ड न करने लगे।

बहुत से लोग ज्ञान और अक़्ल को सीढ़ी बनाकर अपने को ऊपर पहुँचाए बग़ैर रुक जाते हैं और शब्दावली (Terminology) और मतलबों के घेरे में अपने आप को क़ैदी बनाकर रखते हैं।

जब इन्सान ख़तरे में घिर जाता है तो यही नेचर उसकी मदद के लिए बढ़ती है। जब कभी इन्सान ख़तरनाक मुश्किलों और डरावनी कड़ी हालतों में घिर जाता है और दुनिया की सभी चीज़े जो उसकी मुश्किल हल कर सकती थीं उससे मुँह मोड़ लेती हैं और ज़िन्दगी की किसी संभावना तक उसकी पहुँच नहीं हो पाती है और एक तिनके की तरह हादसों (दुर्घटनाओं) की नदी में डुबकी खा रहा होता है, उसके और मौत के बीच एक क़दम से ज़्यादा की दूरी नहीं रह जाती तो वही छुपा हुआ काम करने वाला एक बेमाद्दी (Metaphysical) पनाह का रास्ता दिखाता है और ऐसी ज़ात की तरफ़ ध्यान दिलाता है जिसकी सकत सभी ताक़तों से

ऊँची सर्वशक्तिमान है। वह समझ लेता है कि वह मेहरबान वजूद इतना ताक़तवाला है कि अपनी ग़ैर मामूली ताक़त के ज़रिये उसको उन परेशानियों से छुड़ा सकता है। इसी वजह से वह अपने पूरे वजूद के साथ उससे मदद चाहता है और अपने दिल के एक कोने में मुश्किलों और परेशानियों से छुटकारा और आज़ादी देने वाले की ताक़त का एहसास करता है। हद यह है कि वह दौलतमन्द और सरफिरे और दुनिया के पुजारी जो हुकूमत के नशे में धुत होकर अल्लाह की क़ुदरत से बेपरवाह होते हैं, जब अपनी बर्बादी और हार का सामना करते हैं तो उन स्कूलों और माहौल की वह सारी तालीम (शिक्षाएं) भुला देते हैं जहाँ उनको यह बताया गया था कि ख़ुदा सिर्फ़ वहेम और अन्धविश्वास है और कुछ नहीं। वे तन मन से वजूद देने वाले और ताक़त के स्रोत से लौ लगाने लगते हैं।

इतिहास के पन्नों में आज भी ऐसे लोगों के बहुत से वाक़ेये मिलते हैं जिन्होंने मुश्किल और परेशानी के वक़्त अपने नेचर के चेहरे पर पड़ा हुआ पर्दा नोंच फेंका है और दिल और जान से उस एक अकेले ख़ुदा (जिसके बराबर कोई नहीं है) की तरफ झुक गये हैं।

फ्रांस का एक बहुत बड़ा भौतिकवादी फ्लॉस्फ़र विद्रो (Wedro) अपनी किताब ''मैटर और मैटीरियलिज़्म'' के आख़िर में कुछ दुआ वाले ऐसे जुमले लिखता है जो फ़ितरत की आवाज़ और अन्दर के मन के फैलाव की प्रतिक्रिया (Reaction) हैं। वह कहता है–

ऐ ख़ुदा! मैंने अपनी बात की शुरुआत उस नेचर से की है जिसे ख़ुदा के मानने वाले तेरा सबसे ख़ूबसूरत और अच्छी कलाकृति मानते हैं और मैं अपनी बात तुझ पर ख़त्म करता हूँ कि तेरा नाम ज़मीन पर रहने वालों के यहाँ ''ख़ुदा'' है।

पालने वाले! मैं सोचता हूँ ''तू है'', तू मेरी आत्मा और मेरी हालत का जानने वाला है। अगर मुझे मालूम हो जाये कि मैंने बीते हुए ज़माने में तेरे हुक्म और अपनी अक़्ल के ख़िलाफ कोई काम किया है तो मैं उस ग़लती पर शर्मिन्दा हूँ और पछताता हूँ लेकिन आने वाले वक़्त में सुखी और ख़ुश रहूँगा क्योंकि जब मैं अपने पापों को मान लूँगा तो तू माफ़ कर देगा। इस दुनिया में तुझसे कुछ नहीं चाहता क्योंकि जो भी होगा वह या तेरे हुक्म से होगा या प्राकृति के नियम से होगा। लेकिन अगर इसके अलावा कोई दूसरी दुनिया है तो तुझसे बदले की उम्मीद रखता हूँ हालाँकि इस दुनिया में जो कुछ भी किया है वह अपने लिए किया है।

(अक़ायद व आरा–ए–बशरी, पेज–308)

उन स्रोतों के अलावा जो इन्सान के अन्दर के नेचर में ठहराये गये हैं और जो हक़ीक़तों को समझने में मदद करते हैं ताकि वह पूरी आज़ादी के साथ, नेचर के उसूल के हिसाब से, बहकावे वाले प्रोपेगण्डों और दिमाग़ की नई–नई उपजी बातों से दूर होकर अपने लिए एक रास्ता चुने, वजूद के बाहर भी एक नेक रास्ता दिखाने वाले का होना ज़रूरी है जो अक़्ल को और नेचर को ताक़त दे सके और रास्ता दिखा सके जिससे न मानने वालों के मिज़ाज और उनकी बेलगाम ज़्यादतियों का सुधार कर सके और अक़्ल और नेचर को भी भटकने से बचा सकें और अपने बनाए हुए ख़ुदाओं के सामने सर झुकाने से रोक सके एक ऐसे बाहरी रास्ता दिखाने वाले का होना ज़रूरी है।

यह बाहरी रसूल (ईश–दूत) कहलाता है। नबी (ईश्वर–संदेश लाने वाले) उनको यानी नबियों और रसूलों (अ0) को भेजा ही इसलिए गया है कि ये इन्सान का ध्यान सूक्ष्म नेचर समझावों की तरफ कर सके और ख़ुदा की इबादत, और ऊँचे मक़सदों की तरफ़

अगुवाई कर सकें।

नबियों की हिदायत (सन्मार्ग) का यह मक़सद बिल्कुल नहीं है कि इन्सान के इरादों के बनाने वाले अंगारों को बुझा दें यानी उसके सोचने और चुनने की आज़ादी को छीन लें। नहीं, ऐसा बिलकुल नहीं है। बल्कि यह इन्सान के नेचर के क़बूल करने और मानने वाले झुकाव की मदद करते हैं और जिसका मक़सद इन्सान को आज़ाद कराना और इन्सान को इस क़ाबिल बनाना है कि वह अपने मिज़ाज, नेचर और स्वभाव से फ़ायदा उठा सके।

सबसे पहले नबियों की बात मानने वाले वही लोग थे जो दिल के पाक–साफ़ और चमकते ज़मीर (अन्तर्रात्मा) वाले थे। नबियों का विरोध करने वाले या तो धन दौलत और पुरानी घिसीपिटी रस्मों, परम्पराओं के बन्दी थे या ऐसे लोग थे जो अपनी बेकार और छोटी अक़्ल पर घमण्ड करते थे और उनकी जेहालत वाली अकड़ और उनका घमण्ड हमेशा इन्सान की सलाहियतों से फ़ायदा उठाने में रुकावट रहा।

एक बुद्धजीवी कहता है कि– प्रार्थना और माँगने का क़ानून, रूहानियत और आध्यत्मवाद तक पर राज करता है क्योंकि अगर दीन की चाहत लोगों के नेचर में मौजूद न होती तो नबियों का धर्मप्रचार बेकार रहता जबकि नबियों का प्रचार बेअसर नहीं रहा है बल्कि उनकी बातों को मानने वाले बहुत लोग थे और यही बड़ी दलील है कि लोगों के अन्दर और इन्सानों के ज़मीर (अर्न्तात्मा) में धर्म की चाह मौजूद थी।

नबियों का पैग़ाम और धर्मप्रचार का आधार हमेशा एकेश्वरवाद (ख़ुदा के एक होने) था, न कि ख़ुदा के होने का सबूत। नबी मूर्ति–पूजा और सूरज, चाँद, तारों वग़ैरा की पूजा से इसीलिए रोका करते थे ताकि इन्सान के नेचर की और अन्दरूनी प्यास

बाहरी ग़लत प्रतीकों जैसे बुतों की पूजा, तारों की पूजा वग़ैरा से न बुझे। बल्कि उनके संदेश और प्रचार का मक़सद हर तरह के बहकावे और बेतुकेपन से दूर करके इन्सानों का ध्यान उस सच्चे बड़े ख़ुदा की तरफ़ करना था और उनका मक़सद यह था कि लोग अनन्त परमात्मा की चाह में रीझ जायें और पूरे ईमान विश्वास के साथ किसी रुकावट के बग़ैर उस आख़री मक़सद तक पहुँच जायें।

बस यह बात याद रखने की है कि शिर्क (ख़ुदा के साथ किसी और को उसका साथी मानना) और मूर्ति–पूजा अपनी सब क़िस्मों में चाहे वह तरक़्क़ी की सूरत में हो जैसे संसारवाद (Meterialism) या तरक़्क़ी न पाये हुए रूप में हो जैसे मूर्तिपूजा यह सब नेचर से भटकने का नतीजा है। ज्ञान–विज्ञान की तरक़्क़ी ख़ास तौर से मज़हब का तजरुबा, जो आज की दुनिया में हर जगह दिखाई देता है, इसने ऐसी–ऐसी जानकारियाँ दी हैं जिनसे हम बड़े क़ीमती नतीजे अपनी इसी चर्चा के लिए ले सकते हैं।

एक तरफ से मज़हबों के इतिहास को समाज–शास्त्र (Sociology), पुरातत्व (Archeology) और मानव–शास्त्र (Anthropology) के आंकड़ों (Data) से ऐसी अच्छी और नई जानकारियाँ हाथ लगी हैं जो पहले की जानकारियों से ज़्यादा अलग नहीं है, और दूसरी तरफ से अपने ना पहचाने हुए मन और आत्मा की कोशिश के ज़रिये जिसकी शुरुआत फ्रेड, ऐन्ना (Freud, Anna) से हुई और एडलर, हेल्म्युट (Adler, Helmut) और यंग (Young) की लगातार कोशिश की वजह से इन्सान की रूह की गहराइयों में छिपी ताक़तों और अक़्ल से परे की समझ और पहचान के सहारे पहुँची, फिर जिसने समझ के ऊपर (Supernatural) और इरादों के परे की बात जैसे धर्म के एहसास के लिए ज्ञान

वाली खोजी चाह (Curiosity) का दरवाज़ा खोल दिया।

आज भी एक विचार वाली चर्चा चल रही है जिसके नतीजे में अलग–अलग सोच के मानने वाले ज़्यादा से ज़्यादा विद्वान इस सच्चाई को मान चुके हैं। यानी इस बात को मान चुके हैं कि मज़हब का एहसास भी इन्सान की रूह और नेचर का एक हिस्सा है, और नेचर की समझ भी अक़्ल के परे की समझ की एक क़िस्म है।

लगभग 1920 ई0 से यूनानी फ़लास्फ़र रोडलफिट (Rodalphit) यह साबित कर पाया है कि मज़हब के एहसास में अक़्ल और आचार के तत्वों (Elements) के अलावा कुछ नेचुरल या समझ के परे (Superrational) हिस्से भी हैं और अल्लाह के सारे गुण जैसे– उसकी बड़ाई, पाकी और कुदरत (सकत) आदि सिर्फ़ 'दैवपवित्रता कुद्स (Sanctity) को समझने समझाने के लिए है। इस 'कुद्स' के माने की किसी अक़्ली समझदारी की तरफ़ नहीं जाते है बल्कि 'कुद्स' का मतलब एक नियमित (Regular) कहावत है जो किसी दूसरे मतलब से निकली नहीं है, और न ही दूसरे अक़्ली या बिना अक़्ली मतलब के साथ इसकी गिनती हो सकती है। इस ज़माने की एक ख़ास बात यह है कि उसने 'समय' (Time) के नाम से एक चौथे आयाम (Dimension) का पता लगाया है जो दूसरे आयाम यानी 3–डी की तरह जिस्म में मिला हुआ है। इसी से यह कहा जाता है कि दुनिया के अन्दर कोई वस्तु (जिस्म) नहीं जो इस 'समय' से ख़ाली हो और जो गति (Motion) और बदलाव से पैदा होती है।

इसी तरह इस ज़माने के विद्वानों ने एक चौथे मान्सिक आयाम का पता लगाया है जो धर्मबोध (मज़हबी एहसास) के नाम से जाना जाता है।[1] बाक़ी तीन 'समझ'/एहसास' ये हैं:

(1) हिस्से दीनी, तरजमा मोहन्दिस बयानी

1–खोजने और पहचानने का एहसास (Sense):–

यह अन्दुरूनी प्यास वही एहसास है जिसने पहले दिन से इन्सान की सोच को अनजान बातों, इस दुनिया की पहचान और उसके तरह–तरह के जलवों, दृश्यों की रिसर्च और खोज करने के लिए तैयार किया और इसी रिसर्च के नतीजे ज्ञान–विज्ञान (साइंस) और टेक्नालोजी पैदा हुई। और वह परेशानियाँ और कठिनाईयाँ जिनको तहक़ीक़ (रिसर्च) करने वाले और ज्ञान की नींव डालने वाले और फ़लास्फर लोग बर्दाश्त करते हैं, उसका स्रोत यही एहसास है।

2– नेकी का एहसास

यह इन्सान की रूह के ऊँचे गुणों और बड़ी–बड़ी अच्छाइयों का केन्द्र है। हर इन्सान जो अपने मन की गहराईयों में एक ऐसा लगाव/आर्कषण महसूस करता है जो उसका अद्ल (इन्साफ) और दोस्ती व बलिदान, त्याग की तरफ खींचती है वह खिंचना पाक चलन (आचरण) की तरफ ध्यान देने और बुराईयों और गन्दगियों से दूर रहने के नतीजे में पैदा होता है।

3– सजने संवरने का एहसास

तरह–तरह के टेलन्ट और इन्टरेस्ट के ज़ाहिर होने की वजह यही है और समाजी बातों के होने में इसका बहुत ज़्यादा असर है।

4– धर्म का एहसास

इसी एहसास की वजह से हर आदमी अपने नेचर से पराभौतिकी (Metaphysics) की ओर खिंचता और झुकता है और यही तीनो एहसास के ठहराव का ज़मानतदार है। मज़हब के एहसास से पर्दा उठाने के साथ ही रूह के तीनो आयाम (3D) का

घेरा टूट गया और यह बात तै हो गयी कि इन्सान के अन्दर सारी मज़हबी चाहतें अपने तौर पर मौजूद हैं बल्कि उनका वजूद उस वक़्त भी था जब इन्सान जंगलों, पहाड़ों और गुफ़ाओं में ज़िन्दगी गुज़ार रहा था।

'न होने' को 'है' बनाने वाले ख़ुदा को पहचाने के लिए कई तरीक़े हैंः ग़ैर अक़्ली नेचुरल और अक़्ली ज़रूरतों का जवाब यूँ ही ख़ुदा के मानी है, इस तरह कि युनिवर्स (दुनिया) के सिस्टम और उसमें मौजूद तरह–तरह की निशानियों के सहारे हमारी अक़्ल पालने वाले के होने का यक़ीन करती है और प्रेम और स्वभाव की लगन से ख़ुदा से नाता पैदा कर लेती है। यह रिश्ता और मेल इतना मज़बूत होता है कि आप यह कहने पर मजबूर हो जायें कि वह उसको देख रहा है। लेकिन सामने की आँखों से नहीं, बल्कि दिल की आँखों से देख रहा है। अगर मन के ज़रिये ख़ुदा की पहचान अन्तः कारण/सूझबूझ मिल की जाये तो इसमें किसी दलील और सूबूत की ज़रूरत नहीं है।

आज का ज्ञान–विज्ञान (साइंस) हालाँकि साबित करने के लिए प्रयोगों (Experiments) का सहारा लेता है लेकिन फिर भी एकेश्वरवाद या तौहीद (ख़ुदा का एक होना) ग़ौर, ध्यान, तर्क और दलीलों का सीधा नतीजा है– चाहे अक़्ल वाली, तर्क वाली और फ़लसफ़े वाली दलीलें हो या तजुरबों (प्रयोगों) और एहसासों का नतीजा हों, वह हर तरह से तर्क यानी दलील वाली तौहीद है।

डिकॉर्ट (Decart) और संेट थामस डकन (St. Thomas Dacan) जैसे जानकार अक़्ल, दलील और साइन्सी सोच के सहारे ख़ुदा की पहचान के साफ़ नतीजे तक पहुँचे हैं। फ्रांस के पैस्कल (Pascal) जैसे पहचान करने वाले भक्ति (mystic) अन्दर की गवाहियों और नेचर के सहारे इस नतीजे तक पहुँचे हैं। पैसकल

कहता है............'ख़ुदा को मानने के लिए इन्सानी दिल के पास ऐसी दलीलें मौजूद हैं जहाँ तक अक़्ल की पहुँच मुमकिन नहीं है।'

आईन्स्टाइन (Einstine) के सोचने का ढंग कुछ इस तरह है– 'सब से ख़ूबसूरत, सजा और गहरा एहसास जो इन्सान को मिल सकता है वह ''पहचान का एहसास'' है। यही वह चीज़ है जो सारे सच्चे इल्मों के बीच हमारे दिलों में पनपता है और जो इन्सान इस एहसास की समझ न रखता हो और हौचक्का–भौचक्का न हो सकता हो वह मुर्दे इन्सान की तरह है।

(हिस्से मज़हबी पेज– 72)

जर्मन का बड़ा विद्वान शॉपेन हावर (Shopen Hauar) धर्म के एहसास को इन्सान के अन्दर इतना गहरा ख़याल करता है कि इसी 'धर्म के एहसास' को इन्सान को सभी जानवरों से अलग करने की विभाजन रेखा समझता है और कहता है कि– ''इन्सान वह जीव (जानदार) है जो पराभौतिकी (Metaphysics) को मानने वाला हो।''

पहचानने और खोजने का एहसास, नेकियों का एहसास, ख़ूबसूरती का एहसास अपनी सभी असलियत, ठहराव और असर जो आचरण और हुनर (Talent) के पैदा होने में रखता है, इन सबके होते हुए दीन का एहसास इन तीनों, 1–दीन का एहसास, 2–खोजने (रिसर्च करने) का एहसास और 3– ख़ूबसूरती के एहसास होने, के लिए पहल करने और चलने–बढ़ने के लिए ज़मीन बनाता और तैयार करता है और इन तीनों एहसासों की मदद करता है। नेचर के राज़ों को पाने के सिलसिले में इस 'धर्म एहसास' का बहुत बड़ा रोल है।

ख़ुदा को मानने वाले की नज़र में दुनिया एक गहरे जटिल नक़्शे के, हिसाब से और क़ानून (सिस्टम) की बुनियाद पर पैदा की

गयी है। सब जानने और समझने वाले ख़ुदा पर ईमान के साये में इन्सान का 'ढूँढने और खोजने वाला एहसास' चलता है जिस से कारण और नतीजे के सिलसिले में पैदा की गयी दुनिया में नेचर के इफ़ेक्ट्स और क़ानून को जानने के लिए खोज और कोशिश करे।

वेल ड्यूरेन्ट (Will Durant) कहता है कि–

हरबर्ट स्पांस्र का विचार है कि काहिन (ग़ैब की बातें बताने वाले तान्त्रिक) ही पहले जानकार हैं जिस तरह वह पहले साहित्यकार भी हैं जो तारा कोठी (Observatory) से देखकर साइन्स (खगोल शास्त्र/Astronomy की साइन्स) शुरु करने वाले यही लोग हैं जिसका मक़सद ख़ूब देखभाल करके धर्म के त्योहारों और प्रोग्रामों का वक़्त तै करना था। इस तरह की जानकारियों को पूजास्थलों, मन्दिरों आदि में महफ़ूज़ कर लिया जाता था और धर्म की यह मीरास एक पीढ़ी के बाद दूसरी और दूसरी के बाद तीसरी पीढ़ी में जाती रहती थी।

(दर्शनशास्त्र का इतिहास – विल ड्यूरेन्ट भा–1 पे–121)

इन्सान के अच्छे गुणों, उसकी नेक नसीहत करने में, उसको अच्छे चलन बलन्दियों के फलने, उसकी नेचर के सन्तुलित (Balance) यानी बराबर करने में धर्म के एहसास का जो अहम रोल है उससे इन्कार नहीं किया जा सकता। जो लोग भी मज़हब पर चलते हैं, वे ख्वाहिशों पर कन्ट्रोल और ऊँचे गुणों से सजने को सबसे अहम धर्म (कर्तव्य) समझते हैं।

इतिहास के ज़माने में सजावट और ख़ूबसूरती के एहसास के पनपने में दीनी सोच का बहुत बड़ा रोल है, क्योंकि पहले के इन्सान ने अपने बड़े से बड़े और अच्छे Talent को सिर्फ अपने ख़ुदाओं के सम्मान में शुरु किये थे जिनके अनोखे पूजा–घर, मिस्र

के पिरामिड, मास्को की ख़ूबसूरत मूर्तियाँ और इस्लामी पूर्व की हैरान कर देने वाली भवन बनाने की कला (Architecture) यह सारी चीज़े 'मज़हब के एहसास' ही के असर से हैं।

मनोवैज्ञानिकों (Psychologists) का मानना है कि जवान होने (यौवन), और जोश 'मज़हब के एहसास' के बीच एक क्षेत्र (Area) है और ज़िन्दगी के इसी हिस्से में मज़हब की बातों की तरफ़ उन लोगों का भी ध्यान हो जाता है जो इस वक़्त तक मज़हबी बातों की परवाह न करते थे।

स्टैन्ले (Stanley) का मानना है कि ये 'मज़हबी एहसास' 16 साल की उम्र में पैदा होते हैं और इस बात (टापिक) को जवान की शख़सियत/व्यक्तत्व के फैलावों में से एक रूप से समझा जा सकता है। यह एहसास जवान को 'जो तरह–तरह की ताक़तों के असर में है।' इस काम के लिए तैयार करते हैं कि वह अपने वजूद का असल कारण या मक़सद ख़ुदा में ढूँढे।

इस बात का ध्यान रहे कि इन्सान के नेचर की आवाज़ उसी वक़्त जगमगाती है जब उसके सामने कोई रुकावट न हो। लेकिन अगर कोई इस तरह की धर्म के ख़िलाफ चीज़ मौजूद हो तो वह नेचर और ठीक सोच के काम में सुस्ती पैदा कर देती है। यूँ तो इस तरह की रुकावटें इन्सान के नेचर के झुकाव को जड़ से ख़त्म नहीं कर पाती और यही वजह है कि अगर सामने की रुकावट को एक बार फिर तोड़ दिया जाये तो असली नेचर फिर से अपना काम शुरु कर देती हैं और अन्दर से पैदा करने वाले की खोज के साथ अपनी चमक शुरु कर देती है।

पूरी दुनिया के लोग जानते हैं, रूस में कम्यूनिज़्म को आये हुए पचास साल से ज़्यादा का ज़माना गुज़र गया लेकिन इस पर भी रूस में बहुत ज़्यादा लोगों में अब भी मज़हब का एहसास

मौजूद है और हुकूमत करने वालों की तरफ़ से इस लम्बे ज़माने में भी मज़हब को मिटाने के लिए अपनी पूरी ताक़त झोंक देने के बावजूद लाखों इन्सानों के दिल की गहराईयों से मज़हब का एहसास ख़त्म नहीं किया जा सका।

इसी वजह से हम कहते हैं कि दुनिया के अन्दर लगातार भौतिकवादी (Material) सोच ख़ुदा के अक़ीदे के नेचरल होने को कोई नुक़सान नहीं पहुँचा सकती। किसी ख़ास मज़हब के नेचर से दूरी और अलगाव को दूसरे मज़हब वालों और पराभौतिकी (Metaphysics) के मानने वाली विचारधाराओं, चाहे आज की हों या पहले की हों, के सामने ख़ुदा की पहचान के नेचुरल होने का तोड़ नहीं कहा जा सकता क्योंकि हर आम चीज़ में कुछ 'ख़ास' होता है और हर बात में कुछ छूट (Exception) होती है।

इतिहास के हिसाब से भौतिक (Materialist) और फ़लसफ़ी 'मज़हब' की बुनियाद छटी और सातवीं सदी ईसापूर्व पड़ती है और उस ज़माने में Materialism की हामी भरने वाले लोग ये हैं:

1— टॉलीस (Talese): ये यूनान का फ़लसफ़ी है, 622 ई0 पू0 में पैदा हुआ और 560 या 567 ई0पू0 में मर गया।

2— हेराक्लिटस (Heraclitus): यह 535 ई0पू0 में पैदा हुआ और 475 ई0पू0 में मर गया।

3— डेमाक्रिटस (Democritus): इसका ज़माना 540 ई0पू0 का है।

4— एपिकोर (Epichore): इसका ज़माना 346 ई0पू0 का है लेकिन इन सबका भौतिकवादी (Materialist) होना मालूम नहीं है, क्योंकि मिसाल के तौर पर कुछ जानकार लोग जैसे बाँगून अपनी किताब 'फ़लसफ़े का इतिहास' में लिखता है: टॉलीस का मानना था कि भौतिक बदलाव रूहानी वजहों के असर से हुआ करता है। उसने डेमोक्रिटस के लिए लिखा: डेमोक्रिटस Materalist नहीं था,

वह रूहों के होने को मानता था। हाँ, अठ्ठारवीं सदी में भौतिकवाद (Materialism) की तरक़्क़ी शुरु हुई और साइंस वालों में इसके मानने वाले पैदा होने लगे। उनमें भी कुछ लोगों के अलग नज़रिये हैं जैसे जीन जैक्स रूसो (Jean Jacques Rousseau) के बारे में कुछ इतिहासकारों का कहना है कि वह भौतिकवादी (Materialist) था और दूसरे लोग कहते हैं कि वह ख़ुदा का मानने वाला था। हो सकता है कि उसको भौतिकवादी इसलिए कहा गया है कि चूँकि उसने अपने जीवन में गिरजाओं और उनके पोप का बहुत कड़ा विरोध किया था।

डॉ0 मुहम्मद फरीद वजदी अपनी मशहूर इन्साइक्लोपीडिया में लिखते हैं कि वुजूद की शुरुआत के बारे में 'रूसो' ने कहा है कि नेचुरल ताक़तों के सहारे जो होने वाली बातें हुई या घटनाएँ हुई हैं और कुछ का असर जो कुछ चीज़ों में होता है उसके बारे में जितना भी गहरी सोच करता हूँ, वह यह है कि 'आख़िर तक नतीजे के बदलाव' के क़ानून से मुझ पर यही साबित होता है कि 'पहला कारण' इरादे वाला, पता लगाने वाला, और समझवाला है। इसीलिए मैं इस बात का यक़ीन रखता हूँ कि ख़ुदा के इरादे ने ही वुजूद को चाल दी और मुर्दों को जिलाया लेकिन तुमको यह पूछने का पूरा हक़ है कि फिर वह ख़ुदा आख़िर कहाँ है। तो मैं जवाब दूँगा कि जिन आसमानों को उसने चालू बनाया और जिन तारों को उजाला दिया उन सब में ख़ुदा मौजूद है और ख़ुदा सिर्फ यही नही कि मुझमें है बल्कि चरने वाली भेड़, उड़ने वाले पक्षी, ज़मीन पर पड़े पत्थर, पेड़ों की वह डालियाँ और पत्ते जिनसे हवाएं अटखेलियाँ करती हैं, उनमें भी ख़ुदा है। ख़ुदा तो हर जगह है, इसलिए वे विचार अक़्ल से कितनी दूर हैं जिनमें यह कहा जाता है कि यह पैदा किया हुआ सिस्टम एक ऐसी अन्धी चाल का

नतीजा है जो यूँ ही अचानक 'वस्तु' (Matter) में पैदा हो गई है। उन लोगों का जो जी चाहे कहें, लेकिन मेरी नज़र में जो मौजूद चीज़ों में क़ानून है, उसको देखूँ और उसमें कूट–कूट कर जो सूझबूझ भरी गयी है उसको न समझूँ तो यह बिल्कुल नहीं हो सकता। मैं ऐसा नहीं हूँ जो यह कह सकूँ कि मुर्दा चीज़ ज़िन्दा चीज़ों को पैदा कर सकती है और अन्धी ज़रूरत एक समझ वाली दुनिया को पैदा कर सकती है। क्या यह हो सकता कि जिसके पास ख़ुद ही अक़्ल न हो वह ऐसी चीज़ पैदा कर सके जो अक़्ल वाली हो?!

ख़ुदा और प्रयोग वाले ज्ञान (साइंस) का तर्क

यह बात मानी हुई है कि समाज ढंग, ट्रेनिंग वाले और ऐतिहासिक कारण और इन्सान–जाति के लगाव उसकी भावनाओं, रूहानी कारणों और फितरी (नेचरल) ख़ाहिशों में बे असर नहीं हो सकते। यूँ तो यह तरह–तरह की शर्तें ख़्वाहिशों में ज़बरदस्ती और ज़रूरत का आविष्कार नहीं करतीं, फिर भी यह इसके लिए एक ठीक–ठाक माहौल बना देते हैं और वह इन्सान की अक़्ल में एक बड़ी छाप छोड़ जाते हैं। बल्कि कभी–कभी वह इन्सान की अपनी आज़ादी, चाह और इख़्तियार (अधिकार) के सामने रुकावट बनकर सामने आते हैं।

इन्सान की दिमाग़ी ताक़तें जिस ख़ास ढंग पर ज़्यादा काम करती हैं उसी ढंग या विषय में ज़्यादा तेज़, चालू और मज़बूत हो जाती हैं और इसके अलावा दूसरी बातें खो सी जाती हैं। इसी ख़ास विषय के अलावा और दूसरे विषय भी असली न होकर दूसरे दर्जे के होकर रह जाते हैं। फिर उसके सारे फैसले इसी बात को सामने रख कर किये जाते हैं। ये बात याद रखिये कि सबसे बहका रास्ता ये रहा है कि इन्सानी सोच को सिर्फ प्रयोग वाले

ज्ञान और साईंस तक में ही घेर दिया गया है और ख़ुदा को पहचानने की तरफ़ कोई ध्यान नहीं दिया गया है। प्रयोग वाले ज्ञान, साईंस के ख़ास जानने वाले अपनी सोच को सुनने, छूने जैसे पाँच एहसास से समझी जाने वाली बातों की हद तक रखते हैं। इसलिए इन पाँच एहसास में न आने वाली बातों से वे अजनबी रहते हैं। यह अजनबीपन दूरी और प्रायोग पर ज़्यादा भरोसा करने के नतीजे में संसार और ज़िन्दगी के बारे में उनके विचारों की बुनयाद प्रयोग और सिर्फ़ प्रयोग पर होकर रह गयी है। उनकी नज़र में हर चीज़ को जानने और उसे क़बूल करने की कसौटी सिर्फ़ प्रयोग ही रह गया है। वे सभी मसलों का हल इसी प्रयोग से करना चाहते हैं। जिन ज्ञानों का काम हादसों और वाक़ेओं के बीच ताल्लुक़ का पता करना है उनका सारा मक़सद यह है कि अपने और वाक़ेओं के बीच तालुक़ को बनाये रखें न कि ख़ुदा और वाक़ेओं के बीच तालुक़ को ढूँढें। जब इन्सान प्रयोग वाले ज्ञान को पढ़ता है तो ख़ुदा की तरफ ज़र्रा बराबर भी ध्यान नहीं कर पाता। सच है कि एहसासों के स्केल से पराभौतिकी (Metaphysics) की सच्चाईयों को नापा नहीं जा सकता और न ही ख़ुदा को लेबोरेटरियों में देखा जा सकता है। लेबोरेटरियों में प्रयोग करके ख़ुदा के होने का फ़ैसला नहीं हो सकता है। यह कहना भी ग़लत है कि ख़ुदा अगर कोई चीज़ है तो उसे लेबोरेटरियों में मैथ्मेटिक्स के हिसाब से जोड़ घटाकर नापतौल कर देखा जा सकता।

कोई भी प्रयोग अपने नतीजे से यह यक़ीन नहीं दिला सकता है कि जो चीज़ें माद्दा (Matter) नहीं है उनका वजूद है भी या नहीं। क्योंकि प्रयोग से सिर्फ उसी चीज़ को साबित किया जा सकता है जिस चीज़ की 'नहीं' प्रयोग से की जा सकती हो। किसी चीज़ को गहराई से जानने के दो तरीक़े होते हैं। ज्ञान के दोनो

चेहरे, साईंस और मेटाफ़िज़िक्स अपनी असलियत से बराबर की मज़बूती और भरोसा पाए हुए हैं। मेटाफिज़िक्स को प्रयोग से साबित नहीं किया जा सकता, इसलिए प्रयोग से उसके होने का इन्कार भी नहीं किया जा सकता। लाखों प्रयोग साबित नहीं कर सकते कि हर चीज़ माद्दी (Material) ही है। अपने में बहुत ऐडवान्स और जटिल होते हुए भी लैबोरेटरियों की पहुँच अनजान चीज़ों की अनबूझी पहेलियों की बहुत बड़ी दुनिया तक न जा सकी। ये बेहिसाब ज़र्रों में छुपी हुई सच्चाई तक नहीं पहुँच सके। सच बात तो यह है कि ये अभी तक मैटर को अच्छी तरह न पहचान सके तो मैटर को पैदा करने वाले को क्या पहचानेंगे।

मैं यह मानता हूँ कि इन्सान की शुरूआत के जटिल सिस्टम को जानने के लिए प्रयोगों के फायदे ज़रूर हैं। बल्कि प्रयोगों को संसार के सिस्टम को देखने समझने से और उससे पालने वाले भगवान को मानने के लिए एक खुला हुआ और माडर्न आधार बनाया जा सकता है क्योंकि प्रयोग से पता चलाने का सिस्टम ख़ुद ऐसा मज़बूत और गहरा है जो सकत वाले जानकार की गवाही देता है। मगर दुनिया के राज़ों और नेचर के मसलों की रिसर्च में नेचर के विद्वानों का मक़सद कभी ख़ुदा को पहचानना नहीं था। इसलिए उन्होंने ख़ुदा के होने की बात की ही नहीं। उन रिसर्च वालों के ज्ञान तक का मक़सद सिर्फ राज़ों से पर्दा उठा देने तक ही था और ये लोग अपनी मालूमात के सिकुड़े घिरे दायरे से निकले बिना, नेचर के खुले तमाशों के गठे हुए रास्तों से ख़ुद की पहचान तक पहुँचे बिना, पहले तो ये प्रयोग, समझ और एहसास से जो पाते हैं उसके इकट्ठा करते हैं। फिर अपनी अक़्ल और सोच से उन्हें जाँचते परखते हैं और नतीजा निकालते हैं, इसलिए असली मक़सद यानी ख़ुदा की पहचान तक नहीं पहुँच पाते। याद

रखिये अलग–अलग ज्ञान विज्ञान और उनके आपसी रिश्तों को देखकर एक समझ वाले ख़ुदा को माने बग़ैर उनके सही माने नहीं समझे जा सकते हैं।

इन्सान की अपनी प्रेक्टिकल ज़िन्दगी ज्ञान विज्ञान से इतनी जुड़ गयी है कि उन्हें अलग नहीं किया जा सकता। साइंसी रिसर्च ने इन्सान की पूरी मैटर वाली ज़िन्दगी को हर तरफ से अपने घेरे में ले रखा है और इन्सान इसमें इतना बौला चुका है कि अपनी ज़िन्दगी में नेचर की खोज बहुत मुश्किल हो गयी है, इसलिए अपने आप इन्सानों का ज्ञान–विज्ञान पर भरोसा ज़रूरत से ज़्यादा बढ़ गया है। इसका नतीजा यह हुआ कि ख़ुदा के वजूद और अनदेखी छुपी बातों के बारे में लोग शक और हिचकिचाहट में पड़ गये हैं। साइन्सी तर्क अपनी सारी सोच को अपने ढंग से ढाल कर सामने करती है तो सन्सार और जीवन के बारे में लोगों की सोच भी वैसी हो जाती है। हद यह है कि उनका अक़ीदा ये हो जाता है कि किसी भी काम या उसकी सच्चाई को उसी साइंसी पहचान के तराज़ू में तौले बग़ैर मानते ही नहीं। बस जो चीज़ एहसास की हद और प्रयोग से बाहर हो उसको सबित करने का कोई तरीक़ा ही नहीं है।

पराभौतिकी (Metaphysics) का बड़ा विद्वान पॉल क्लेरेन्स अब्रसोल्ड (Paul Clarence Abrsold) कहता हैः–

'मैं अपनी पढ़ाई लिखाई में ज्ञान के शुरुआत के तौर तरीक़ों से इतना प्यार करता था कि मुझे यक़ीन था कि एक न एक दिन हर चीज़ की सच्चाई सामने आ जायेगी और एक न एक दिन नेचर के राज़ों पर पड़े हुए पर्दे खुल कर रहेंगे। लेकिन मेरी जितनी पढ़ाई–लिखाई जितनी आगे बढ़ी और ऐटम से लेकर

आकाशगंगा (Galaxy) तक और माइक्रोब से इन्सान तक मैंने हर चीज़ को पढ़ा तो इस नतीजे पर पहुँचा कि अभी तो बहुत सी चीज़ें अनजान रह गईं हैं। ज्ञान में इतनी बात तो है कि वह ऐटम के हिस्सों (Particles) की या नेचर में पायी जाने वाली चीज़ों के खुलकर बता सके लेकिन वह रूह और इन्सानी अक़्ल की पहचान करने में बेबस है। साइन्स वाले इस बात को जानते हैं कि चीज़ों की असलियत और हालत को देखें समझें और बयान करें लेकिन चीज़ों के होने का कारण और उनकी ख़ुसूसियत के कारण उनके बस से बाहर है। इल्म या इन्सानी अक़्ल यह नहीं बता सकती कि ऐटम, आकाशगंगा (Galaxy), रूह/आत्मा ये चीजें कहाँ से आयी हैं। सारे इल्म ज्ञान सिर्फ संसार की शुरुआत के सिलसिले में अपने विचार बयान कर सकते हैं कि ये तारे, ये ऐटम, ये आकाशगंगाएँ (Galaxies) पहले मैटर के धमाके से पैदा हुए लेकिन यह नहीं बता सके कि वह पहला मैटर और उसके फट जाने की ताक़त कहाँ से आयी। इस सवाल के जवाब के लिए हर समझ वाला ख़ुदा के होने को मानने पर मजबूर है।

यह प्रयोग वाला साइन्टिस्ट जो ख़ुदा को पहचानने वाली सोच से अजनबी है, इस ज़िन्दगी में सभी उन चीज़ों को मान लेता है जो ज्ञान–तर्क के लेहाज़ से हों और जो चीज़ें ज्ञान के तौर तरीक़ों के अनुसार न हों उनका इन्कार करता है। ज्ञान के तौर तरीक़ों का मतलब यह है कि वह सिर्फ़ प्रयोग पर भरोसा करता है और इसी को दलील बनाता है, उसकी नज़र में हर दलील की सच्चाई का आधार सिर्फ प्रयोग के अुनसार होना है।

ऐसा प्रयोगकार विद्वान जिसकी मज़हबी सोच सो रही हो, ख़ासकर वह 'करो' और 'न करो' के रूप में मज़हबी बातों को क़ायदे के बिना पाते हैं। वे ज्ञान की अपनी ज़बान और फार्मूले के आदी होने की वजह से ज्ञान के ढंग को बरत लेते हैं, लेकिन उनके सामने सादा आसान मज़हबी हुक्मों की कोई क़ीमत नहीं है।

बेशक सोचने का यह तरीक़ा ग़लत है। क्या, उनके फार्मूले उलझे हुए और कठिन नहीं है? क्या उनके सीखने वाले इन मुश्किल और उलझे हुए फार्मूलों पर गहरी सोच और ध्यान देने को ज़रूरी नहीं समझते हैं लेकिन उनके विद्वान जब उनकी ज़िन्दगी में लाते हैं तो उन्हें कठिन ढाँचे से निकलकर और शब्दावली (Technical Terminology) से अलग करके आसान तरीक़ों से सामने लाते हैं नहीं तो ये विद्वान अपने इन्स्टिट्यूटों और लाइब्रेरियों में घिर कर रह जाते।

सभी टेलीफोन, रेडियो से फ़ायदा उठाते हैं। यही बात साइंस और टेक्नालोजी की दूसरी चीज़ों की भी है। इनकी कठिन बनावट अपनी जगह, लोग थोड़ी सी ट्रेनिंग के बाद इनसे फ़ायदा उठाने लगते हैं और जो लोग इन टेक्निकल चीज़ों को ख़रीदते हैं, उन्हें तकनीक और मेकेनकी जानकारियाँ नहीं बतायी जाती। बस इतना बताया जाता है जिससे ग्राहक उसके इस्तेमाल का तरीक़ा सीख ले।

इसी तरह अगर हम मज़हबी तौर तरीक़ों को जो साइंसी फार्मूलों की ज़बान में नहीं हैं बल्कि सादा और बहुत आम हैं अपने ख़यालों की दुनिया में फ़र्ज़ करके उनकी अहमियत का इन्कार कर दें और अपनी ज़िन्दगी में उनके गहरे असर से बेख़बर रहें तो यह बात इन्साफ से और साइंसी तर्क से बहुत दूर है।

याद रखिये प्रैक्टिकल हुक्म उसी वक़्त फ़ायदेवाले होते हैं

जब आम बोलचाल की ज़बान में पेश किये जाते हैं और निजी या समाजी ज़िन्दगी में सबकी पहुँच, समझ और काम के क़ाबिल हो। इसके अलावा अगर मज़हबी हुक्म हमारी मनमानी के दायरे में हों तो फिर किसी नबी या मज़हब की ज़रूरत ही नहीं रहेगी बल्कि हम ख़ुद ही उन्हें गढ़ लिया करेंगे।

आमतौर से इन्सान अपने भाग्य और सकत के सामने जिन चीज़ों पर अपनी सकत नहीं रखता उनकी अनदेखी करता है। मैटर के जानने वाले और प्रयोग वाली साइंस के स्टुडेन्ट अपनी मालूमात पर घमण्ड करने लगे हैं। उनका ख़याल है कि उन्होंने सच्चाइयों की दुनिया को जीत लिया है।(1) जबकि किसी ज़माने का कोई इन्सान ये दावा नहीं कर सकता कि उसने दुनिया के छिपे हुए सारे राज़ों को जान लिया है और नेचर के चेहरे से सारे परदे उठा दिये हैं। वाक़ेओं और उनकी गहराइयों पर ज़्यादा ग़ौर करना चाहिए, अपनी जेहालतों के समन्दर के सामने अपने ज्ञान को बहुत ही कम समझना चाहिए क्योंकि एक रिसर्च के बाद हमें पता चलता है कि हमारे सामने अभी तो जेहालतों का ठाठें मारता हुआ समन्दर है। हज़ारों बरसों पर फैले हुए इतिहास में इन्सान ने

---

(1) हमारे विद्वान लेखक की यह बात पूरी तरह सही नहीं है। स्टूडेन्ट की बात तो अलग है लेकिन किसी ज्ञान या साइंस का जानने वाला कभी अपनी जानकारियों को पूरा नहीं समझता न ही उन पर घमण्ड करता है न कर सकता है। वह अच्छी तरह समझता है कि उसे साइंस की एक शाखा के थोड़े से हिस्से की जानकारी है, यह भी जानता है कि अभी अथाह समन्दर है जिस तक उसकी साइंस पहुँची नहीं, उसके थोड़े से कोनों के कुछ पहलुओं पर रिसर्च चल रही है। साइंस ही नहीं किसी भी ज्ञान का जानने वाला इतना तो समझता है कि वह कितने पानी में है और ज्ञान का अथाह समन्दर उसकी पहुँच से बाहर है। ऐसे में अपनी जानकारियों पर घमण्ड के क्या माने। (अनुवादक)

अपनी अनथक कोशिशों और सकत से दुनिया के बेछोर फैलावों में ज़्यादा से ज़्यादा चीज़ों की जितनी भी पहचान की है, वह दुनिया के छिपे हुऐ अनगिनत राज़ों इशारों में से सिर्फ कुछ ही इशारे हैं। इस रिसर्च में इन्सान ने सिर्फ कुछ क़दम ही उठाये हैं। अभी तो इन्सान की अक़्ल पर छाये हुए जेहालतों के पहाड़ हैं।

प्रोफेसर रोवाये कहते हैंः–

वह सारी खोजें (Discoveries) जो असमान्य (Extraordinary) हैं और जिन्हें इन्सान सोच भी नहीं सकता था वह टेक्नालाजी के विकास की वजह से एक ऐसे ज़माने में जो दो सौ साल से ज़्यादा नहीं, हाथ आ गयी हैं। (दुनिया की) चीज़ों की उम्रों के आगे ये दो सौ साल एक पल के बराबर न होंगे। इसलिए किसी इन्सान के लिए ये नामुमकिन है कि इन इन्सानी ईजादों की इस छोटी सी उम्र में ये दावा कर सके कि वह नेचर के छिपे राज़ों तक पहुँच गया या उस पर कन्ट्रोल पा लिया है। क्या यह सही नहीं है कि इन्सान के छिपे राज़ों से पर्दा उठने का काम दिन पर दिन आगे बढ़ता जा रहा है, इस पर फैसला लगाने के लिए हमको इससे ज़्यादा रुकना चाहिए, कम से कम टेक्नालोजी की उम्र एक हज़ार साल गुज़र जाए जब ही कोई फैसला लगाया जा सकता है। वैसे ये हज़ार साल भी दुनिया के हिसाब से एक पल के बराबर ही होंगे।''

आइंस्टाइन (Einstine) की यह बात हमारे मतलब की है यानि हमारे ज्ञान की फ़क़ीरी अभी दुनिया के छिपे हुए बेहिसाब राज़ों के आगे 'न' के बराबर है। वह कहता है–

"विश्व की जो तस्वीर ज्ञान के एतेबार से बनाई गई है, वह एक अधूरी तस्वीर है क्योंकि इन्सानी सोच की कमज़ोरी की वजह से सच्चाई तक पहुँच प्रैक्टिकली नामुमकिन है फ़िज़िक्स की दुनिया की अधूरी तस्वीर पर ही थक हार कर ठहर जाना कोई ऐसा काम नहीं जो दुनिया से क्या ज़्यादातर हमसे जुड़ा है।"

इसलिए साइन्सी समझ, एहसास वाले ज्ञान की पहचान और प्रैक्टिकल के मैदान और उसकी पहुँच को ज़्यादा ही सच्चाई की ऐनक से देखना चाहिए। सच्चाई की तह तक पहुँचने के लिए पहले से बने हुए मन और दूसरी रुकावटों से हटकर ठीक सोच के साथ जांचना परखना और समझना चाहिए।

बेशक प्रयोग वाली साइंस सामने वाली चीज़ों के अलावा और किसी तरह की बात बता नहीं सकती। इनकी सारी रिसर्च का घेरा रिसर्च लैब में सिर्फ़ मैटर और भौतिकवादिता (Materialism) तक महदूद हैं। प्रयोग वाली साइंस का मक़सद बाहरी दुनिया की रिसर्च है कि हम इत्मिनान कर सकें कि ज्ञान वाली चर्चाएं सही हैं या नहीं, इसको बाहरी संसार से मेल देकर जाँच–परख में ले आते हैं। अगर बाहरी संसार ने इस बात को सही ठहराया तो मानते हैं, नहीं तो इन्कार करते हैं। इसलिए अब प्रयोग वाली साइंसों को सामने रखते हुए यह सवाल करना चाहिए क्या पराभौतिक (Metaphysical) सच्चाइयाँ एहसास और परख के प्रयोग में लाई जा सकती हैं? और कौन सी प्रेक्टिकल रिसर्च को ये हक़ पहुँता है कि वह ईमान और विश्वास में दख़ल दें।

मैटर का जानना ऐसा चिराग़ ज़रूर है जो अपनी किरनों से कुछ अनजान कोनों को जगमगा दे मगर ये ऐसा चिराग़ हरगिज़

नहीं है कि जो हर तरह के अंधेरों को दूर करने में काम का हो क्योंकि हर सिस्टम की पहचान जो पहचान के सारे हिस्सों को संभाले और जो पूरी सूझबूझ को पा सके लेकिन महसूस करने वाले ज्ञानों साइंसों के सिकुड़े घेरे के अन्दर इन्सानी मालूमात को क़ैदी बना देना इन्सान को पूरी सूझबूझ तक नहीं पहुँचा सकता बल्कि यह एक तजुरबे की बाढ़ में रोक है और 'होने' के अन्दर के बहाव से बेख़बरी है।

ख़ुदा को मानना या न मानना प्रयोग वाली साइंसों के घेरे में नहीं आता। ऐसी साइंसें तो मैटर की बात करती हैं, यह मैटर या पराभौतिक (Metaphysical) मामले में 'हाँ' या 'नहीं' कुछ कह नहीं सकती। मज़हब की नज़र में ख़ुदा न तो मैटर का जिस्म है और न सामने के सेन्स से उसे जाना समझा जा सकता है और न वक़्त और जगह (Time & Space) उसको घेर सकते हैं बल्कि वह एक ऐसा मौजूद है जो न ढाला हुआ है न हालतों से जुड़ा है। वह हालतों और ढंगों को जानता है लेकिन उनसे बेपरवाह है। वह कमाल की सबसे ऊँची सीढ़ी पर है और इन्सानी सोच से बाहर है। उसकी हक़ीक़त को न पहचान सकना ये हमारी सकत की कमी है।

इसी दलील से हम अगर प्रयोग वाली सारी साइंसों की किताबों को पढ़ें तो कोई आम सा भी मामला नहीं मिलेगा जिसमें ख़ुदा के बारे में प्रयोग की बात हो या ख़ुदा के सिलसिले में कुछ कहा गया हो।

अगर हम मान लें कि देखने सुनने जैसे जानने समझने के माध्यम से ही सच्चाई का पता चला सकते हैं तब भी इस तरह की समझ से बाहर की बात को 'नहीं' कह नही सकते क्योंकि यह ख़ुद प्रयोग के दूर की बात है।

मान लीजिए तौहीद (एकेश्वरवाद) के मानने वाले अपने

दावे पर कोई दलील सामने न ला सकें तब भी उस ख़ुदा के 'होने' और 'न होने' की बात करना, जो सामने की समझ से परे है साइन्सी बात नहीं है बल्कि सिर्फ़ सोच का फेर है, और एक बेबुनियाद बात है जो साइंस और फ़लसफ़े (दर्शन) को शोभा नहीं देता बल्कि प्रयोग–तर्क के भी ख़िलाफ़ है।

जार्ज पुलिट्ज़र (George Pulitzer) अपनी किताब 'Elementary Principles of philosophy' (दर्शन के बुनियादी उसूल) में कहता हैः–

एक ऐसी चीज़ को सोचा नहीं जा सकता जो समय और जगह से परे हो, उलटफेर बदलाव से बिल्कुल अलग हो।

इस बात में ऐसी सोच है जिसके बारे में नहीं मालूम क्या चाहता है और किस चीज़ की तलाश है। अगर उसके बारे में मालूम हो कि किस चीज़ की तालश है तो उसको ये मालूम करना चाहिए कि किस तरह तलाश किया जाए क्योंकि 'पुलिट्ज़र' की रिसर्च का आधार सिर्फ मैटर और एहसास हैं। इसलिए जो चीज़ उसके ज्ञान से दूर हैं और एहसास वाले प्रयोग से जिसका वजूद साबित न हो सके तो वह उसको 'नामुम्किन' ही समझेगा और उसके मानने को ज्ञान–साइंस सोच के ख़िलाफ़ समझेगा। सच्ची बात तो यह है कि जब मालूम है कि मैटर की दुनिया अपने सारे राज़ों के साथ सिर्फ़ यहीं (ज़मीन) तक नहीं है जहाँ हम ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं। ख़ास तौर पर जब इस ज़मीन पर मैटर से जुड़ी इन्सानी जेहालतों का ढेर का ढेर है तो फ़िर मैटर के विद्वानों को ये बात मान लेनी चाहिए कि पराभौतिकी (Metaphysics) हमारे ज्ञान के बस से बाहर है इसलिए हम इसके बारे में कुछ नहीं कहते सिर्फ़ चुप रहते हैं, न यह कि उसका इन्कार करने लगें। उनके लिए क्योंकर सही है कि सारी दुनिया के सिस्टम के सारे राज़ों के

जानने का दावा करें जबकि उनका ज्ञान दुनिया के मुक़ाबले में ज़ीरो है।

भला कौन सी दलील है जिससे साबित किया जा सकता है कि वजूद सिर्फ़ मैटर के बराबर का है और दुनिया का वजूद सिर्फ Materialism में घिरा है। पराभौतिकी (Metaphysics) का इन्कार करने वाला कौन सा विद्वान है जिसने आज तक अपने इन्कार की बुनियाद किसी ज्ञान या तर्क की दलील पर रखी हो? इस बात की दलील क्या है कि एहसास से जानने और प्रयोग की हद से जो चीज़ बाहर है वह सिर्फ 'नहीं' है। ज्ञान पूरी तरह से साफ़–साफ़ अनजानी बात का सिर्फ़ इसलिए 'नहीं' नहीं करता कि उन तक पहुँने का कोई ज़रिया नहीं है बल्कि वह उनसे परदा उठाने का रास्ता देखता है। इसके बावजूद भौतिकवादी (Materalist) अल्लाह के बारे में कोई बात नहीं करते। हद यह है कि शक या हिचकिचाहट से भी इस मसले में चर्चा न करके जल्दबाज़ी में या अपने से ग़लत अन्दाज़ से बग़ैर छानबीन किये संसार के पैदा करने वाले का इन्कार कर देते हैं।

यह लोग ख़ास चीज़ों के लिए तराज़ू और मानक (Standard) बनाते है। एक तरह के मानक को दूसरे के लिए नहीं मानते। जैसे तल (Plain) के मानक को आयतन (Volume) के लिए इस्तेमाल की इजाज़त नहीं होती। मगर यही लोग चाहते हैं कि ख़ुदा रूह (आत्मा) 'वही' (ब्रहम्वाणी) को इसी तराज़ू से तौला जाए। जब उन बातों को इस तरह नहीं समझ पाते और बेबस हो जाते हैं तो फ़ौरन इन्कार कर बैठते हैं।

अगर प्रयोग के तर्क में घिरा हुआ इन्सान दुनिया में सिर्फ़ उन्हीं चीज़ों के वजूद को मानता है जो एहसास करने वाले प्रयोगों से साबित हैं और इनके अलावा सारी चीज़ों का इन्कार करता है

तो उसको समझ लेना चाहिए कि उसने ऐसा रास्ता चुना है जो प्रयोग वाली साइंस की जाँच परख और रिसर्च की पैदावार नहीं है। इस तरह की खुली सोच बुरी सोच की एक क़िस्म और मैटर व नेचर की हद से बाहर होना है। दीन के जानकारों के नज़दीक ख़ुदा जिसे यह मैटर के विद्वान अपनी साइंस के ज़रिए से मैटर के कारण साबित करना चाहते हैं, वह ख़ुदा ही नहीं है। भौतिक (Material) साइन्स इस बड़े मक़सद तक पहुँच नहीं सकती।

फ़िज़ियोलोजी का एक मशहूर विद्वान डा0 अयूवी कहता हैः–

तर्क (Logic) ख़ुदा के होने को साबित कर सकता है, मगर ख़ुदा के होने से इन्कार नहीं कर सकता। हो सकता है कि कुछ लोग ख़ुदा के होने का इन्कार करते हों जैसे पहले भी रहे हैं लेकिन उनमें से कोई भी अपने दावे पर अक़्ल वाली दलील नहीं ला सकता। अगर किसी के पास किसी चीज़ के होने के इन्कार पर कोई अक्ल में आने वाली दलील हो या किसी चीज़ के होने में शक करने की कोई अक़्ल वाली दलील हो तो वह इन्कार कर सकता है, लेकिन मैंने अभी तक अपनी पढ़ाई में किसी को नहीं देखा जो ख़ुदा के होने के इन्कार पर कोई अक़्ली दलील रखता हो बल्कि ख़ुदा के होने पर बेशुमार और अक़्ल में आने वाली हज़ारों दलीलें देखी हैं।

अनदेखे 'होने' को मानना सिर्फ़ ख़ुदा की हद तक नहीं

नबियों ने उस एक अकेले ख़ुदा को पहचाननें और उसी की इबादत करने के लिए हम से कहा है। उसकी ख़ासियतों में एक गुण यह भी है कि वह ऐसा है जिसे बिल्कुल ही महसूस नहीं किया जा सकता। वह हमेशा से है और हमेशा रहेगा, हर जगह

है और कहीं भी नहीं है। उसके जिस्म नहीं है, मगर महसूस होने वाले सारे जिस्मों, पिन्डों में उसका जलवा है। 'है' के संसार के बिन्दु–बिन्दु में उसका इरादा, उसका 'मन' उजागर है। मैटर के सारे नज़ारे उसी ताक़त (Power), उसी ज़ात का आईना है। वह न सिर्फ़ देखा नहीं जा सकता बल्कि हमारे सारे सेन्स (Senses) उसे 'जानने' समझने में बेबस हैं। वह असीम है, परम (Absolute) है, जो हमारे मन या किसी चौखटे से घिर नहीं सकता।

यह सही है कि जिसे हमारे Senses जान न सकें, जिसमें मैटर और Materialism की कोई निशानी, रंग रूप न हो, जिसे हम देख–परख न सकें, उसकी कल्पना बहुत कठिन है। इन्सान जब किसी को महसूस नहीं कर पाता तो जल्द ही उसको नकार देता है।

जो लोग ख़ुदा के वजूद के मसले को मैटर की धुन्धमारी अपनी सिमटी सोच के चौखटे में हल करना चाहते हैं, वे कहते हैंः देखने में न आने वाली चीज़ के होने को क्योंकर माना जा सकता है। पर वे इस हक़ीक़त से या तो बेख़बर या फिर भुलावे में पड़े हैंः इन्सान यह जानते हुए कि उसके 'जानने के ज़रिये, सेन्स महदूद हैं, जिससे सिर्फ़ इस दुनिया की सामने वाली चीज़ों को तो जान सकता है लेकिन वजूद के सारे आयाम (Dimensions) को समझ नहीं सकता और न ये अपने सेन्सों से सामने नज़र आने वाली चीज़ों के आगे एक क़दम भी आगे बढ़ सकता है, जिस तरह प्रयोग वाली साइंसों में इतनी सकत है कि इन्सान की सोच को मैटर की हदों तक तो पहुँचा दे, लेकिन पराभौतिकी (Metaphysics) तक नहीं पहुँच सकतीं।

अगर इन्सान साइंस, उसके हत्थयारों और फ़ार्मूलों से किसी चीज़ को समझ पाने की सकत नहीं रखता है, तो जब तक

उसके 'न होने' पर कोई ठोस दलील न हो सिर्फ इस बात पर उसका इन्कार नहीं कर सकता कि वह हमारी मैटर वाली कसौटी पर पूरी नहीं उतरती।

हम लोग तो सामने की चीज़ों से अनदेखी चीज़ों के बताने वाले नियम क़ानून का पता चलाते है।

बहुत से साइंसी सच भी महसूस नहीं किये जा सकते या उन पर प्रयोग नहीं किया जा सकता। अगर हम महसूस करने और प्रयोग को सच्चाई समझने का आधार मानें तो ऐसे बहुत से सच का साइंसी होना ही ग़लत हो जायगा।

कोई भी समझ वाला अपनी रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में मैटर की हक़ीक़तों का इन्कार सिर्फ़ इस बुनियाद पर नहीं करता कि वह दिखाई नहीं देतीं और महसूस नहीं होती। वह हर उस मैटर वाली चीज़ का इन्कार भी नहीं कर देता जो उसको महसूस न हो तो फिर जो मैटर ही नहीं है, उसका इन्कार क्योंकर सही है।

साइंसी प्रयोगों के अन्दर भी ये बात मानी हुई है कि अगर ख़ास बात का कारण हमको पता न चले तो हम जल्दी में कारण होने के नियम (Principle of Causality) को ग़लत नहीं कह देते बल्कि हम यह कहते हैं कि इसकी वजह नहीं मालूम हो सकी। इसका मतलब यह हुआ कि नियम साइंसी प्रयोगों के आधार पर टिकाऊ हैं। सिर्फ प्रयोग में न आ सकने की वजह से कारण होने का इन्कार नहीं किया जा सकता।

अच्छा जिन चीज़ों के होने को हम मान लेते हैं, क्या सभी को हमने देखा है? क्या मैटर की इसी दुनिया में हम हर चीज़ को देखते और महसूस करते हैं, सिर्फ ख़ुदा ही न देखने में और न महसूस करने में आता है। जी नहीं! ऐसा बिल्कुल नहीं है। मैटर वाले सारे विद्वानों का एका है कि ऐसी बहुत सी हमारी मालूमात

उन सच्चाइयों और फैसलों में आ जाती हैं, जो न महसूस होती हैं और न उससे पहले हम उन्हें जानते थे। विश्व के अन्दर बहुत सी ऐसी चीज़ें हैं जो देखने में न आने वाली हैं। ख़ास कर इस ज़माने में साइंस ने बहुत सी सच्चाइयों को उजागर किया है। एक बड़ा मसला जो अब के साइंटिस्टों ने हल किया है वह मैटर का ताक़त में बदलना है।

इसी दुनिया के यही देखने में आ सकने वाले पिन्डों को जब ये चाहें तो अपने रूप को बदल कर 'ताक़त' बना दें लेकिन यह 'ताक़त' जो मैटर के संसार में बहुत से बदलावों की आधार है, क्या यह देखने या छूने में आ सकती है?

हम इतना तो जानते हैं कि ये ताक़त (Energy) सकत का 'सिकन्दर' है, लेकिन इसकी असलियत अभी तक छुपा हुआ राज़ है। बहुत से साइंसी नतीजे दलीलों और तर्क के बन्धक होते है, मगर उनको देखा नहीं जा सकता। ऐटम के ज़र्रों की गहराइयों की हक़ीक़त का समझना सिर्फ दलीलों पर टिका है। अगर ये असर सामने न आते तो इन्सान ऐटमी रिऐक्शनों से हमेशा अनजान रहता। यही बिजली जो हमारी ज़िन्दगी का अटूट हिस्सा है और जिसके बग़ैर इन्सानी सभ्यता (Civilization) दम तोड़ दे क्या किसी भौतिक वैज्ञानिक (Physicist) ने लैब में इसको देखा है या इलेक्ट्रामैग्नेटिक सामान के इस्तेमाल करने वालों ने इसे कभी छू कर देखा है कि ये नर्म है सख़्त? या उसकी आवाज़ को सुना है? या उसके मज़े को चखा है? बिजली के तार में दौड़ते हुए करंट को भी किसी ने नहीं देखा, सिर्फ आलात और प्रयोगों से पता लगाया जा सकता है कि इस तार में करंट है या नहीं। लेकिन न देखने के बावजूद कोई बिजली का इन्कार नहीं करता है।

आज के फीज़िशिस्टों का कहना है कि जिन चीज़ों को हम

महसूस कर सकते हैं वह सख़्त और ठोस हैं आँखों से इनका चलना (Motion) नहीं दिखाई देता। जिसको हम देखते हैं और महसूस करते हैं वह ऐसे ज़र्रों का गठजोड़ है जो न सख़्त हैं न टिके हुए है बल्कि ये सारी चीज़ें अपनी तरह हालत भी बदलती हैं और चलती फिरती भी हैं। हमारी आँखों से और हमारे एहसास से भी ये ठहरी और न चलने वाली दिखायी देती हैं। न तो उनमें किसी तरह का टिकाऊपन है और न ठहराव व आराम है बल्कि इधर–उधर चलते फिरते हुए चक्कर काटते रहते हैं। हम इन्हें सीधे देख नहीं सकते।

जो हवा हमें घेरे हुए है, वह काफ़ी भारी और घनी है। हमारा बदन हमेशा उसके नीचे दबा रहता है। हर इन्सान लगभग 16 हज़ार कि0 ग्रा0 हवा को उठाये हुए है। बदन का अन्दुरूनी दबाव इस भार का तोड़ किये रहता है, हमको तकलीफ़ का एहसास नहीं होता। यह साबित हुई सच्चाई है जिसको गलेलियो (Galilio) और पैसकल (Pascal) से पहले कोई जानता भी नहीं था। इस पर भी हमारे सेन्स इस को जान नहीं पाते। बस हवा भी ऐसी चीज़ है जो दिखाई नहीं देती।[1] बल्कि प्रयोगों और अक़्ली नतीजे की बुनियाद पर साइन्टिस्ट जिन गुणों को मैटर से जोड़ते हैं, वे भी सीधे हमारी समझ में आ नहीं सकते। जैसे रेडियों की तरंगें हर जगह हैं और कहीं भी नहीं है। गुरुत्वाकर्षण शक्ति (Gravitational Force)

(1)इमाम ज़ैनुलआबेदीन ने ''सहीफ़ए सज्जादिया'' में इसको इस तरह बयान किया हैः ऐ ख़ुदा! तू पाक है और आसमानों के वज़न को जानता है, ऐ ख़ुदा! तू सब दोषों से दूर और पाक है, तू ज़मीनों के वज़न को जानता है। ऐ ख़ुदा तू सारे दोषों से अलग और पाक है, तू सूरज चाँद के वज़न को जानता है, ऐ ख़ुदा तू सारे दोषों से दूर और पाक है, तू उजाले और अंधेरे के वज़न को जानता है। ऐ ख़ुदा तू पाक और सारी ख़राबियों से दूर है, तू साये और हवा के वज़न को जानता है। (सहीफ़ए सज्जादिया दुआ न0 55)

से कोई जगह ख़ाली नहीं है फिर भी इससे मैटर कुछ कम या ज़्यादा नहीं होता।

सारी साइंसी रिसर्च का मक़सद मैटर के महसूस होने वाले थोड़े के आसार को देखने से उसके छिपे हुए सभी कामों (Actions) और आम नियम तक पहुँचना है। भूविज्ञान (Geology) में अरबों साल पहले की ज़मीन की परतों की बनावट के बारे में बताया जाता है और पूरे यक़ीन के साथ नेचर से ज़मीन के तल पर पैदा होने वाले उतार चढ़ाव, ज़मीन की परतों की हद, पुरातत्व (Archeology), पहाड़ों में मैदान, फैले हुए सागर और खारी धरती के बारे में बातें करते हैं। जबकि इन सारे राज़ों को ज़ाहिर करने वालों में से एक भी यह कह नहीं सकता कि ज़मीन पर होने वाले इन वाकओं को मैंने देखा है, मैं उनका चश्मदीद गवाह हूँ।

हमारे मन में आने वाले माने मतलब जैसे इन्साफ़, ख़ूबसूरती, मोहब्बत, बैर, ज्ञान का कोई बन्धा टका रूप नहीं है और न ये दिखाई देने वाली चीज़ें हैं और न इनका कोई फ़िज़िकल असर है इस पर भी इनको असली चीज़ों में गिना जाता है। बस, बिजली की असलियत, रेडियो वाएरलेस की तरंगें इन्सान नहीं जानता इसी तरह इलेक्ट्रान व न्युट्रान को निशानियों और नतीजों से पहचाना जा सकता है, देखने में ये चीज़ें नहीं आतीं तो फ़िर ख़ुदा के आसार से और उसकी निशानियों से उसे पहचानने में क्या परेशानी है?

अच्छा! ज़िन्दगी तो है ही और हम इसका इन्कार भी नहीं कर सकते लेकिन भला किस रास्ते और साधन से ज़िन्दगी का अन्दाज़ा लगाया जा सकता है? सोच और ख़याल की चाल को किस स्केल से नापा जा सकता है।

प्रोफ़ेसर स्टैन्ली कॉन्गडन (Stanly Congdon) लिखता हैः ''मैंने अपने शार्गिदों (Students) से कहा रसायनिक (Chemical)

क़ानूनों के एतेबार से प्रेक्टिकली सोच पर लागू करने का तरीक़ा लिखो। मुझे सेन्टीमीटर में उसकी लम्बाई, किलोग्राम में उसका वज़न, उसका रंग, उसका रूप दबाव, अन्दर के खिँचाव, हरकत, रफ्तार को मुझसे बयान करो। लेकिन वे सोच या अुनमान (Estimation) को किसी फ़िज़िकल माने या मैथ के समीकरण से बयान नहीं कर सके। हाँ अगर कोई नया शब्दकोष (Dictionary) लिखा जाए जिसमें फिज़िकल लम्बाई और वज़न के ख़ास माने लिखे जाएं तो और बात है। ('इस्बाते वुजूदे ख़ुदा' पेज—34)

किसी चीज़ को जानना एक परखा ज्ञान ज़रूर है लेकिन वह भी शक (Doubt) और बहकावे के घेरे में है। ज़िन्दगी में अपनी ख़ास हदों के अलावा न इसमें कोई क़ानून वाली बात है और न ही इसके सही होने की बात। खुले बयान और पूर्वानुमान (Pre-estimation) के एतेबार से वह पूरी तरह मालूमात के घेरे में घिरी हुई है और इसकी शुरुआत और इसका ख़ात्मा ख़याली है निश्चित नहीं। इसके सारे नतीजे भी वक़्ती हैं ख़ासकर अलग—अलग बातों के बीच लगाव मान अुनमान की ग़लतियों से अछूते नहीं हैं इसके अलावा कभी—कभी नई रिसर्च की वजह से बदल भी जाते हैं। क्योंकि साइंसी नतीजों की कोई हद नहीं है।

एक साइंटिस्ट कहता हैः इस ज़माने तक की सच्चाइयाँ (Realities) 'क्यों' और 'कैसे' में हैं, नेचर के दिखावों के लेहाज़ से हमारी निजी समझ बस सापेक्ष (Relative) और घिरी है इस अजीब और उथल—पुथल की दुनिया में कोई ऐसी हक़ीक़त (Reality) नहीं है जो किसी शर्त के बिना ख़ुदा के करने का होना नकार सके या उसके न होने को साबित कर सके। ('इस्बाते वुजूदे ख़ुदा')

इस वजह पर यह बात बिल्कुल साफ़ और खुली है कि अनदेखी और अनसुनी चीज़ों का इन्कार करना अक़्ल और तर्क के

उसूलों के ख़िलाफ है। समझ में नहीं आता कि ख़ुदा का इन्कार करने वाले क्यों इस क़ायदे को जो ज्ञान के सारे मसलों में आम तरह (सामान्य रूप से) लागू होता है, सिर्फ़ ख़ुदा के सिलसिले में क्यों उसका इन्कार कर देते हैं।

हमेशा इस बात का ख़याल रखना चाहिए कि हम मैटर के चौखटे में घिरे हुए और बन्द हैं, इसलिए हम उस ख़ुदा की कल्पना आम ध्यान से कर ही नहीं सकते हैं। मिसाल के तौर पर अगर एक देहाती से ये कहा जाए कि दुनिया के अन्दर एक ऐसा भी शहर है जो बहुत बड़ा फैला और लाखों आदमियों से भरा हुआ है और उसका नाम लन्दन है तो उस के ज़ेहन में एक ऐसा गाँव आएगा जो उसके गाँव से दस बीस गुना बड़ा हो। लेकिन वहाँ की इमारतें वहाँ के पहनावे वहाँ का रहन सहन मेल जोल के बारे में यही ख़याल करेगा कि वहाँ के लोग उसके अपने गाँव जैसे होंगे। लन्दन से अनजान लोगों के लिए यही कहा जा सकता है कि लन्दन एक बस्ती है मगर इस तरह की नहीं जैसा तुम सोचते हो और न वहाँ का रंगढंग तुम्हारे यहाँ के रंगढंग जैसा है। इसी तरह हम पालनहार ख़ुदा के बारे में कहते हैं कि वह है, ज़िन्दा है, हर चीज़ का जानने वाला है हर चीज़ उसके हाथ में है और हर बात उसके बस में है लेकिन इन पायी जाने वाली चीज़ों और ताक़तों की तरह नहीं है। इस तरह हम किसी हद तक अपनी सोच के घेरे से बाहर निकल सकते हैं। मैटर के पुजारी भी जानते हैं कि 'पहले मैटर' के रंगरूप और असलियत को सोचा भी नहीं जा सकता है।

यूँ तो हमारी नज़र में एहसास की ये बातें खुली हुई साफ़ और बहुत गहरी मालूमात में शामिल हैं, लेकिन साइन्सी और फ़लसफ़ी मसलों में अकेले उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता बल्कि मन के खोट से हटकर उनकी असलियत हक़ीक़त और फिर

सच जानने के सिलसिले में वह कितनी मदद कर सकती है, इस बात की छानबीन ज़रूरी है वरना ये एहसास हमको बहकावें में डाल देंगे क्योंकि एहसास ऊपर से महसूस की जाने वाली चीज़ों की ख़ास और तै की हुई हालत से होता है। एहसास न तो ऊपर से महसूस होने वाली सारी चीज़ों और न ही महसूस न होने वाली चीज़ों को समझ सकता है, ये सिर्फ महदूद घेरे के अन्दर ही चीज़ों को जान सकता हैं।

अब आप अपनी आँखों को ले लीजिये सच्चाई के समझने में सबसे मज़बूत साधन हैं मगर बहुत सी जगहों पर हक़ीक़त को देखने में ग़लती करती है। उजाले को ये जब ही देख सकती है, जब उसकी तरंग की लम्बाई 4 से 8 माइक्रोन से ज़्यादा न हो। इसीलिए पराबैंगनी (Ultra Voilet) और इन्फ्रारेड (Infrared) किरनों को देखना मुम्किन नहीं है। साइंसी किताबों में सेन्स की ग़लतियों के लिए एक ख़ास चैपटर रहता है।

हम जिन रंगों को इस दुनिया में देखते हैं, ये सच में रंग ही नही हैं बल्कि अलग–अलग तरह की तरंगों की लम्बाइयों का नाम है। बस जिस चीज़ को हम अपने सेन्स से महसूस करते हैं वह नेचर की हदों में घिरा होता है मिसाल के तौर पर यही गाय, बकरी, कुछ हक़ीक़तों को अलग–अलग रंगों में देखती हैं।

अगर ये आज तक साइंसी हल से ये बात साबित नहीं हो सकी कि इन्सान की 'सूझ' में तरह–तरह के रंगों की क्या हालत है? और इस सिलसिले में अब तक जो रिसर्च सामने आयी है या जो विचार सामने आये हैं वह 'अटकल' के आगे बढ़ नहीं सके हैं। रंगों का मसला भी इसी तरह धुन्धला और उलझा हुआ है।

अगर किसी चीज़ में छूने का धोखा देखना हो तो तीन बरतनों में पानी भर कर रख दीजिए। एक में बहुत गर्म पानी हो,

एक में बहुत ठण्डा पानी और एक हाथ गर्म पानी में डालिये और दूसरे को ठण्डे पानी में फिर दोनों को एक साथ निकाल कर तीसरे गुनगुने पानी वाले बर्तन में हाथ डालिए तो आपको निराला एहसास होगा न। एक हाथ में ज़रूरत से ज़्यादा ठण्डक और दूसरे हाथ में ज़रूरत से ज़्यादा गर्मी का एहसास होगा हालांकि पानी एक है और उसका तापमान (Temprature) भी एक है। यह छूने के एहसास का धोका हुआ या नहीं? लेकिन अक़्ल यही कहती है कि ये नामुमकिन है कि एक ही वक़्त में पानी गर्म भी हो और सर्द भी हो और इसमें दो अलग–अलग बातें पायी जाएं। सच तो ये है कि ये छूने के एहसास की ग़लती है जो पहले वाले पानी में हाथ डालने की वजह से अपने कन्ट्रोल से बाहर हो गई। ये बात एहसास के ख़िलाफ है। इस ग़लती पर अक़्ल और दिमाग़ सोचने पर मजबूर हो जाते हैं। ऐसी हालत में अक़्ल और सोच समझ के बगैर सिर्फ एहसास पर क्योंकर भरोसा किया जा सकता है? एहसास की ग़लतियों से बचाने के लिए अक़्ल से समझने के अलावा और कोई रास्ता है? इसलिए मानना पड़ेगा कि ये अक़्ल की बात है जो एहसास को सही करने वाली है और यह एहसास से बहुत ऊँची है। बस इस से साबित हुआ कि हक़ीक़त के समझने में एहसास की क़ीमत नहीं है। जो लोग समझने में अकेले सेन्सों पर भरोसा करते हैं वे 'होने' के मसलों और संसार के पैदा होने की पहेली को कभी भी बूझ न सकेंगे।

सेन्सों से सच्चाई देखने की सकत के बारे में जो हमें मालूम है उसका नतीजा है कि एहसास और प्रयोग में अकेले सेन्स यक़ीन तक पहुँचा नहीं सकते। फिर भला एहसास से परे के संसार में सेन्सों की पहुँच कैसे काम दे सकती है।

पराभौतिकी (Metaphysics) स्कूल वाले इसको मानते हैं

कि जिस तरह एहसास वाले ज्ञान में रिसर्च का तरीक़ा प्रयोग है इसी तरह मेटाफीज़िक्स के मसलों में सच्चाई की जाँच पड़ताल अक़्ल के ज़रिये ही हो सकती है।

मशहूर रिसर्चर Cammille Flammarion अपनी किताब 'मौत के रहस्य' में लिखता हैः—

इन्सान अनजानेपन में ज़िन्दगी बिता रहा है। उसे यह नहीं मालूम कि इन्सान के बदन की यह बनावट सच्चाइयों तक पहुँचा नहीं सकती और ये पाँच सेन्स हर चीज़ में इन्सान को धोका देते हैं, अकेले वह चीज़ जो इन्सान को हक़ीक़तों तक पहुँचा सकती है, अक़्ल और सोच और जटिल ज्ञान ही है।

आज इन्सान की अक़्ल का ये फैसला है कि ऐसे ज़र्रों और ताक़त का वजूद है जिसे हम नहीं देख सकते और न उनको किसी एहसास से समझा जा सकता है। बस इसी बुनियाद पर बहुत मुमकिन है कि बहुत सी ऐसी बातें और ज़िन्दा चीज़ें पायी जाती हों जो हमारे एहसासों के दायरे से बाहर हैं। इसलिए जब यह बात बिल्कुल साबित हो गई कि उपरी एहसास में सारी चीज़ों के पहचानने की ताक़त नहीं है, बल्कि ये सेन्स कभी हमको धोका देते हैं, सच और असल के ख़िलाफ़ पता देते हैं। हमको ये बात कभी सोचना भी नहीं चाहिए कि सारी मौजूद चीज़ें सिर्फ वही है जिनका हम एहसास करते हैं, हम जिसका एहसास न कर सकें वह मौजूद ही नहीं है बल्कि इसका उल्टा मानना चाहिए।

जिस तरह पहले के लोग ये सोच भी नहीं सकते थे कि हर पिन्ड में करोड़ों माइक्रोब (Microbes) मौजूद हैं और हर ज़िन्दा शरीर में उनका कार्यक्षेत्र है। इसी लिए हम कहते हैं कि जो चीज़ वास्तविक्ता (Reality) की तरफ़ हमको ले जा सकती है वह सिर्फ़ और सिर्फ़ अक़्ल और सोच है।

'कारणता' (कारण–नतीजे) का नियमः–

यह एक आम क़ानून हैः 'जो भी होता है उसकी वजह होती है।' यह कारण आम चलन और ज्ञान–विज्ञान के जतन का आधार है। विद्वान हर होने वाली बात, चाहे वह नेचर की हो या इन्सानी समाज की हो, उसके कारण का पता करने में ज़मीन आसमान एक कर देते हैं। विद्वान और बुद्धजीवी कभी भी यह मानने को तैयार नहीं हैं कि कारण और नतीजे के बिना कोई चीज़ हो जाती।

विश्व स्तर पर विद्वान और बुद्धजीवी लोगों की रिसर्च की वजह से वे नेचर के मज़बूत सिस्टम को अच्छी तरह से पहचान सकते हैं। फिज़िकल साइंस की तरक़्क़ी उनको इस कारणता के क़ानून से बांधती गयी। कोई भी बात उस वक़्त तक नहीं होती जब तक उसकी कोई वजह न हो। यह बड़ी मज़बूत अक़ली दलील है और इन्सानी सोच का साफ़ खुला चेहरा है। यह एक ऐसी नेचुरल और फ़िज़िकली बात है जो हमारे ज़हेन में आटोमेटिक तरीक़े से ऐकशन व रिऐक्शन कराती है। गंवार इंसान भी सामने की चीज़ों और होने वाली बातों की वजह तलाश करता रहता था। वह ज्ञान साइंस से ख़ाली था इसलिए उन वजहों को नापाक या पाक रूहों से जोड़ दिया करता था। ख़ुद फ़लसफ़ियों ने भी आदमी को नेचर से इस क़ानून के मतलब को निकाला है और उसके मानों को फ़लसफ़े का रूप दिया है। मैटर के घेरे में बन्द मैटरियलिस्टों से हटकर हम ने भी अपनी ज़िन्दगी में किसी चीज़ को इत्तेफ़ाक़ से बेवजह पैदा होते नहीं देखा। इतिहास के लम्बे ज़माने में ऐसा कोई वाक़ेआ सामने नहीं आया कि वजह के बिना कोई बात अचानक अपने आप हो गयी हो। अगर कभी ऐसा हुआ होता तो मैटर वालों के लिए दलील हो जाती कि दुनया आप ही आप बन गई। कहीं

गहराई, जटिलपन, नपातुलापन, हिसाब ये सब अपने ख़ास मक़सद पर काम करने वाले की चाह, सोच इरादा और सकत का नतीजा होते हैं। बेसमझ करने वाले के हाथों होने वाले काम में जगह–जगह बिगाड़, तबाही और बेक़ायदापन ही दिखायी देता है। आप सोचिये भला ये कौन सा 'अचानकपन' है जिसके नतीजे में न्यारा निराला, अच्छी तरह गठा गहरा सिस्टम बन गया और चल रहा है? बताइये किसी मैटरियल या इन्सानी साइन्स में यह बात देखी गई है या किसी ने दावा किया है कि वजह के बिना कोई छोटी सी भी चीज़ अपने आप हो गई हो? कारण–नतीजे के इस सिलसिले का आख़िर–आख़िर तक रहने को मानना और सबसे पहले के कारण को न पहचानने से कारण के न मानने को ठीक ठहराया नहीं जा सकता। अगर ये कायनात (Universe) गहरी समझ, जानकार इरादे और हिसाब वाली चाल का नतीजा न होती और एक गठे हुए सिस्टम से न चल रही होती तो शुरुआत ही से हर पल मिटने और बिखरने के ख़तरे में होती। अगर कभी भी किसी मसले में कोई होने वाली बात इत्तेफ़ाक़ से अनहोनी की तरह होती हो तो दुनिया के मिटने में इस अचानक अन्होनी का हाथ ही बहुत होता। सिस्टम में या उसके हिस्सों के संतुलन (Balance) में थोड़ा सा भी बिगाड़ और दुनिया के क़ानूनों में ज़र्रा बराबर भी हेरफेर या रुकावट आपस में सूरज चाँद तारों आदि के टकरा जाने के लिए बहुत होता। इसके नतीजे में कायनात का मिट जाना भी सामने की सीधी सी बात है।

और अगर ये दुनिया इत्तेफ़ाक़/संयोग से पैदा हो गयी है तो फिर ये मैटर वाले लोग इसमें मज़बूत सिस्टम और पूरी तदबीर जहाँ संयोग का नाम तक नहीं, इसे क्यों मानते हैं? अगर पूरी दुनिया इत्तेफ़ाक़ का नतीजा है तो वह कौन सी चीज़ है जो इससे

अलग हटकर हो गई है? अगर कोई चीज़ इसके अलावा किसी और तरह से वजूद में आयी है तो उसकी ख़ासियतें क्या हैं ताकि हम भी रिसर्च करें और देखें कि वह क्या इस दुनिया में सामने की तरह–तरह की अलग–अलग चीज़ों से मेल खाती हैं या नहीं? इस 'है' की दुनिया में ऐसी कोई चीज़ नहीं मिलेगी जो इत्तेफ़ाक़ से हो गयी हो या आ गयी हो बल्कि पैदाइश के कारख़ाने में ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो सोच–समझ, जुगाड़ और कठिनाई का नतीजा न हो। नतीजों की यही ख़ासियतें असर डालने वाले के गुणों का पता देती हैं।

अगर सिस्टम और उसके बैलेंस का पैदा करने वाला 'इत्तेफ़ाक़'/'संयोग' होता तो जितनी भी चीज़ें कठिन गणित के हिसाब से हैं, सबके सब बेगठी और बेमेल की होती क्योंकि गणित का हिसाब, इत्तेफ़ाक़/संयोग का उलटा होता है। इसीलिए हम कहा करते हैं कि इत्तेफ़ाक़ को दुनिया के सिस्टम की बुनियाद ठहरा देना किसी तर्क वाली सफ़ाई या साइंसी दलील से नहीं साबित किया जा सकता और न इस सिस्टम के लिए आख़री हल की तरह माना जा सकता है।

अगर शब्द 'इत्तेफ़ाक़'/'संयोग' का इस्तेमाल कुछ मसलों में होता भी है तो वक़्ती और समझ न पाने से होता है, जानने की वजह से नहीं होता। जब तक होने वाली चीज़ों पर लगे 'कारणता' के क़ानून का पता नहीं चलता, इस शब्द से फ़ायदा उठाया जाता है। लेकिन जब चलने वाली रिसर्च के नतीजे में, हाने वाली, उलझी बातों की गुत्थियाँ सुलझ जाती हैं और सच्चाई से पर्दे उठ जाते हैं तो इस लफ़्ज़ को अलग कर दिया जाता है। इसीलिए हम कहते हैं कि संयोग वाली बात साइन्स का आख़री फैसला नहीं है। साइंसी पहचान और दुनिया के सिस्टम से पर्दे उठ जाने के बाद

इस शब्द के लिए कोई जगह ही नहीं रहती।

यूरोप के नामी फिलास्फर फ्रांसिस बेकन (Francis Bacon) कहते हैं मेरे लिए ये तो हो सकता है कि सारी कहानियों को मान लूँ लेकिन ये हरगिज़ नहीं मान सकता कि इस दुनिया की बुनियाद जानबूझ और समझ के बाहर रखी गई है। एक छिछला फलसफ़ा तो इन्सान के मन को नास्तिक्ता (Atheism) की ओर ले जा सकता है लेकिन गहरा फलसफ़ा हमेशा इन्सान को धर्म की तरफ़ ले जाएगा। लेकिन अगर किसी ने पास के कारण को देखा और गहराई में नहीं गया तो मुमकिन है कि वह ख़ुदा को न माने लेकिन अगर उसने सारे कारण और मालूमात को नज़र में रखा तो हरहाल में हमेशा से रहने वाले की इच्छा और एक खुदा को मान लेगा।

(तारीख़े फ़लसफ़ा बेलडोरान्ट)

यहाँ पर मश्हूर साइंटिस्ट न्युटन (Newton) और मशहूर अंग्रेज़ ज्योतिष (नुजूमी) की एक दोस्त से हुई बातचीत को लिखना बहुत मुनासिब है। न्युटन ने एक माहिर मेकेनिक और अच्छे मिज़ाज वाले आदमी से चाँद तारों के सिस्टम (Solar System) का एक छोटा सा माडल बनाने को कहा। इस माडल में तारों का सेंटर और कई तारे बनाए गए थे। ये तारे छोटे–छोटे गेंद की तरह थे। बिजली के तारों से एक दूसरे को जोड़ रखा था। एक छोटे से हैंडिल से इन सब तारों को अपने–अपने ऑरबिट में चक्कर लगाने के लिए छोड़ दिया जाता था। ये सारे तारे उस केन्द्र के चारो ओर गोलाई से चक्कर लगाते थे।

एक दिन न्युटन अपनी मेज़ के किनारे बैठा हुआ था। यह माडल बनाने वाला उसका मेकेनिक दोस्त भी बैठा हुआ था। इतमें में न्युटन का एक मैटरियल विद्वान दोस्त अचानक आ गया। जिस वक़्त उसकी नज़र इस बनावटी सौर मण्डल पर पड़ी उसकी

ख़ूबसूरती और आर्ट की तारीफ़ किये बिना न रह सका। जब इस छोटे से हैंडिल को घुमाया गया सारे तारों को सेंटर के चारों तरफ़ घूमते दिखाया गया तो वह अपने अचम्भे को छुपा नहीं सका और बोल उठा, ''भाई! इस सुन्दर चीज़ को किसने बनाया है?'' न्युटन ने कहा, ''किसी ने नहीं बनाया। यह तो इत्तेफ़ाक़ से वजूद में आ गया।'' मैटर के जानकार ने कहा, ''मेरे दोस्त, तुमने मेरे सवाल को नहीं समझा। मेरा मतलब यह है कि तुम्हारे सामने रखे हुए सौर मण्डर के माडल को किसने बनाया?'' न्युटन ने कहा, ''मैंने आपका सवाल अच्छी तरह समझ लिया है। इसको किसी मेकेनिक ने नहीं बनाया बल्कि इसके ज़र्रे और पहले मैटरियल इत्तेफ़ाक़ से जमा हो गए और इस रूप में ढल गये।'' माद्दे के समझदार जानकार ने एक हैरत भरी नज़रों से देखा और बोला, ''न्युटन क्या मैं तुम्हें बेवकूफ नज़र आता हूँ कि इस जैसी दुर्लभ ख़ूबसूरत चीज़ के बनाने वाले को मैटर से जोड़ूँ।'' उसी वक़्त न्युटन ने अपनी पढ़ाई छोड़कर किताब बन्द की और मेज़ के किनारे से उठकर अपने दोस्त के पास आकर उसके कांधों पर हाथ रखा और कहा, ''मेरे दोस्त! ये चीज़ जो तुम देख रहे हो और उसके बनाने वाले के बारे में पूछ रहे हो जबकि ये एक छोटे से माडल के अलावा कुछ भी नहीं है। इसका एक ख़ास सिस्टम से बनाया गया है। तुम ये मानने को तैयार नहीं हो कि ये अपने आप बन गया है और ये नहीं मानते कि इसका बनाने वाला समझवाला और जानकार नहीं था। बस पूरा सौर मण्डल अपनी सारी महानता और फ़ैलाव और जटिलता के बावजूद किसी बनाने वाले के बिना अपने आप बन गया है जिसमें माद्दे का काम है और इसकी शुरुआत इत्तेफ़ाक़ी है। मैटर का जानकार न्युटन के जवाब के आगे लाजवाब हो गया। उस पर एक गहरी ख़ामोशी छा गई। और इसी के ज़रिये वह

आर्टिस्ट जो मैटरियलिस्ट था और हक़ीक़त से दूर था, वो भी लाजवाब हो गया।

जीवन मौलिकता का सिद्धान्तः–

आज की साइंस यह फ़ैसला कर चुकी है कि ज़िन्दगी ज़िन्दगी को पैदा करती है। जिन्दों की ज़िन्दगी हमेशा नर–मादा के मेल और औलाद की वजह से बाक़ी और चलती रहने वाली है। आज तक ऐसा कोई ज़िन्दा सेल (Cell) नहीं देखा गया जो बेजान चीज़ से पैदा हुआ हो। हद यह है कि कीड़े मकोड़े और फफून्द तक में अगर उनका पैदा करने वाला ज़िन्दगी देने वाला नहीं है तो वह चाहे जहाँ भी हो किसी दूसरे का पैदा करने वाला नहीं हो सकता।

आज की साइंस कहती है कि इस ज़मीन पर लम्बे समय तक साधारण (Normal) से बहुत ज़्यादा गर्मी की वजह से इस पर ज़िन्दगी के निशान भी नहीं थे। न पेड़ पौधे थे और न नदी, नाले, झरने थे बल्कि ज्वालामुखियों (Volcanoes), पिघली हुई धातों (लावा) से भरी हुई थी। जब ज़मीन की पीठ ठंडी हो गई तब भी लाखों साल तक पानी न होने से इस पर किसी जीव का पता नहीं था। यूँ समझिये कि ज़मीन के तल पर होने वाली हलचल और बदलाव के बीच किसी ज़िन्दा का वजूद नहीं था। तो फिर इस ज़मीन पर ज़िन्दगी क्योंकर आयी?

रिसर्च वालों का ख़याल है धरती की पैदाइश के तीन अरब साल से ज़्यादा बीत जाने के बाद ज़िन्दगी का वजूद हुआ लेकिन उसने अपनी गोद में कितने बरसों तक रखा है और क्या हालत थी ये कुछ मालूम नहीं है। सैकड़ों साल से रिसर्च करने वाले अपनी–अपनी लैब में रिसर्च कर रहे हैं मगर अब तक ज़िन्दगी के राज़ से पर्दे नहीं उठा सके। वे इस पहेली को बूझने

में सफ़ल नहीं हुए।

जर्मनी का मशहूर साइंटिस्ट ब्रेटो बोरगिल (Broto Borgil) अपनी किताब 'दूर के संसार' में लिखता हैः

ज़िन्दगी कितना जादुई नाम है। क्या 'न होने' से 'होना' पैदा हुआ है? क्या पानी वाली चीज़ बेपानी की चीज़ से हुई है? या यहाँ पर किसी परम/Absolute पावर के पैदा करने वाले हाथ का काम है?

कभी ये बात कही जा सकती है कि किसी दूसरे ग्रह, से हमारी ज़मीन पर ज़िन्दगी आ गई हो।

किसी ग्रह (Planet) में घूमते हुए वनस्पति के ज़िन्दा माइक्रोब (Microbes) बहुत ऊँचे उठ गये हों बिखराव के नतीजे में सूरज की किरनों ने अन्तरिक्ष (Space) में ऐसे फेंक दिया हो कि हमारी ज़मीन तक पहुँच गए हों और यहाँ बढ़कर पूरे जीवन का रूप ले लिया हो?

इन कल्पनाओं के होते हुए भी इस पहेली को बूझने में कुछ ठिकाने से आगे बढ़ा नहीं जा सका। इस तरह भी हमारे सौरमण्डल के या अलग के ग्रह (Planet) से जीवन का जलवा हमारे लिए धुन्धला और अनजान है। जिस तरह डायल, सूई आदि को मिला देने से घड़ी चलने नहीं लगती, उसी तरह जब तक जीवन का चला देने वाला और 'ज़िन्दा हो जा' का बोल न होगा, 'जीवन' हो नहीं सकता।

यह सभी जानते हैं कि मैटर ज़िन्दगी का भगवान (जीवन विधाता) नहीं है और किसी भी मैटर वाला ज़र्रे में अकेले ज़िन्दगी के ख़ास गुण नहीं होते। इसलिए यह मान लेना कि माद्दे के ज़र्रे ज़िन्दगी में ढल जाते हैं मुमकिन नहीं है, क्योंकि फिर हमारे सामने ये सवाल आ खड़ा होता है कि ज़िन्दा मैटर नर–मादा के मेल

और जन्म से अलग हटकर किसी और तरह से फिर बार–बार क्यों नहीं होता अपनी गिनती क्यों नहीं बढ़ाता। बेजान पिन्डो रसायनिक क्रिया प्रतिक्रिया (Chemical Actions and Reactions) चलती रहती है फिर भी उसमें रत्तीभर जीवन नहीं होता। अब रही यह बात कि मैटर में जुड़ने मिलने की ओर झुकाव होता है और इसी के बीच जीवन पैदा होता है, पलता, बढ़ता है तो यह जीवन भरी महान बातों की बात है जिसको हम ख़ुद भी महसूस करते हैं, यह कोई जीवन के पैदा होने और उसके कारण को नहीं बताती।

मैटर के ज़र्रों में अपने से कोई इख़्तिलाफ नहीं फिर कुछ ज़र्रे तो दूसरे के साथ जुड़ मिल जाते हैं, वहीं कुछ दूसरों के साथ जुड़ मिल नहीं पाते कुछ ज़र्रे तो ज़िन्दगी पा गये और कुछ ज़िन्दगी से ख़ाली रहे। आख़िर इसकी क्या वजह है? ये फ़र्क़ कहाँ से पैदा हुआ और इसकी भेद की वजह क्या है?

दो या कुछ अलग तत्वों (Elements) से मिलकर जो चीज़ मिलती है उसमें ये बात होती है कि एक चीज़ अपने गुण दूसरे को दे देती है, लेकिन जो गुण अपने में न हो वह क्योंकर दूसरे को दे सकती है। हाँ, जुड़े तत्वों में एक आम गुण पैदा हो जाता है जो किसी भी तरह मिलने वाले अलग–अलग तत्वों के गुणों से अलग नहीं होता। लेकिन जीवन के अपने ख़ास गुण और मैटर के गुण एक जैसे नहीं होते। जीवन रूप ढंग में मैटर से बन्धा टिका है फिर भी उस पर कई तरह से वर है। मगर मैटर पर जब जीवन का शगुन वाला साया पड़ता है तो उसमें चाल ढाल, चाह और आख़िरकार सोच समझ पैदा हो जाती है। इसलिए जीवन को रसायन की क्रिया (Chemical Action) समझना नासमझी है।

एक फ़लसफ़ी कहता है कारख़ानों की तरह जीवन अपनी जगह ठहरा हुआ और बेरूह नीरस सिस्टम का नाम नहीं है बल्कि

एक ऐसा सिस्टम है जिसमें दोहराने की सकत है वह अपने को फिर से नया करने की कुव्वत है। अगर ये बात सही मानी जाए जो बड़ी और ऊँची भी है, तो उसमें एक टीचर सुधारक मौजूद है जो अन्दर से उसे सुधार का रास्ता दिखाता रहता है।

आख़िर कौन 'करने वाला' है जो मैटर को तरह–तरह की शक्लों में क़ायदे के प्लान से सिस्टमेटिक बनाता रहता है, जो बदन के अन्दर अपनी जगह बना लेता है। मैटर के अन्दर अपने बाप–दादा के गुण को किसी को छोड़े बिना और भूलचूक किये बग़ैर बेटों के अन्दर डाल देता है। हम ख़ुद देखते हैं कि ज़िन्दा सेल (Cell) की बनावट में भी ख़ास गुण होते हैं जैसे कमियों को पूरा करना, ख़त्म हुई या टूटी चीज़ को फिर नये सिरे से बना देना, और तरह–तरह का होना और अपनी जाति की हिफ़ाज़त वग़ैरा।

इन्सान के बदन में सेल जिस वक़्त और जैसे काम करना चाहिए वे उस समय वैसे ही ठीक से काम करते हैं। उनके कामों का बटवारा और अपना–अपना काम करना बहुत हैरत वाली बात है। बदन के बढ़ने बनने में ज़रूरत भर बटा हर सेल (Cell) अपनी–अपनी जगह, दिमाग़, दिल, जिगर,गुर्दे और फेफड़े में पहुँच जाता है। बस एक जिस्म के आफ़िस के सिस्टम और इन्तेज़ाम में अपने–अपने तय किये हुए स्थान पर पहुँच जाने के बाद सेल (Cell) ज़िन्दगी के कामों में किसी तरह की कोई चूक नहीं करते वह बे फ़ायदे के फ़ालतू मैटर को ख़त्म कर देते हैं और अपने आयतन (Volume) की पूरी तरह से ठीक हिफ़ाज़त करते हैं।

ज़िन्दा शरीर के अंगों के बनने बढ़ने में सेल के चौंका देने वाले ठीक–ठीक बंटवारे और सही दर्जाबन्दी (Classification) के कारण को अनजाने, नासमझी और मशीनी तरह काम करने वाले से जोड़ना समझ की बहुत बड़ी खोट है। भला सोच की आज़ादी

का मालिक कौन सा आदमी ऐसे तर्क को मानेगा?

इसी लिए हम कहते हैं कि जीवन का सूरज ऊँचे आसमान से जानदार हो सकने वाले मैटर के ऊपर चमकता है और उसको चलता फिरता बना देता है। यह उस जानने वाले, समझ वाले और सारी सकत रखने वाले ख़ुदा का इरादा है जो बेजान मैटर को ज़िन्दगी और उसके सभी ख़ास गुण देकर अपना करम करता है। सच्चाई को समझने वाला जानकार इन्सान चलने वाले और बहने वाले मैटर में ज़िन्दगी के टिकाऊ रिश्ते को देखता है और लगातार पैदा करने वाले के रूप में ख़ुदा का दर्शन करता है।

नेचर में ख़ुदा के जलवे

'पैदा की हुई' चीज़ के रूप में नेचर ख़ुदा की पहचान की सबसे बढ़िया सबसे ज़्यादा उजागर और आम दलील है। यही बदलावों वाला मैटर ख़ुदा की क़ुदरत और उसका सूझबूझ वाला इरादा झलकाता नज़र आता है। इससे साबित होता है कि उसकी क़ुदरत की किरनें मौजूद चीज़ों को मदद और ज़िन्दगी देती हैं। सारी चीज़ें अपने वजूद और तरक़्क़ी के लिए उसी के दिये से फ़ायदा उठाती हैं।

ख़ुदा की पहचान के दो तरीक़े अपनाए जा सकते हैंः एक अक़्ली और दूसरा फ़लसफ़ी जिसके ज़रिये उस परम (Absolute) सत्य के क़रीब तक पहुँचा जा सकता है उस पर विश्वास पक्का हो सकता है और उसकी पहचान पूरी हो सकती है।

दलीलों के घुमाव वाले तरीक़े तो सिर्फ़ बुद्धजीवियों (Intellectuals) के लिए मज़ेदार बन सकते हैं। मगर नेचर की किताब के छिपे हुए राज़ और दुनिया की रंग–रंग की चीज़ें ख़ुद गवाह हैं कि दुनिया के बनने में ऊँची अक़्ल का बीच है। नेचर की यही खुली किताब, संसार का यह फैला सजा–गठा महान सिस्टम

उस एक समझवाले सृजनहार पैदा करने वाले ख़ुदा का पता देता है जिसकी सकत के एक मामूली हिस्से का यह जलवा है। यह उसके मानने का खुला न्योता भी है जो बड़ा साफ़, सादा और फैला हुआ भी है, जहाँ फ़िलासफ़ी की दलीलों की गुत्थियाँ भी नहीं हैं। यह सब जनमानस, विचारक, विद्वान, ख़ास और आम हर एक के उपयोग और फायदे का खुला रास्ता है।

हर शख़्स अपनी हैसियत, सकत और समझ के हिसाब से क़ुदरत की निशानी नेचर में गठन, जोड़, तालमेल, बैलेन्स और जोड़जाड़ में उसके जल्वों को देख और समझ सकता है। उसके हर ज़र्रे में पैदा करने वाले ख़ुदा के होने की मज़बूत दलील मिल सकती है। अगर एक सीधा सादा आदमी भी किसी जानदार के बदन पर ग़ौर करे तो उसके अंगों और हड्डियों के ख़ास गठन और ऊपरी ख़ूबसूरती को देखकर कुछ भी शक न करेगा कि यह बातें तो उसी से हो सकती हैं जो पूरा जानकार, समझ वाला और सकत वाला हो। जब एक फिज़ियोलॉजिस्ट अपनी नज़र से दिल, जिगर, गुर्दे, खाने और पचने के सिस्टम को देखता है तो वह अलग ही अन्दाज़ से ख़ुदा के ज्ञान और सकत के अनन्त निशान देखता है। फ़िज़ियालोजिस्ट या एक आम आदमी की सोच और ध्यान का तरीक़ा एक तो न होगा। विद्वानों ने साइंस ज्ञान की चोटियाँ पार की हैं, नेचर के छुपे हुए राज़ खोलने में सराहने वाले काम किये है और नेचर को जानने समझने के लिए हैरत भरे क़दम उठाये हैं, उन्हें एक आम आदमी के पल्ले में नहीं तौल सकते। वैसे इस मसले में विद्वानों की गहन सोच और आम आदमी की सादी सोच का निचोड़ एक ही है। नेचर के न ख़त्म होने वाले राज़ों को पढ़ने वाली साइन्सों से हर कोई फ़ायदा उठा सकता है। इसके साथ इनमें एक ख़ास बात यह भी है कि दुनिया के अजूबों और

नेचर पर लागू नियम जान लेने से आदमी को पैदा करने वाले की पहचान के साथ–साथ उसके गुण जैसे जानना और बेहद सकत समझ सकता है।

यह मुश्किल जटिल सिस्टम जो अलग–अलग बातों के बीच ठीक–ठीक कान्टेक्ट और तालमेल बनाए रखने का नाम है, जानवरों, पेड़–पौधों, ज़मीनों, आसमानों, पहाड़ों, समन्दरों, ऐटमों के अन्दर उसकी छाई हुई सकत की निशानी है, चाहे शुरुआती वक़्त में पैदा होने के लेहाज़ से देखा जाए या उसकी बनाई हुई चीज़ों में छोटी से लेकर बड़ी चीज़ों तक में जो ज्ञान और सकत की समाई की गयी है उस पर ग़ौर किया जाए, बुनियादी तौर पर साइन्स के एतेबार से मैटर अपने आप बन नहीं सकता है। मार्कसी मत कि ''मैटर की दुनिया हमेशा दिन बदिन बदलती और अपनी ऊँचाई की तरफ बढ़ रही है'' भी साईंस के तराज़ू और नेचर की सच्चाई के ख़िलाफ़ है। बल्कि पत्थरों में होने वाले सब तरह के बदलाव या तो बाहरी ताक़त की वजह से होते हैं या तरह–तरह की चीज़ों के अन्दर के बदलाव का नतीजा होते हैं। पेड़–पौधों के अन्दर होने वाले बदलाव और उनमें बढ़ने और पनपने की बात, बरसात, सूरज की किरनों और ज़मीन से पोषण का नतीजा हैं। इसी तरह जानवरों के संसार में भी यही बात है। इसके अलावा इनमें इरादे से चलना और हिलना होता है। इन चीज़ों का आपसी तालमेल का काम बाहरी होने के साथ–साथ साफ़ और उजागर है। इन चीज़ों में जो गुण और असर समा दिये गये हैं और जो क़ानून और फ़ार्मूले उनके लिए ज़रूरी बनाए गए हैं ये नहीं हो सकता कि उनमें से कोई भी क़ानून के ख़िलाफ़ जा सके।

इन्सान अपने सेन्स से जिन चीज़ों को समझता है उनके अलग–अगल गुण में से एक यह है कि दुनिया में जो चीज़ें हैं वो

भी बदलती रहती हैं और टिकाऊ नहीं हैं। एक मैटर वाली चीज़ अपने समय में या तो बढ़ने की हालत में या फिर घिसने पिटने (Decay) के रास्ते में होती हैं। यानी कोई चीज़ न ठहरी टिकी और न एक हालत पर रहती। हमारे सेन्स की ख़ास बात यह है कि उसकी अपनी हदें होती हैं। छोटे से छोटे ज़र्रे से लेकर बड़ी से बड़ी हर चीज़ समय और जगह (Time & Space) चाहती है बस कुछ चीज़ें लम्बे समय और बड़ी जगह ले लेती हैं, कुछ चीज़ें छोटी जगह और कम समय की होती हैं। इसके अलावा मैटर वाली हर चीज़ अपनी अस्ल और अपने गुणों से सापेक्ष (Relative) होती है। सकत, बड़ाई, शोभा और समझ बल्कि हर गुण दूसरी चीज़ों के लेहाज़ से या सापेक्ष (Relative) होता है।

इसी तरह महसूस होने वाली चीजों का खास गुण, 'शर्त' और 'लगाव' है। हम किसी भी चीज़ को सोचें, वह कुछ दूसरी बातों से लगी बन्धी होगी। इसलिए उसे इन शर्तों की ज़रूरत रहेगी। इस दुनिया में कोई भी ऐसी मैटर की चीज़ नहीं है जो 'अपने' से हो और जिसे दूसरे की परवाह न हो। इसलिए मैटर वाली सारी चीज़ें भिखारी फ़कीर और दरिद्र हैं, उन्हें दूसरों की ज़रूरत रहती है।

सेन्स के ख़िलाफ़ आदमी की अक़्ल और सोच जो ऊपरी पर्दे को पार कर चीज़ों की गहराई में पहुँच जाती है, वह किसी भी तरह ताल्लुक़ अपेक्षा (Relative) वाले कामों, घिरी हुई बदलती हुई और ज़रूरत वाली में घिरी हुई ही चीज़ों की दुनिया को मानने पर तैयार नहीं है। इन्सान की सोच किसी ऐसे को महसूस करती है जो हमेशा रहने वाली सच्चाई हो, जिसे किसी दूसरे की कुछ भी ज़रूरत न हो, जो सारे ज़मानों, युगों और जगहों में हो, हर चीज़ का उसी पर भरोसा हो। क्योंकि पूरा का पूरा संसार, अपने आप

पैदा नहीं हो सकता।

इस तरह पता चलता है कि दुनिया को एक अडिग सच्चाई की ज़रूरत है जो किसी से बन्धा टिका न हो, किसी दूसरे से लगा जुड़ा न हो बल्कि वह सारे लगावों बन्धनों घिरावों के मामलों का रखवाला हो, हर चीज़ को उस सच्चाई की ज़रूरत हो।

बस हर चीज़ में उसका जीवन, समझ, जानकारी, सकत और अथाह सूझबूझ की निशानी मौजूद हो। इन्ही मौजूद चीज़ों को देखकर उस सच्चाई के बारे में जानकारी मिल सके। सच्चाई का चाहने वाला हर समझ वाला इस तरीक़े से पैदा करने वाले के वजूद पर प्रमाण ठहरा सकता है।

मैटर और 'होने' के नियम

वजूद के क़ानून और मैटर के बीच जोड़ का यह मतलब नहीं है कि मैटर आज़ाद और बेपरवाह हो गया बल्कि मैटर से पैदा होने वाली तरह–तरह की चीज़ों और उनके बीच गहरे आपसी तालमेल से पता चलता है कि मैटर ख़ुद अपने होने में कुछ नियम क़ानूनों से बंधा हुआ है क्योंकि 'होने' की बात दो चीज़ों पर टिकी हुई हैः एक मैटर और दूसरे उसका गठन और क़ायदा। इन दोनों में एक मज़बूत क़िस्म का रिश्ता है। इन्हीं दोनों की वजह से तालमेल का यह संसार हुआ है। मैटर को आज़ाद मानने वाले लोग मैटर को ख़ुद अपना पैदा करने वाला और अपने नियम क़ानून बनाने वाला मानते हैं। भला वे लोग ये क्योंकर मान सकते हैं कि हाइड्रोजन, आक्सीजन, इलेक्ट्रान और प्रोट्रान ने ख़ुद ही अपने आप को पैदा कर लिया है और फिर यही चीज़ें दूसरी होने वाली चीज़ों की बुनियाद बनी और फिर इन्हीं चीज़ों ने कुछ ऐसे क़ानून बनाए हैं जो ख़ुद उन चीज़ों पर और सारे मैटर संसार पर राज कर रहे हैं। मैटरियलिस्ट लोगों का ख़याल है कि निचली

चीज़ें ऊँची बड़ी चीज़ों के पैदा होने की बुनियाद हैं। मगर वे लोग ये नहीं सोचते कि मैटर जब अपने पूरे होने की चोटी पर भी अपने को पैदा करने से या अपने ऊपर लागू क़ानूनों को ठुकरा नहीं सकता, तो अपनी गिरावट में ख़ुद को पैदा करने के लिए होने के नियम क्योंकर गढ़ सकता है? इसलिए ये कैसे माना जा सकता है कि निचला मैटर ऊँचे मैटर का पैदा करने वाला या जीवन देने वाला हो सकता है?

आज यह बात तय हो चुकी है माने मक़सद वाले ज़िन्दा तत्वों (Elements) से मिलकर बना सिस्टम या तय प्रोग्राम के आधार पर बाहर से गठे हुए सिस्टम से बनने वाले सिस्टम में पुरौती वाला बदलाव या उलटफेर हो सकता है, पर हर सादा या Compound सिस्टम जिसे बाहरी मदद और मेल की ज़रूरत हो और ख़ुद अपने को बनाने की सकत न रखता हो, वह सारी चीज़ों को पैदा करने वाला क्योंकर हो सकता है? इरादा, चाह, समझ और सकत का मालिक हुए बिना सारे सिस्टम का गठजोड़ भी न तो कुछ नया बना सकता है और न ही पूरी और चालू सकत का गठन कर सकता है।

अधिक सम्भावना होने के नियम (Law of Probability) में यह मानी हुई बात है कि बेक़ायदा चाल सिर्फ़ बिखराव, छिटकाव पैदा करती है और तबाही के क़रीब कर देती है।

यह नियम इस सोच का सख़्ती से विरोध करता है कि दुनिया की शुरुआत अनहोने में हो गई है बल्कि इसको नासमझी और नामुमकिन समझता है। अधिक सम्भावना का नियम दुनिया के हिसाब के लिए एक सही अगुवाई और गहरे प्रोग्राम की ज़रूरत को ज़रूरी बताता है। इस नियम ने 'संसार इत्तेफ़ाक़ से पैदा हुआ है' के मानने वालों के मुँह पर भरपूर तमाचा मारा है अगर कुछ

चीज़ों का जन्म इत्तेफ़ाक़ी मान लें, तो यह बात तो नामुमकिन ही है, लेकिन एक ऐसी सन्तुलन, बैलेन्स वाली और गठी सुडौल दुनिया के होने को अचानक होना माना नहीं जा सकता। 'होने' के सिस्टम में बहुत ज़रा से और सादे बदलावों का होना इसे 'इत्तेफ़ाक़ी' मानने की दलील नहीं है।

अगर नेचर ख़ुद ही जुड़ने और बनने की हालत में थी तो अब बदलाव के कारण में पहल क्यों नहीं होती और आप ही आप होने वाले जड़ीले बदलाव क्यों नहीं दिखाई देते?

आज भी दुनिया में जो अचम्भे वाली बातें होती हैं वह ख़ुद इस सच्चाई की तरफ़ सोचने पर मजबूर करती हैं कि इस हैरतभरे बदलाव के पीछे कोई जानकार और समझदार सुपर पावर मौजूद है जो संसार में 'नई बात' और हैरत भरे सिस्टम को सामने लाती है और पैदा होने वाले संसार को ताज़ा करती है और दुनिया पर कन्ट्रोल और उसके क़ायदे का प्लान करती है। नेचर की करोड़ों ऐसी चीज़ें हैं जिनमें आपसी तालमेल और ज़िन्दगी से उनके रिश्ते की एक ही वजह कही जा सकती है और वह यह है कि इस फैली हुई दुनिया के लिए एक पैदा करने वाला मान ले। मिसाल के तौर पर जिसने इस ज़मीन में अपनी बेहद बेपनाह सकत से तरह–तरह की चीज़ों को ज़िन्दा रखा और हर एक के लिए एक ख़ास प्रोग्राम तैयार किया। यही वजह समझना नेचर की सारी सामने वाली चीज़ों में तालमेल और सन्तुलन (Balance) से मेल खाती है।

इस वजह को न मान कर क्या हम यह ख़याल कर सकते हैं कि पैदा हुई दुनिया की सामने की तरह–तरह की चीज़ों में ये तालमेल और उनका गठन मक़सद से ख़ाली 'इत्तेफ़ाक़' (Co-incidence) से हो गया? यह क्योंकर माना जा सकता है कि मैटर करोड़ों गुणों में उस ख़ुदा के बराबर हो सकता है जो बस असल से जानने

वाला, समझ वाला, सकत वाला, काम बनाने वाला है।

इस दुनिया में अक़्लों को चौंका देने वाली अनोखी बातें हैं, जिसके न्यारे रंगढंग को आदमी समझ नहीं सकता है। अगर यह न होती और दुनिया सिर्फ़ एक कोशिका (Cell) वाले पर टिकी होती तो भी इस ऐसी ओछी जान और उसमें क़ायदो नियम का 'इत्तेफ़ाक़' से होना 'प्राबेबिलिटी' नियम से और चार्ल्स उर्गुई (Charls Urguy) के लगाए हिसाब से भी पूरी तरह आदमी की सोच में नहीं आ सकती।

बैशमिल (Bashmil) कहता है, ''ऐ मेटरियलिस्टों! तुम लोग ज़मीन, सूरज के चक्कर लगाने और पूरे सौर मण्डल (सोलर सिस्टम) को मानते हो और ये भी मानते हो कि गणित (Mathematics) मज़बूत है जिसमें कोई इनमें कमी नहीं है मगर इस पर भी इन बड़े महान, मज़बूत गठे चलन के पीछे किसी काम बनाने वाली शक्ति को नहीं मानते। तुमको तो कहना चाहिए कि इस सौर मण्डल ने अपने को ख़ुद बना लिया है, अपने लिए ऐसा गुथा हुआ सिस्टम बनाया है जिससे वह चलता और घूमता है, ऐसा टिकाऊ और गहरा नियम बनाया है जिससे वह किसी दूसरे से टकरा न सके और इस तेज़ी के चलने में ऐसी आड़ बनायी है जिससे वह किसी ग्रह (Planet) एक दूसरे से टकरा न सकें। मैं अपने निजी तौर से किसी समझवाले आदमी के लिए यह सोच नहीं सकता कि वह ऐसा मानता होगा। यह तो कोई पागल ही मान सकता है।

आपसी बैलेन्स

संसार की सारी चीज़ें अपने अन्दर और बाहर की बनावट में एक मज़बूत क़ायदे के अन्दर हैं। उनकी बनावट और आपसी रिश्ता कुछ इस तरह का है कि हर एक दूसरे को उसके मक़सद और सामने बढ़ने में मदद करता है।

मैटर के ज्ञान का सबसे बड़ा काम यह है कि ज़ाहिर होने वाली बातों और उसकी हालतों की समझ है, लेकिन पैदा की हुई चीज़ों की हक़ीक़त और असलियत की पहचान करवाना इस की पहुँच से बाहर है। एक ऐस्ट्रानामी का विद्वान ज़्यादा से ज़्यादा यह बता सकता है कि अन्तरिक्ष (Space) में करोड़ों पिण्ड मौजूद हैं कुछ ठहरे हुए हैं तो कुछ चलते हुए। यह भी बता सकता है कि गुरुत्वाकर्षण (Gravity) ग्रहों को आपस में टकराने से रोके हुए है उनके बैलेन्स को बनाए हुए है। और यंत्रों और मशीनों के ज़रिये ज़मीन से ग्रहों की दूरी और ज़मीन के घूमने की रफ़्तार और ग्रहों का साइज़ बता सकता है। लेकिन इन सारी रिसर्च का नतीजा सिर्फ सामने की बातों की व्याख्या के अलावा और कुछ नहीं है, क्योंकि गुरुत्वाकर्षण की हक़ीक़त केन्द्रीय पावर की हालत और पैदा होने की बात बताने में मैटर वाली साइंस बेबस है।

साइंटिस्ट तारे ग्रह और मशीन के बारे में तो बताते हैं मगर इनका चलाने वाला क़ौन है यह नहीं जानते। इसीलिए मैटर वाली साइंस उन करोड़ों सच्चाईयों से अन्जान है जो नेचर और आदमी के मन में समो दिये गये हैं। यही इन्सान जो ऐटम के अन्दर तक पहुँच गया है, एक छोटी सी जान के उलझे हुए गुथे राज़ों के आगे बेबस हैं। यूँ कहिए, मैटर वाली साइंस इन राज़ों से पर्दे हटाने और इनसे पार पा जाने में पीछे रह गई है। या यूँ कहा जाए कि मैटर वाले साइंटिस्ट इन राज़ों को खोलने और उनसे पार पा जाने में पीछे रह गया है।

दुनिया की पैदाइश के आश्चर्यों में एक दोहरा बैलेन्स भी है जो ऐसी दो चीज़ों में भी पाया जाता है जो एक दूसरे के साथ वक़्त के हिसाब से भी साझी नहीं हैं। इसका बेहतरीन नमूना माँ और बेटे में देखा जा सकता है। माँ चाहे वह किसी इन्सान की हो

या किसी स्तनधारी (Mammal) की हो, उसके पेट में बच्चा आते ही दूध के हारमोन्स अपना काम शुरु कर देते हैं और बच्चा जैसे–जैसे माँ के पेट में बढ़ता जाता है, हारमोन्स में भी उसी तरह बढ़ोत्तरी होती रहती है और जब बच्चे के पैदा होने का समय आ जाता है तो दूध के रूप में बच्चे का खाना जो उसके जिस्म की ज़रूरतों के हिसाब से होता है तैयार हो जाता है। ये पहले से बना हुआ दूध बच्चे की ताक़त और पाचन में बहुत फायदा करता है। एक छिपे हुए ख़ज़ाने यानी कि माँ की छाती में ये भोजन पहले से आ जाता है। ये ख़ज़ाना बच्चे की पैदाइश से बरसों पहले माँ के जिस्म में रख दिया जाता है। भोजन को आसान बनाने के लिए माँ की छाती की नोक में छोटे–छोटे छेद होते हैं जो बच्चे के मुँह के लिए बहुत उचित होते हैं, क्योंकि बच्चे में अभी इतनी बात नहीं होती कि उसके मुँह में दूध उंडेल दिया जाए बल्कि उन छेदों से चूस–चूस कर बच्चा अपना भोजन पूरा कर लेता है। बच्चा जितना–जितना बढ़ता जाता है उसी लेहाज़ से माँ के दूध में बदलाव पैदा होता जाता है और यही वजह है कि सारे डाक्टरों का फैसला है कि नये पैदा होने वाले बच्चे को उस औरत का दूध बहुत नुक़सान पहुँचाता है जिसके यहाँ बच्चा पैदा हुए एक मुद्दत गुज़र गई हो।

यहाँ पर अपने आप एक सवाल पैदा होता है कि बाद में आने वाले के लिए बहुत पहले से एक दूसरे में उसकी ज़रूरतों का पास रखा गया है। क्या यह काम पहले की सूझबूझ, गहराई और उपाय करने का नतीजा नहीं है? क्या यह सूझबूझ किसी ताक़त वाले, जानने वाले, सामान जुटाने वाले के बिना हो सकता है। क्या यह असीम अथाह सकत की दलील नहीं?

छोटी बड़ी कल मशीनों में जो गहरी सोच और हिसाब

दिखाई देता है यह उसकी बनावट और गठन में लगी सोच समझ और काम का नतीजा है। इन बातों से इस फ़लसफ़े और आम नियम तक पहुँच सकते हैं कि जहाँ कहीं भी हिसाब क़ायदे का कोई सिस्टम बनाया गया हो वहाँ उसके पीछे कोई बुद्धि, सोच और इरादा ज़रूर काम कर रहा है। हमें इस पर ज़रूर ध्यान देना चाहिए। हम उद्योग (Industry) की मशीनों में जो बरीकी देखते हैं, नेचर की चीज़ें और उनके गठन व मेल में उससे कहीं ज़्यादा महान और चौंका देने वाला सिस्टम है। नेचर की महान योजना का एक छोटा सा हिस्सा भी इन्सान की बनायी हुई चीज़ों और उसकी सोच में नहीं मिलता। इसलिए जब हम अपने उद्योग सिस्टम को सोचकर और इरादे का बेशक नतीजा मानते हैं तो क्या नेचर में सोच–समझ, इरादा और ज्ञान नहीं भांप सकते।

मेडिकल साइंस का कमाल

आज मेडिकल साइंस इतनी तरक़्क़ी कर चुकी है कि ज़रूरत पड़ने पर एक इंसान का गुर्दा दूसरे इन्सान के लगा दिया जाता है। मेडिकल साइंस की यह तरक़्क़ी किसी एक डाक्टर के प्रयोगों का नतीजा नहीं है, बल्कि हज़ारों साल की रिसर्च का नतीजा है।

आज के ये कामयाब आप्रेशन पहले के डाक्टर्स और हकीमों की रिसर्च का नतीजा है। पहले के फ़िलॉस्फ़रों हकीमों की कोशिशें उनकी सोच, उनके हज़ारों साल के तजुरबों, प्रयोगों, रिसर्च और डाक्टरी तकनीक की वजह से आज का कामयाब आप्रेशन हो सका है।

क्या ये काम बग़ैर ज्ञान और अक़्ल के हो सकता था? ज़ाहिरी तौर पर जवाब 'नहीं' में मिलेगा, मगर पढ़े लिखे समझदार तेज़ दिमागों की हज़रों साल की मेहनत के बाद ये गुर्दों का

बदलना मुम्किन हो सका। यहाँ एक सवाल करना चाहता हूँ: अगर एक कार का टायर खोल कर उसकी जगह दूसरा टायर लगा दें तो टायरों का बदलना ज़्यादा बड़ा काम है या टायर का बनाना? दोनों कामों में किस काम के लिए ज़्यादा समझ और जानकारी की ज़रूरत है? सीधी सी बात है, टायर बनाना ज़्यादा सूझबूझ और महारत चाहता है। इसी तरह गुर्दों का बदल देना चाहे कितनी ही बड़ी बात हो लेकिन गुर्दों का बनाना उससे कहीं ज़्यादा अहम है।

आप बताइये कि वो कौन सा अक़्लमन्द ये फ़ैसला करेगा कि एक गुर्दे का बदलना हज़ारों साल की कोशिशों का नतीजा है लेकिन ख़ुद गुर्दे का बनाना कोई अहम काम नहीं है, बल्कि ये तो एक नेचुरल बात है। क्या कोई समझदार ये फ़ैसला कर सकता है कि बचकानी समझ रखने वाला भी गुर्दा बना सकता है।

क्या नेचर बनाने के लिए एक योजना करने वाली अक़्ल के होने को मानना एक बेसमझ और बेसूझबूझ वाले और नया पैदा न कर सकने वाले मैटर से अच्छा और अक़्ल का फैसला नहीं है।

बेशक ख़ुदा की सूझबूझ और सकत पर ईमान और अक़्ल और तर्क से कहीं ज़्यादा क़रीब है क्योंकि पैदा करने वाले के जो गुण और ख़ास बातें समझी जा सकती हैं उनको मैटर में नहीं देखा जा सकता है, जैसे योजना, चाह, इरादा।

आइन्सटाइन (Einstein) अपनी किताब 'दुनिया जो मैं देख रहा हूँ' में लिखता है: एक सुधार वाला विद्वान इस संसार के लिए 'कारण' के क़ानून को मानता है लेकिन उस बुद्धजीवी (Intellectual) का मज़हब क्या है? उसका मज़हब हैरानी पैदा करने का मज़हब है जो दुनिया के अजीब और जटिल सिस्टम की वजह से है। ये सिस्टम जिसके कुछ राज़ों का पर्दा कभी–कभी उठता है, उसकी हैसियत यह है कि इन्सान के सारे जतन और गठी हुई सोच की

गिन्ती इस जटिल सिस्टम के आगे हैरान कर देने वाली तस्वीरों की तरह है।

नेचर का महीनपन

ज़रा एक मच्छर पर नज़र डालिए। यह ज़रूरी नहीं कि प्रयोग के हर तरह के उपकरण (Instruments) आपके पास हों। सिर्फ़ एक मामूली सी निगाह डाल कर देखिए तो पता चलेगा कि इस छोटी सी चीज़ में कितना मुश्किल, जटिल और गहरा सिस्टम काम कर रहा है। इस अजीब जान के अन्दर और बाहर सारी ज़रूरी चीज़ें मौजूद हैं, जैसे सांसों का सिलसिला, हज़्म करने का सिस्टम (पाचनतंत्र) ख़ून का दौड़ना, नसों का जाल (Nervous system) वग़ैरा ये सारी चीज़ें इसके अन्दर मौजूद हैं। इसके अन्दर पूरी तरह से एक कारख़ाना मौजूद है, जो बड़ी तेज़ी से और वक़्त पर अपनी ज़रूरतों की चीज़ों का इन्तिज़ाम कर लेता है। आप के बड़े–बड़े रिसर्च सेण्टर कितने हैं? और उनके बनाने में इन्सानी अक़्ल और दौलत ये सारी ताक़तें कितनी ख़र्च हुई हैं? अपने रिसर्च सेण्टर से इस मच्छर के कारख़ाने को मिलाइये तो पता चलेगा कि आपके रिसर्च सेण्टर में वह गहराई, महीनपन, तेज़ी, बिल्कुल नहीं है जो इस मच्छर में है। कितनी रिसर्च के बाद एक मलेरिया के मच्छर के काटने का इलाज ढूँढा गया है। ये सब लोग जानते हैं। अगर आप कोई काम करना चाहें तो उसके लिए हर तरह की सोच और गहरी सूझबूझ की ज़रूरत होती है। फिर जब आप इस बनाई हुई दुनिया की इस गहराई और महारत पर नज़र डालते हैं तो क्या यह ख़ुदा की भरपूर सोच–समझ की दलील नहीं है? अगर हम इस संसार को जिसमें गहराई सूझबूझ हिसाब और सिस्टम की चालढाल है, एक अनजान मैटर का पैदा किया हुआ मान लें, तो क्या यह साइंसी पहचान है? बल्कि हम बेशक

कह सकते हैं कि ये चीज़ें भरपूर सिस्टम का पता देती हैं, न कि इनसे तोड़फोड़ बिखराव और बेकारी का सुबूत मिलता है।

अगर नेचर (प्रकृति) में कोई ज़रा सी कमी नज़र आए तो ये ख़ुदा के पैदा किये हुए में कमी की दलील नहीं है बल्कि असल बात तक हमारी सोच और समझ की पहुँच न होना है और संसार के राज़ों को समझने में हमारी अक़्ल की कमी है। अगर किसी बड़े कारख़ाने में हम जाएँ तो वहाँ के किसी लगे हुए छोटे से पेंच को न समझ पाए, तो हम इन्जीनियर को बेवक़ूफ़ और जाहिल नहीं कह सकते बल्कि ये हमारी कमी है कि हम नहीं समझ सकें कि ये पेंच यहाँ क्यों लगा है। क्या 'इत्तेफ़ाक़' साइंस की कसौटी पर पूरा उतर सकता है? और ज्ञान भी ऐसा कि जहाँ बिल्कुल भी अनजानपन और शक न हो। जैसा मैटरियलिस्ट कहते हैं, कि अपनी हर जिसकी हर चीज़ में नयेपन की भरमार वाले जगत का पैदा करने वाला ऐसा मैटर है जिसमें ज्ञान और इरादे का कोई काम ही नहीं है तो फिर इन्सान अपने मक़सद को पूरा करने के लिए पूरी ज़िन्दगी ज्ञान पाने में पूरा ज़ोर क्यों लगाता है? उसको तो चाहिए कि नेचर से साथ रहकर अपनी जेहालतों को और बढ़ाता रहे। वह सच्चाई जो कामों को बराबर क़ायदे से चला रही है, मक़सद रखती है जो झुठलाया नहीं जा सकता। यह भी नहीं सोचा जा सकता है कि एक तय किये ढंग के कामों और उनके नतीजे (Actions & Reactions) के न ख़त्म होने वाले सिलसिले में किसी अक़्ल का हाथ या उसकी देखरेख नहीं है।

सालों साल के थका देने वाले बॉयोकिमेस्ट्री (Bio-Chemistry) के प्रयोगों और लाखों रिसर्च के बाद ये लोग इस क़ाबिल हुए कि बहुत थोड़े से रिसर्च के नतीजों को बहुत सादा और शुरुआती तरीक़े से मैटर को इस तरह मिला सकें कि जिसमें

पूरी ज़िन्दगी का हल्का सा भी असर नहीं है।

इतनी सी साइंसी जीत का इतना ढिंडोरा पीटा गया और बुद्धजीवियों में इसे बड़ी क़ीमती निगाह से देखा गया, मगर किसी ने ये नहीं कहा कि ये बहुत ही शुरुआती चीज़ अचानक हो गयी है, इसमें किसी तरह की सूझबूझ का हाथ, गहरी प्लानिंग और देखरेख नहीं है। लेकिन यह मैटरियलिस्ट सारी चीज़ों (के पैदा होने) को अन्धे मैटर से जोड़ देते हैं। यह कितनी अजीब बात है। हक़ीक़त में इस तरह की सोच का तरीक़ा इन्सानी अक़्ल पर ज़ुल्म है और सच–दुश्मनी है। ज़रा छापेख़ाने (प्रेस) पर ग़ौर कीजिए, एक–एक हर्फ़ (लेटर) कम्पोज़ करने में कितनी मेहनत और मुश्किलों से काम लेना पड़ता है, मगर जब किताब छप कर आती है और गहरी नज़र से पढ़ी जाती है, तो अक्सर कुछ ग़लतियाँ बाक़ी रह जाती हैं जो मामूली सी भूलचूक की वजह से हो जाती है। अब अगर कोई कम्पोज़ करने वाला अलग–अलग हर्फ़ (लेटर) को क़ायदे से कम्पोज़ करने के बजाए उलटे–सीधे किसी भी हर्फ़ को कहीं भी कम्पोज़ कर दे तो क्या किताब अपने माने और मतलब के एतबार से बग़ैर किसी ग़लती के हमारे सामने आ सकती है। ज़ाहिर है ना मुमकिन है।

इससे भी ज़्यादा कमज़ोर बात उसकी है जो ये कहे कि एक टोटी से लगभग सौ किलो पिघला हुआ ताँबा गिरा और उससे अपने आप लेटर बन गए और एक आँधी चली जिससे ये ख़ानों पर तरतीब से ये अपने आप ही जम गए और इस तरह बिना ग़लती के एक हज़ार पेज की किताब जो गहरे ज्ञान से भरी पड़ी है, अपने आप तैयार हो गई। क्या कोई भी समझ वाला इस बात को मान सकता है?

मैटरियलिस्ट नेचर के इन लेटरों से बनी तरह–तरह की

तस्वीरों के बारे में क्या कहते हैं? सूरज, चाँद, तारों, ग्रहों, नेचर की दूसरी चीज़ों के बारे में इनका कहना क्या है?

एक मश्हूर साइंटिस्ट रदरफोर्ड (Rutherford) कहता हैः– कार्बन, आक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन के ज़र्रों का अचानक इकटठा हो जाना सोच से बाहर है। इसकी मिसाल ऐसी है कि हम ताश के पत्तों को हवा में उड़ा दें और फिर कहें कि ये मेज़ पर अपने आप एक सीरियल से एक साथ आकर जमा हो गये। ये बिल्कुल मुमकिन नहीं है। अगर ये काम इन्सान के लम्बे इतिहास में दो बार एक सेकेण्ड के लिए भी दोहराया जाता तब भी इस में 'अचानक' होना नहीं ही माना जा सकता। क्या संसार के लेटर ऐटम और उसके हिस्सों की अहमियत एक प्रेस के लेटर से कम है? क्या यह बात मानी जा सकती कि ये सधा गठा हुआ सिस्टम, माने के भरे लेटर की किताब (नेचर) की हैरत में डाल देने वाली तसवीरें एक अनजान मैटर ने पैदा की हैं? इस संसार में इतनी महान ताक़त और चमत्कारी सिस्टम का कलाकार है ही नहीं? नहीं, बिल्कुल नहीं, ये सब चीज़ें एक बड़ी परमशक्ति की पैदा की हुई हैं। इस संसार की उस ताक़त और परम पावर को ही हम ख़ुदा कहते हैं।

माद्दे के अन्दर जो क़ुव्वत (Energy) भरी गई है अगर यह सारे संसार पर राज करने वाले 'परम बुद्धि' (कुल अक़्ल) नहीं है तो फिर कौन सी चीज़ है जो मैटर को इतना सिस्टमेटिक और गठा बनाए हुए है? अगर वह ताक़त एक बे अक़्ल है और इरादे 'इच्छा–शक्ति' से ख़ाली है तो यह सब गठा सिस्टम तितर बितर क्यों नहीं हो जाता? और यह सब टकरा क्यों नहीं जाते, मिट क्यों नहीं जाते।

बेशक अल्लाह को मानना सारी चीज़ों के होने के माने देता

है और पूरी दुनिया को मतलब। अक़ल वाले और गहरी सोच वाले लोग अच्छी तरह जानते हैं कि इस संसार में एक सुपर पावर, परम–शक्ति है जो इन सारी मौजूद चीज़ों पर राज करती है और इस सिस्टम को घाट–बाढ़ से बचाए हुए है।

'परम शक्ति' को मानना

पुराने ज़माने में लोग अपनी सवारियों को ख़ुद चलाते थे और उन्हें अपने कन्ट्रोल में रखते थे जैसे अपनी खेतीबाड़ी या इस तरह के और काम ख़ुद अपने हाथों से करते थे मगर आज इन्सान चाँद तक पहुँच गया है आटोमेटिक इलेक्ट्रानिक मशीनें, बग़ैर पायलेट के जहाज़ उसकी पहुँच से बाहर नहीं हैं इर इन्सान जानता है कि ऐसी मशीनें बनाई जा सकती हैं जो हादसों का ख़ुद बख़ुद मुक़ाबला कर सकती हैं चाहे उसका बनाने वाला और चलाने वाला सामने न भी हो।

जब ऐसी बात है तो फिर हमको ये हक़ नहीं है कि हम संसार के पैदा करने वाले का इनकार सिर्फ इसलिए कर दें कि वह हमें दिखाई नहीं देता। ये तो हमारी सोच और समझ की कमी है। इससे ख़ुदा के होने पर कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

अगर ये बहुत ही ओछी मिसाल है, मगर समझाने के लिए पेश कर रहा हूँ। बनाये हुए सेटेलाइट या राकेट ज़मीनी स्टेशनों से चलाये जाते हैं और ज़मीन से उन्हें कन्ट्रोल किया जाता है। देखने वाले चाँद और राकेट को देखते हैं, उन्हें कन्ट्रोल करने वाला दिखाई नहीं देता। कुछ इसी तरह ख़ुदा संसार के सिस्टम को चलाता है मगर हम देख नहीं सकते।

हम जिन सामने की बातों और खुली निशानियों को देखते हैं वे चीज़ें संसार के पैदा करने वाले और आदमी के बनाने वाले की बड़ाई और महानता के निशान हैं। तो क्या ये सब देखने के

बाद भी हम संसार चलाने वाले का इन्कार कर सकते हैं जो सकत वाला, चाह वाला और इस गठे संसार को ढंग से चलाने वाला है।

यह बात ठीक है कि ऐसे का पहचानना, जिसकी मिसाल सोच और समझ की हद में हो ही न और जिसके गुण इन्सानी सोच न बयान कर सकती हो, हमारे लिए नामुमकिन है, क्योंकि हमारी पहुँच महदूद है और अक़्ल इस रास्ते को जगमगाने से भौचक्का हो जाती है। और मैटर की सिमटी हुई चारदीवारी में घुटकर रह जाती है।

हमारे रिश्ते ज़िन्दगी की सामने वाली चीज़ों की हदों में ही घिरे हुए हैं। हमारे ख़याल में जो भी रूप बनता है वह इस संसार की कोई न कोई देखी हुई चीज़ का होता है। लेकिन इसका मतलब ये भी नहीं है कि हम किसी भी तरह उसे पहचान नहीं सकते। जो पहचान हमारे लिए ज़रूरी है, उसमें और हमारे बीच कोई रोक मौजूद नहीं है।

कुछ शक करने वाले लोग प्राकृतिक 'सही अक़्ल' से फिर जाते हैं और नेचर की बातों के आदी हो चुके हैं, वे हर वक़्त ख़ुदा की तरफ से मोजिज़/चमत्कार के होने का रास्ता देखते रहते हैं ताकि लोग मोजिज़े की वजह से ख़ुदा को मानें। मगर ये लोग इस सच्चाई को भूल जाते हैं कि ख़ुदा की तरफ़ से जो भी नया होता दिखायी देता है, वह थोड़े ही समय के बाद आम हो जाता है और प्राकृतिक बन जाता है जिसकी तरफ़ कोई ध्यान भी नहीं करता, हर ज़ाहिर होने वाली चीज़ शुरु में आम न होकर चमत्कार लगती है मगर धीरे–धीरे वह आम और प्राकृतिक (Normal & Natural) हो जाता है। लेकिन वह जो सेन्सों में आ न सके और जो शान, ऐश्वर्य, पाकी और महानता से भरपूर हो वह सदा ही आदमी के मन पर असर डालता है। वह हर ध्यान अपनी तरफ़ खींच लेता है

और इन्सान को ऐसा बना देता है कि उसी का ध्यान करे और हर चीज़ के लिए उसी से आस लगाये। हाँ, झगड़े और घमण्ड की बात तर्क से दूर करके समझ आदमी को सिमटे घेरे में जकड़ देती है, नहीं तो इस संसार की एक–एक चीज़ शेख़ी और अकड़ से ख़ाली अक़्लों को समझाने के लिए बहुत है।

रसायन विज्ञान (Chemistry) में मशहूर विद्वान डाक्टर इल्मर डब्ल्यु म्युरर (Elmer W. Maurer) कहते हैंः मैं केमिकल साइन्टिस्ट होने के नाते से इस बात को मानता हूँ कि ख़ुदा हमेशा संसार की देखभाल और हिफ़ाज़त करता रहता है और नेचर के क़ानून के हमेशा से होने का कारण यही ख़ुदा की देखभाल है। मैं जिस वक़्त अपनी लैब में क़दम रखता हूँ किसी शक और शुब्हे के बग़ैर यह बात मानता हूँ कि कल तक जो नियम क़ानून लगते थे वे आज भी लगते हैं और क़यामत तक लागू रहेंगे नहीं तो लैब में मेरी ज़िन्दगी शक और बेचैनियों की डगमगाती ज़िन्दगी हो जाएगी और हम किसी भी नतीजे तक न पहुँच सकेंगे। मिसाल के तौर पर अगर हम लैब में एक बर्तन में पानी भरकर आग पर रख दें तो जब उसमें उबाल आ जाए तो मुझको मालूम हो जाएगा कि ताप 100^o सेन्टीग्रेड तक पहुँच गया और मुझे किसी थर्मामीटर की ज़रूरत न होगी क्योंकि मैं जानता हूँ कि जब आम (नार्मल) दबाव पर ख़ालिस पानी 100^o सेन्टीग्रेड पर उबलने लगता है। अगर दबाव कम हो तो पानी के उबलने और भाँप बनने के लिए कम गर्मी की ज़रूरत होगी। अगर दबाव ज़्यादा होगा तो टम्प्रेचर भी ज़्यादा होगा। और मैं जब भी चाहता हूँ इस प्रयोग को दुहराता रहता हूँ। केमिस्ट्री के जानकार जब भी दबाव और गर्मी के रिश्ते को अपने रोज़ के कामों में अपनी समझ और होश से इस्तेमाल करेंगे तो उनकी हैरत बढ़ती ही जाएगी। यही हाल नेचर के सारे

क़ानूनों का है। सही समझ फैसला करती है कि यहाँ पर कोई ऐसी कुव्वत ज़रूर मौजूद है जिसने इस क़ानून को बनाया है और वही ख़ुदा है। नेचर के पैदा होने, ठीक ढंग से चलते रहने के सिस्टम का सही जवाब ख़ुदा का मान लेना है।

ख़ुदा को कारण की ज़रूरत नहीं

ख़ुदा होने के लिए किसी भी तरह के कारण की ज़रूरत नहीं है। इस बात में मैटरियल स्कूल वाले लोग कहते हैं कि हमने जब मान लिया कि दुनिया में कोई न कोई एक परम 'है' ख़ुदा है और सारी 'हुई' चीज़ें अपने होने में उसकी मदद चाहती हैं तो ख़ुदा ख़ुद कारण से परे क्यों है, यानी इसके होने का कारण क्या है?

बरट्रेण्ड रशेल (Bertrand Russel) ने लन्दन में एक ग़ैरमज़हबी जलसे में ये कहा था किः मैंने अपनी उम्र की अटठारवीं सीढ़ी में जॉन स्टुवर्ट मिल (John Stuart Mill) की आत्मकथा (Autobiography) पढ़ी तो उसमें मिल के एक जुमले ने मेरी सोच को अपनी तरफ़ ख़ीच लिया और वो जुम्ला ये था कि मेरे बाप ने मेरे सवाल ''मुझको किसने पैदा किया है?'' का जवाब नहीं दिया क्योंकि मैंने फौरन दूसरा सवाल कर दिया था कि फिर ख़ुदा को किसने पैदा किया? ये कहते हुए रसल ने कहा इस सादे से जुमले पर मैं आज भी यह मानता हूँ कि इस जुमले ने पहले परम कारण के बारे में ग़लती से काम लिया है क्योंकि जिस तरह हर चीज़ के लिए वजह ज़रूरी है, उसी तरह ख़ुदा के होने के लिए भी कारण होना चाहिए। अगर कोई चीज़ कारण के बग़ैर वजूद में आ जाए तो वह चीज़ ख़ुदा भी हो सकती है और दुनिया भी। इस तरह से ये सोच ही बेमाने हो जाती है।('Why I am not a Christian— B. Russel)

अफ़सोस ये है कि बहुत से ख़ुदा को मानने वाले पश्चिमी फ़लसफ़ी इस मसले को हल नहीं कर सके। अंग्रेज़ फ्लास्फ़र

हरबर्ट स्पेन्सर (Herbert Spencer) इस बारे में कहता हैः– मुश्किल ये है कि इन्सानी अक़्ल एक तरफ तो हर चीज़ का कारण ढूँढती है और दूसरी तरफ चलते रहने के सिलसिले को नही मानती है और बे कारण के कारण को भी नहीं मानती और न समझती है, जैसा कि पादरी जब बच्चे को पढ़ाता है और कहता है कि दुनिया को ख़ुदा ने पैदा किया है और बच्चा पूछता है कि ख़ुदा को किसने पैदा किया?

और दूसरी जगह लिखता है दहरियों (नास्तिकों) की कोशिश ये यह मनवा लेने की होती है कि दुनिया बग़ैर कारण के अपने से हो गई और हमेशा से है लेकिन हम किसी ऐसी चीज़ को मान नहीं सकते जिसकी कोई शुरुआत और कोई कारण न हो। ख़ुदा को मानने वाला इससे एक क़दम पीछे हटकर कहता है ख़ुदा ने ही दुनिया को पैदा किया है। जब बच्चा सवाल करता है कि ख़ुदा को किसने पैदा किया? तो ये लाजवाब हो जाता है।

हम यही एतेराज़ मैटरियलिस्टों पर करते है कि हम अगर कारण के सिलसिले की शुरुआत ढूँढें तो कारण के शुरुआती सिरे तक पहुँचेंगे। हम ये नहीं कहते कि कारण का शुरुआती सिरा ही ख़ुदा है बल्कि मैटर है। अब तुम बताओ पहले मैटर को किसने पैदा किया? तुम लोग कारण होने के क़ानून को मानते हो, अब बताओ पहले मैटर का कारण कहाँ से आया? तुम शुरुआत के मैटर–ताक़त की बात कहते हो, तो बताओ इस मैटर–ताक़त को शुरु करने वाला कौन है? मैटरियलिस्ट इस कारण के सिलसिले को वहाँ तक ले जाते हुए कि जिसकी कोई शुरुआत नहीं (अनादि) और न ही (अनन्त)। वे यही जवाब दे सकते हैं कि मैटर हमेशा से है और Time से घिरा नहीं है जिसकी कोई शुरुआत नहीं है। वह मैटर 'पैदा किया गया' नहीं

है जो अपने अन्दर से ही अपने आप हो गया।

इसका मतलब है कि मैटरियलिस्ट 'हमेशा से होने' को मान गये। उनका मानना होगा कि सारी चीज़ें हमेशा से रहने वाले मैटर से हैं और उसकी नेचर से पैदा हुई हैं, इसको किसी पैदा करने वाले की ज़रूरत नहीं।

रसेल (Russel) के जिस भाषण की बात पहले की जा चुकी है उसमें उसने कहा है कि हमारे पास ऐसी कोई दलील नहीं है जिससे ये पता चल सके कि कभी दुनिया की शुरुआत हुई। यह समझना कि हर चीज़ की शुरुआत का होना ज़रूरी है, हमारी सोच समझ की ग़रीबी है।

जिस तरह रसेल मैटर को हमेशा का मानते हैं उसी तरह ख़ुदा के मानने वाले भी ख़ुदा को हमेशा का मानते हैं, बस फ़र्क इतना है कि– ख़ुदा के मानने वाले पहले कारण को सब समझने वाला और सब कर सकने वाला, इरादे वाला और काम चला लेने वाला मानते हैं और मैटरियलिस्ट लोग पहले कारण को समझ और बग़ैर इरादे का मानते हैं इसलिए अगर ख़ुदा को न भी माना जाए तब भी शक अपनी जगह पर रह जाता है।

मैटर चाल और बेचैनी का कारण है इसका चलना अपने अन्दर का है और यह चंचल है। हमेशा वाली चीज़ अपने अन्दर की चाल के साथ हो ही नहीं सकती। एक टिकाऊ और ठहराव वाली चीज़ बदलाव और चाल को अपना नहीं सकती है।

मार्कसिस्ट (Marxist) ख़ुद इस बात को मानते हैं कि मैटर अपने अन्दर ही अपना उलटा पालता है। फिर इसको क्योंकर ये लोग 'हमेशा से है', मानते हैं। 'हमेशा होने' की बात के माने निजी ठहराव और 'उलटे' (विलोम) की रोक है। मैटर यूँ तो अपने आप में होनहारी और सकत रखता है, मुर्दा या ज़िन्दा होता है फिर भी

'हमेशा होने' के गुण पर मैटर ठीक नहीं उतरता, न ही अपने वजूद में, न अपनी बनावट में। लेकिन ख़ुदा को मानने वाले जब एक पैदा करने वाले के वजूद को मानते हैं तो उनका ये दावा उस वजूद के लिए है जो ठहराव और अकेलेपन को अपनाये है और मैटर के गुणों से बिल्कुल ही अलग है। उनका दावा मैटर के लिए नहीं है जो अपने से बाक़ी रह नहीं सकता और न ही हमेशा से है और हमेशा रह सकता है, जो Relativity और चाल से अलग नहीं होता और 'काम से पूरा होने' और परम (Absolute) होने से दूर है।

हर चीज़ को कारण की ज़रूरत है

हम जो ये कहते हैं कि किसी चीज़ का वजूद कारण के बग़ैर नहीं हो सकता, इसका मतलब वो अधूरा मौजूद है जिसका होना और रह जाना कारण की वजह से है। ये नियम हर चीज़ के लिए नहीं है। अगर कोई चीज़ किसी अधूरेपन या सिमटावे से दूर हो और ख़ुद वजूद में सच्चा हो, तो उसके लिए ये नियम नहीं है।

शुरुआती कारण सिर्फ इसलिए शुरुआती कारण है कि उसका वजूद पूरा है, हदों में घिरा हुआ नहीं है और कोई दूसरा उस पर असर करने वाला नहीं है बल्कि वह बग़ैर शर्त के वजूद है, हर किसी के रिश्तों और हदों से पाक है और बदलाव से दूर है।

ख़ुदा के 'पहले कारण' होने और उसी के साथ अपने कारण से बेपरवाह होने का ये मतलब नहीं कि कारण की ज़रूरत की हद तक तो वह सारी चीज़ों से बराबरी रखता है मगर इस क़ानून से छूट देकर या ख़ास होने की वजह से उसे अलग कर दिया गया है, क्योंकि वह किसी कारण का नतीजा ही नहीं है कि उसे कारण की ज़रूरत हो और न वह कोई होनी चीज़ है जिसे अपने बनाने वाले की ज़रूरत हो, बल्कि सारी चीज़ें और होनी बातें

उसी हमेशा से हमेशा तक रहने वाली ज़ात की क़ुदरत से ही हुई हैं। कारण का नियम उन्हीं के लिए है जो पहले न हों।

इसी तरह पहले या परम कारण का मतलब यह नहीं कि उस ख़ुदा ने अपने आप को पैदा किया है और वह ख़ुद ही अपना कारण है। नतीजे के लिए कारण की ज़रूरत पहले वाली चीज़ के प्रकार के हिसाब से होती है। किसी भी चीज़ को अपने होने के लिए कारण की ज़रूरत नहीं होती, बल्कि कारण की ज़रूरत इसलिए होती है कि उसका होना दूसरे से जुड़ा हुआ होता है, वरना वह चीज़ जिसके स्वभाव में 'शर्त' से लगना नहीं होता और अपने में पूरी तरह आज़ाद होती है वह 'इत्तेफ़ाक़' के नियम से बिल्कुल अलग होती है। अगर कोई अपने में पूरे होने और किसी ज़रूरत के न होने की वजह से कारण की ज़रूरत न रखता हो, तो इसका मतलब है कि किसी 'कारण' ने उसे ऐसा नहीं किया और न ही कोई कारण उसके बीच पड़ सकता है। पहले कारण की 'है' उसकी अपनी निजी है। उसके ख़िलाफ़ दूसरी चीज़ों का 'होना' किसी का दिया हुआ उधारी होता है। 'न' से निकलकर 'होने' में आने ही को कारण की ज़रूरत होती है।

ये क्योंकर सोचा जा सकता है कि ख़ुदा के होने को मानना अपनी ही बात की काट के जाल में फंस जाना है। अगर ऐसा है तो क्या किसी नतीजे का कारण न मानना ऐसी ही काट में फंस जाना नहीं है? हम एक ऐसी दुनिया में जीवन बिता रहे हैं जहाँ की हर चीज़ बदलाव और मिटने में है। मिटना और दबाव इस जग की हर चीज़ का भाग्य हो चुका है। पराये पर भरोसा और दूसरों से भीख हमारे मन की गहराइयों में जड़ पकड़ चुकी है। ज़मीन और आसमान की हर एक चीज़ में ज़रूरतों से बन्धनों का चलन है। और ये ज़रूरत हमें पूरी तरह घेरे हुए है क्योंकि

हमारा वजूद हमेशा से नहीं है, न सदा रहने वाला है और न ही हमारा अपना निजी है। एक समय था जब हम न थे और हमको वजूद के कपड़े पहनाए गए और हम 'है' हो गए और बेशक ऐसे की पैदाइश ज़िन्दगी देने वाली ज़ात से रिश्ते के बग़ैर नहीं हो सकती है।

ये और बात है कि जो 'हमेशा से' है और 'हमेशा' रहने वाला है, जिसका वजूद निजी है, जिसकी न शुरुआत है न आख़िर (अन्त), उसके कारण की ज़रूरत नहीं है।

फ़लसफ़े (Philosophy) में कारण के माने ऐसी चीज़ के हैं जो किसी चीज़ के 'न होने' से 'है' में लाये और उसे 'होने' का पहनावा पहनाए और मैटर वाले कारणों में इसका कुछ बस नहीं होता है। माद्दे का काम सिर्फ़ इतना है कि पहली सूरत ख़त्म होने के बाद नई सूरत के लेने पर तैयार कराये। ये सही है कि मैटर वाली चीज़ अपने निजी बदलाव की वजह से हर पल नया रूप पाती है जो पहले से अलग होता है। लेकिन यह निजी चंचलता और लगातार 'होना' और मिटना सदा ही किसी चंचलता पैदा करने वाले हाथ का बन्धवा बनाये रखता है। यही चंचलता पैदा करने वाला हाथ ही संसार को जड़ से उगाने वाला और 'है' के क़ाफ़ले को आगे बढ़ाने वाला है।

कारणों की जंज़ीर कहाँ तक?

मैटरियलिस्ट हक़ीक़त का इन्कार करें और ग़लतफहमियों का सहारा लेकर ये कह सकते हैं कि हम कारण के सिलसिले को किसी जगह पर रोकते नहीं हैं और अनन्त (जिसकी कोई अन्त आख़िर ही न हो उस हद) तक सिलसिला बाक़ी रखते हैं। इस ग़लतफ़हमी का जवाब इस तरह दिया जा सकता हैः इस पैदा हुए संसार को ऐसा समझना वही 'कारण–नतीजा' के चलन को मानना

है, क्योंकि हर एक का अपने में 'नतीजा' होने का मतलब 'खोया हुआ' वजूद होना है। ऊपर वाले कारण के बग़ैर इनमें से कोई 'वजूद का प्रभु/बनाने वाला नहीं है। इसलिए इस सिलसिले के हिस्से अलग–अलग 'बन्धुवा' 'भिखारी' और 'प्रजा' होंगे, अपनी ज़रूरतों के लिए दूसरों के पर टिके होंगे। वे (बग़ैर कारण) 'न होने' से 'होने' तक की तरफ़ कैसे आएंगे और ख़ुद उन होनी और बेबस चीज़ों का वजूद जो कहाँ से हुआ? और अनन्त 'न होने' के इकटठा होने से इतनी बड़ी सारी चीज़ों का जमावड़ा क्योंकर हुआ? क्या मौत के अनगिनत कारणों से ज़िन्दगी पैदा होती है?

न ख़त्म होने वाला यह सिलसिला चाहे जितना आगे बढ़ जाए ये 'नतीजे' की ही कन्डीशन में रहेगा। ये बात तय है कि कोई भी सिलसिला जब तक अपने में टिकाऊ और ज़रूरत से आज़ाद न हो यानी ख़ुदा तक ख़त्म न होता हो वो कभी मौजूद हो ही नहीं सकता। सिर्फ़ ख़ुदा का वजूद ही एक ऐसा कारण है जो कारण के पैदा करने वाले के बग़ैर है। और मौजूद चीज़ों के सिस्टम का कोई सही मतलब कभी भी नहीं निकाला जा सकता है, जब तक एक ऐसे मौजूद को न माना जाए जो बग़ैर किसी शर्त के हो और वही कारणों का कारण हो और सारी चीज़ों के होने की बुनियाद हो। मान लीजिए जंग के मैदान में फौजियों की हर टुकड़ी हमला करने से इन्कार कर दे इस तरह कि जब जनरल किसी टुकड़ी को हमला करने का हुक्म दे तो वह कहे जब तक वह टुकड़ी हमला न करेगी हम हमला न करेंगे और यही जवाब दूसरी टुकड़ी भी दे तो क्या हमला हो सकता है? हरगिज़ नहीं। क्योंकि हर एक ने दूसरे की शर्त लगा रखी है और ज़ाहिर सी बात है कि शर्त की बुनियाद पर हमला तब ही हो सकता है जब शर्त पूरी हो जाए और शर्त पूरी नहीं हो सकती तो हमला भी हो

नहीं सकता।

इसी तरह अगर कारण के सिलसिले को न ख़त्म होने वाला मान लिया जाए, तो वही बात उठेगी। हर एक का वजूद दूसरे के वजूद से जुड़ा है और दूसरा भी अपनी जगह तीसरे की शर्त में बंधा हुआ है। यानी हर एक अपनी जगह से यह बात उठा रहा है कि जब तक वह दूसरा मौजूद न होगा मैं भी 'होने' का पहनावा न पहनुँगा। बस ये सब एक दूसरे की शर्त में बंधे हुए हैं। पहली वाली शर्त का पता नहीं चल सकता, इसलिए उनमें से कोई भी मौजूद नहीं हो सकता। लेकिन मौजूद चीज़ों से भरे पुरे संसार को देख कर यह मानना पड़ता है कि इस में एक ऐसा कारण ज़रूर है जो किसी कारण के बग़ैर है या एक ऐसी शर्त है जो दूसरी शर्तों से जुड़ी हुई नहीं है।

वह पहला कारण अपने में ज़रूरतों से और सारी 'होने' वाली चीज़ों से पूरी तरह आज़ाद है, निराली अनोखी होनी अनहोनी बातों को कर सकता है, हर चीज़ का पैदा करने और बनाने वाला है। जब चाहा जो चाहा पैदा किया। वही ज़िन्दगी के सारे अंशों/टुकड़ों का पैदा करने वाला है, वह अपने मक़सद के लिए जीवन के महान सिस्टम को बाक़ी रखे हुए है।

मैटरियलिस्ट लोग ये चाहते हैं कि संसार के होने को बहुत पुराना और सदा का मान कर इस मसले से हाथ झाड़ लिया जाया जाए कि संसार को एक पैदा करने वाले की ज़रूरत है और इस तरह संसार को नियमित (Regular) ठहराव दे दे। संसार को पुराना मानकर भी वह अपनी मर्ज़ी का नतीजा नहीं निकाल सकते हैं। उन लोगों का ख़याल है कि संसार को अपनी शुरुआत में पैदा करने वाले की ज़रूरत है, जब पैदा हो गया तो अब उसी पैदा करने वाले की ज़रूरत नहीं है। पैदा होने के बाद पैदा की हुई

चीज़ और पैदा करने वाला दो अलग–अलग ठहरी बातें होंगी एक का दूसरे से कोई मेल न होगा। इसी लिए उनकी सारी कोशिशें ये हैं कि संसार के वजूद के लिए पहली ज़रूरत को ख़त्म कर दिया जाए और इसी तरह वो अपनी कमसमझी में पैदा होने वाले और पैदा करने वाले के मसले का हल ढूँढ निकालेंगे और ये साबित करेंगे कि संसार हमेशा से है जिसे ख़ुदा की ज़रूरत नहीं है।

मगर ऐसा नहीं है बल्कि पैदा होने के बाद से संसार और उसका हर ज़र्रा 'सदा रहने वाला' न होकर हर समय हादिस (बाद में होने वाला, बदलने और मिटने वाला) है। ऐसे ज़र्रों से बनने वाली इकाई भी वैसी ही होगी। इस तरह संसार को पैदाइश के लिए जो शुरु में ज़रूरी था वह आज तक भी और आगे भी ज़रूरी होगा। संसार को हमेशा से मानकर उसको ख़ुदा से अलग करके अपनें में ठहरा माना नहीं जा सकता है।

संसार सदा से नहीं है, सदा का नहीं है।

जिस तरह इन्सान समय बीतने से अपनी सकत में कमी का एहसास करता है और एक दिन उस का दीप बुझ जाता है, उसी तरह यह संसार भी धीरे–धीरे मिट जाएगा।

दुनिया मिट जाने वाली है इसलिए मैटर को हमेशा रहने वाला तत्व (Element) माना नहीं जा सकता है। संसार को भी पैदा किया हुआ और हमेशा न रहने वाली मानना ज़रूरी है।

क्योंकि संसार में पायी जाने वाली ताक़तें (Energy) एक तरह की इकाइ की ओर बढ़ रही हैं। ज़र्रे ताक़तों में बदल रहे हैं। चंचल इनर्जी ठहरी और 'बेचाल' इनर्जी में बदल रही है। जब ताक़तें ऐसी ताक़तों में बदल जाएंगी 'जो अपनी तरह की एक' के बराबर हैं तो उनके लिए इसके सिवा कोई रास्ता नहीं होगा कि

वह शान्ति और परम शान्ति में डूब जाएं। इसीलिए माद्दे को ज़ात की तरह या हमेशा से हमेशा तक रहने वाला तत्व (Element) नहीं माना जा सकता, बल्कि मजबूरी में दुनिया को मख़्लूक़ (पैदा की हुई) मानना होगा।

तापगति के नियमों (Principles of Thermodynamics) में दूसरा नियम, Entropy या 'गर्मी की इनर्जी का घटना' हमें बताता है कि चाहे संसार के पैदा होने की तारीख़ न तय की जा सके मगर यह तय है कि इसकी एक शुरुआत है, क्योंकि संसार की गर्मी धीरे–धीरे कम होती जा रही है, जिस तरह भट्टी में रखा लोहा लाल हो गया हो उसे बाहर निकालने पर वह धीरे–धीरे बाहर की गर्मी के बराबर हो जाता है।

अगर संसार का कोई केन्द्रबिन्दु न होता तो सारे ऐटम बहुत पहले इनर्जी में बदल चुके होते और संसार की गर्मी न जाने कब की ख़त्म हो चुकी होती? क्योंकि लगातार मिटने वाले इनर्जी में बदलता रहता है बदलाव से यह इनर्जी अपनी पहली शक्ल मैटर में कभी नहीं पलटती।

इस दूसरे नियम से इस्तेमाल हो सकने वाली इनर्जी के ख़त्म होने के बाद फिर ऐक्शन (Action) और रिएक्शन (Reaction) नहीं होते। जब ये मालूम है कि ये एक्शन–रिएक्शन होते रहते हैं, जीवन चलता रहता है और सूरज की वह किरनें जो रोज़ तीन लाख टन गर्मी निकालता रहता है, यह सब एक ढर्रे पर बे घटे–बढ़े होता रहता है, तो इससे साबित हो जाता है कि संसार सदा से नहीं है, कभी इसकी शुरुआत हुई है।

तारों और ग्रहों और सूरज का मिटना हर चीज़ के मिटने वाली होने की दलील है। इसी तरह मौत और ज़िन्दगी का चलता हुआ ढब भी सबके मिटने का पता देता है। इस से मिटने वाली इस

दुनिया के अपने अन्त की तरफ़ बढ़ने का पता भी मिलता है।

इसी तरह हम देखते हैं कि भौतिक विज्ञान (Physical Science) के जानकार मैटर के हमेशा से होने से इनकार करके मैटर के संसार को सदा से न होकर मानते हुए इसकी भी गवाही देते हैं कि यह एक समय पैदा हुआ। फिर इस संसार को पैदा होने के लिए मैटर से परे (Metaphysical) अलग सकत की ज़रूरत थी, क्योंकि शुरुआत में सारी चीज़ें बराबर थीं उनमें कोई फ़र्क़ नहीं था तो संसार को ज़िन्दगी देने में कोई बाहरी ताक़त ज़रूर थी, वरना एक ऐसा घेरा जिसमें चलने की कोई ताक़त नहीं थी जिस पर ठहराव, बल्कि पूरी शन्ति छायी हुई थी वह क्योंकर चलने लगा? मानना पड़ेगा कोई बाहरी ताक़त थी जिसने इसके चलने का उद्घाटन किया।

प्रोफेसर ''रवाया'' लिखते हैं कि आज का मैटरियलिस्ट दावा करता है कि एक बड़े भयानक विस्फोट (Big Bang) की वजह से संसार की शुरुआत हुई है। अगर ऐसा है तो ये मानना पड़ेगा कि इससे पहले विस्फोट का ईंधन, और असल माहौल मौजूद था जिससे ये अनोखा हादसा हुआ है'। यानी ये फिर मानना ज़रूरी हो जाएगा कि पहला मैटर और संसार की सारी मौजूद चीज़ें जैसे प्रकाश, करोड़ों तारे सब आकाशगंगाएं (Galaxies) पहले मौजूद थे। ये एक सच्चाई है जिसका साइंस, सोच, आत्मा और गणित (Maths) के हिसाब से इन्कार नहीं किया जा सकता।

लेकिन सवाल ये है कि स्पेस में ये फैले हुए ज़र्रे इस विस्फोट के नतीजे में क्योंकर एक जिस्म में दाख़िल हो गए? ये एक जिस्म आया कहाँ से? और क्योंकर कुछ पर कुछ ढेर हो गए?

इसीलिए जो लोग संसार की अच्छी तरह पहचान रखते हैं वे कहते हैं संसार की कोई चीज़ ठहरी हुई या जाम नहीं है, हर

चीज़ बदलाव की हालत में है।

इसी तरह रूह/आत्मा पर ग़ौर किये बग़ैर मैटर की परिभाषा (Defination) नहीं की जा सकती है। ज़मीन के तल पर ज़िन्दगी का कुछ भी चलना किसी सकत और समझ रखने वाले का दिया हुआ है जिसको सिर्फ़ 'इत्तेफ़ाक़' कहा ही नहीं जा सकता। मगर इन गहरी बातों की अक़्ली और मानने वाली व्यवस्था, ''आइन्सटाइन (Einstein) के कहने के हिसाब से, ख़ुदा के होने को माने बग़ैर मुमकिन नहीं है।''

(दो हज़ार दानिश्मन्द दर जुस्तुजुए ख़ुदाए बुज़ुर्ग)

मेकेनिक्स (Mechanics) कहता हैः जो जिस्म ठहरा हुआ है वह ठहरा हुआ ही रहेगा अगर उसमे वह हिलता है तो वह किसी ऐसी बाहरी ताक़त की वजह से है जो इस जिस्म से अलग हो। हमारे मैटर की दुनिया में ये असली और भरोसे वाला क़ानून है। यही वजह है कि हम किसी भी तरह 'इत्तेफ़ाक़ से होने' की ओर झुकाव को नहीं अपनाते। इसी मेकानिकी क़ायदे की बुनियाद पर एक ऐसी क़ुव्वत का मानना ज़रूरी है जो ख़ुद तो मैटर न हो लेकिन मैटर को पैदा करे और उसको ताक़त और चाल दे ताकि तरह–तरह की सूरत का वजूद हो। फ़िज़िक्स के ज्ञानी फ्रेंक अलेन (Frank Allen) ने ख़ुदा के वजूद पर एक ख़ूबसूरत दलील दी है। वह कहता है कि बहुत से लोगों ने इस बात को साबित करने की कोशिश की है कि मैटर की दुनिया को किसी पैदा करने वाले की ज़रूरत नहीं है। लेकिन जो बात झुठलायी नहीं जा सकती है वो यह है कि संसार हरहाल में मौजूद है।

अब इस संसार का होना चार तरह से हो सकता हैः–

1– संसार को सिर्फ़ एक कल्पना या सपना माना जाए।

2– संसार किसी पैदा करने वाले के बिना आप ही आप पैदा

हो गया।

3– संसार हमेशा से है, इसकी कोई शुरुआत नहीं है।

4– संसार पैदा किया हुआ है, सदा से नहीं है और अपने में नया बनाया हुआ है।

पहली सूरत का मतलब है कि संसार कोई चीज़ ही नहीं है जिसको समझने की कोशिश की जाए। संसार बस पराभौतिक (Methaphysical) है। यह भी एक तरह ख़्वाब और ख़याल से ज़्यादा कुछ भी नहीं है। इस पहली सूरत की बुनियाद पर हमारे लिए ये मिसाल हो सकती है कि कल्पना की बहुत सी रेलें ख़याली मुसाफ़िरों से भरी हुई ख़याली नहरों पर बने ऐसे पुलों से जो हक़ीक़त में न हों, जा रही हैं।

दूसरी सूरत भी पहली सूरत की तरह बेमतलब और नामुमकिन है और किसी भी तरह से ध्यान देने के क़ाबिल नहीं है।

अब रही तीसरी सूरत उसमें 'पैदाइश' वाले ख़याल की एक बात मिलती है। वह ये है कि या तो दोनों से मिला हुआ बेजान मैटर या एक पैदा करने वाला, सदा से है। उन दोनो ख़यालों में किसी में कोई ज़्यादा कठिनाई नहीं है दोनो बराबर हैं, मगर थर्मो डायनामिक्स (Thermo Dynamics) के क़ानून ने साबित कर दिया है कि संसार सारी चीज़ों की एक जैसी गर्मी की तरफ़ बढ़ता जा रहा है जहाँ इनर्जी किसी काम की नहीं रहती। ऐसे में इस धरती पर ज़िन्दगी मुशिकल हो जाएगी।

अगर संसार की कोई शुरुआत नहीं है और ये हमेशा से है, तो इस पर इससे पहले से ही ऐसी मौत और बेजानपन की हालत होना चाहिए थी।

चमकता गर्म सूरज, जगमगाते तारे, जीती जागती ज़मीन इस बात के बेहतरीन गवाह हैं कि जब कुछ नहीं था, उसके बाद

संसार पैदा हुआ और इसकी शुरुआत समय के एक ख़ास घड़ी में हुयी है। इसलिए हर हाल में दुनिया 'पैदा की हुई' होगी और इसके लिए एक सदा के रहने वाले, समझ और सकत वाले सृजनहार (पैदा करने वाले) को मानना होगा जिसने इस संसार को रचा, 'नहीं' से 'है' किया।

इन्सान की बेबसी का पिंजड़ा

अगर इन्सान थोड़ी सी गहराई में जाकर सोचे और खुली आँखों से सच्चाइयों पर ग़ौर करे तो वह जान जाएगा कि बेहद फैले संसार के सामने हमारी ताक़त बहुत कम बल्कि न होने के बराबर है। लगातार अनथक कोशिशों के बाद दुनिया के बारे में इन्सानी जानकारी ज़ीरो के बराबर है। यह माना कि साइंस और इल्म ने बहुत तरक़्क़ी कर ली है, लेकिन हमारा अनजाना अनबूझा सागर अथाह है। हमारी जानकारियाँ इसके आगे एक बूँद से ज़्यादा नहीं हैं। शायद हज़ारों बल्कि लाखों तरह के लोग इस दुनिया में आकर चले गये और अभी न जाने कितनी पीढ़ियाँ आएंगी लेकिन हमको उनके बारे में कुछ भी नहीं मालूम।

आज के विद्वान जिन चीज़ों को ज्ञान साइंस समझ रहे हैं और उन्हें हक़ीक़तों को जानने का आईना समझ रहे हैं, वे कुछ ऐसे क़ानून है जो दुनिया के सिर्फ किसी कोने के बारे में हैं। इन सारी खोजबीन, रिसर्च और प्रयोगों (Experiments) का नतीजा सिर्फ़ एक छोटे से साफ़ बिन्दु (Point) का जान लेना है। इसे यूँ समझिये कि एक मैदान के बीच में जिसकी हद न मालूम हो, उसमें अंधेरी रात में एक छोटी सी मोमबत्ती का बहुत मद्धम उजाला हो, ऐसे में जितनी दूर की जानकारी हो सकती है, उतनी ही इस पूरी दुनिया में इन्सान की जानकारी की हैसियत है।

अगर हम खरबों साल पीछे चले जाएं तो शक और धुन्ध की काली घटा छायी होगी। दुनिया की बड़ाई के सामने इन्सान की कमज़ोरी का अन्दाज़ा लगाइये। शायद हमारी उम्र दुनिया के मुक़ाबले में एक पल से ज़्यादा न हो। इस हाल में हम 'नहीं' के सुनसान बन में पहुँचे तो इस फैले अंधेरे में इन्सान की कोई ख़ैर ख़बर भी नहीं मिलेगी। बात की बात यह है कि हमें न अपनी दुनिया के फ़ेरे की शुरुआत के बारे में, न ही आगे की जानकारी है।

इसके अलावा हम तो इस बात के सच होने की गवाही नहीं दे सकते कि ज़िन्दगी सिर्फ़ इसी ज़मीन तक है (या बाहर भी कहीं है) क्योंकि आज के बहुत से जानकार साइंटिस्ट ज़िन्दगी को बहुत फैली हुई मानते हैं करोड़ों अनगिनत ग्रह जिनको हम बड़ी–बड़ी दूरबीनों (Telescope) से ही देख सकते हैं चींटी के बराबर दिखाई देते हैं।

मशहूर साइन्टिस्ट कैमिली फ्लैमिरियोन (Cammilee Flammarion) खगोलशास्त्र (Astronomy) पर अपनी किताब में इस महान संसार की तरफ़ अपने एक ख़याली (काल्पनिक) और फ़र्ज़ी सफ़र का नक़्शा खींचते हुए कहता है कि हम इस तेज़ स्पीड की चाल को धीमी किये बग़ैर एक हज़ार साल, ग्यारह हज़ार साल, एक लाख साल, (रौशनी की चाल यानी) तीन लाख किलोमीटर पर सकेंड के हिसाब से दस लाख साल चलते रहें तो क्या इस दुनिया के किनारे तक पहुँच जाएंगे? नहीं! बिल्कुल नहीं। आगे तो बहुत घोर अन्धेरा है जिसका पार करना ज़रूरी है। फिर नये–नये तारे हैं जो आसमान के किनारों में चमक रहे हैं। अगर हम उनकी तरफ चलें तो क्या पहुँच जाएंगे? उसके बाद फिर करोड़ों साल सफ़र करें और तरक़्क़ी, नई तकनीक, नयी खोजें

(Discoveries), नयी शान, नये–नये संसार, नई–नई चीज़ें, नई–नई जानें .... क्या यह सिलसिला ख़त्म होने वाला है। क्षितिज (Horizon) हमारे सफ़र के रास्ते को बन्द करने वाला नहीं है..... .... स्पेस अथाह............ ख़ालीपन की कोई सीमा नहीं!! .... हम कहाँ हैं, किस रास्ते पर चले? अरे! हम तो अभी पहले के बिन्दु (Point) पर हैं........... गोले का केन्द्र (Centre) चारो तरफ़ हर जगह है, इसके ओर छोर दिखाई नहीं देते।

हमारे सामने यह संसार खुला हुआ है, Universe है, जिसकी सीमाएँ नहीं, अभी तो इसको कुछ पढ़ना समझना ही शुरु किया है। हमने कुछ भी तो नहीं देखा है, हम डर के पीछे मुड़ जाते हैं। इस सफ़र में कुछ न हाथ लगा, थकहार कर चित हो जाते हैं। किस गहराई में हम गिर पड़ेंगे? हम न ख़त्म होते भंवरों में कहाँ फंसे हैं? हम इसकी तह तक नहीं पहुँच सकते, न ही इसकी चोटी तक जा सकते हैं। वहाँ उत्तर दक्षिण हो जाता है, वहाँ न पूरब है न पच्छिम, न ऊपर, न नीचे, न दायें, न बायें....... .... जिस ओर देखते हैं अथाह असीम बेहद फैलाव इस असीम फैलाव के बीच हमारा संसार क्या है? एक अथाह असीम संसार के बीच टापुओं के बहुत बड़े झुण्ड में एक छोटा सा टापू जैसा। इन्सान अपने इतिहास पर चाहे जितना अकड़े, उसकी 'उम्र' इस फैलाव में नींद के झोंके से ज़्यादा नहीं।

अगर इन्सान की सारी खोजें जिनको लाखों और दूसरे बुद्धजीवियों ने लाखों किताबों में लिखा है, दोबारा लिखा जाए तो एक पैसे की इंक उसके लिए काफ़ी होगी। लेकिन अगर पूरी दुनिया की मौजूद चीज़ें, चाहे वह ज़मीनी हों या आसमानी, पहले रहीं हो या मौजूद हों या आने वाले समय की हों, उन सबको लिखा जाए तो ऐसा हो सकता है कि उसकी इंक के लिए दुनिया

के समन्दर भी पूरे न पड़ें।[1]

प्रोफेसर रिवाया (Ravaillet) कहते हैं: ''अगर तुम इस दुनिया का पूरा तसव्वुर (कल्पना) करना चाहो, तो यह समझ लो कि इस दुनिया के अन्दर इतने तारे हैं कि अगर ज़मीन के सारे कोस्टों (कनारों) की रेत इकटठा कर गिन लो, तब भी तारे उन से कहीं ज़्यादा हैं।

नक़ली साइंस की धोखेबाज़ी

दुनिया के लोग दावा करते हैं कि अट्ठारवीं और उन्नीसवीं सदी ईसवीं में मैटरियल साइंस के चलन की वजह से इतनी तरक़्क़ी हो पाई है और यह कि डायलेक्टिक (Diallectic: तर्क दलील से सच्चाई का पता लगाने का ज्ञान) वह फल है जो साइंस के फलदार पेड़ से लिया गया है।

ये लोग मैटर वाले फ़लसफ़े के अलावा हर फ़लसफ़े को साइन्सी न मानकर ख़याली बताते हैं, अपनी बात को ही साइन्सी और एडवान्स कहते हैं। उनका ख़याल है कि मौत के बाद की ज़िन्दगी और पराभौतिकी (Metaphysics) से ध्यान हटा लेना ही ठीक है। इसी तरह ''एहसास'' (Senses), अक़्ल और प्रयोग वाले मैटरियल फलसफ़े के अलावा किसी की कोई हक़ीक़त नहीं है।

लेकिन यह दावा बेजा तासुब (Fanatism) वाला है, बेबुनियाद और बे दलील है। इस तरह की बातें उन लोगों की सोच का नतीजा हैं जिनकी सोच हमेशा मैटर के इर्दगिर्द घूमा करती है और जो माद्दे के परे कुछ भी नहीं देखते।

---

(1) क़ुर्आन में है कि अगर ज़मीन के सारे पेड़ क़लम और एक नदी की सात नदियाँ मदद करके रौशनाई (इंक) बन जाएँ तो भी ख़ुदा की बातें ख़त्म नहीं होंगी। (सूरा कहफ–108)

यह बात माथापच्ची के ऊपर है कि ख़ुदा का मानना इन्सान की जानकारियों और कल्चर के सोतों में से एक है। ख़ुदा का मानना संसार के बारे में सही सोच का आधार बनाता है। इसी से पूरे मानव इतिहास में इन्सान की सोच और उसके समाज में गहरे बुनियादी बदलाव हुए हैं। आज भी साइन्स और टेक्नालॉजी के ज़माने में जब इन्सान ने आसमान के रास्तों को खोल दिया है, बहुत सारे साइन्टिस्ट बुद्धजीवी (Intellectual) सिस्टम के रूप में मज़हबी सोच रखते हैं। उन्होंने न सिर्फ़ दिल और अन्दर के मन (Conscience) के सहारे बल्कि सोच समझ और तर्क (Logic) से हर चीज़ का सोता संसार के सृजनहान के होने को मानने लगे हैं।

अगर मैटरियलिस्टों की समझ सही और सच्ची होती और इतिहास मैटरियल सोच की कमज़ोरी का पला न होता, तो साइन्स और मैटरियलिज़्म (Materialism) बे बीच एक ख़ास लगाव होता और साइन्स के दायरे में सिर्फ़ मैटरियल सोच ही का बोलबाला होता। क्या हर ज़माने में सभी विद्वान और फ़िलास्फ़र नास्तिक (Atheist) रहे हैं? क्या सबके सब मैटरियलिस्ट थे? अगर बुद्धजीवियों की जीवनियों और उनके कामों को पारखी नज़र से देखा जाए तो मालूम होगा कि मज़हबी दल न केवल बुद्धजीवियों और सच्चे साइन्टिस्टों से ख़ाली नहीं था बल्कि बहुत से बुद्धजीवी विचारक और महान विद्वान जिनमें आज की साइन्सों के संस्थापक (Founders) भी हैं, एक ख़ुदा को मानने वाले थे।

मैटरियलिस्ट और नास्तिक विश्वास किसी तरह साइन्सी विकास और तरक़्क़ियों के ज़माने ही तक सिमटे नहीं रहे बल्कि पहले से ही पूरे इतिहास में ये मैटरियलिस्ट हमेशा धर्म और ख़ुदा को मानने वालों से टकराते रहे हैं।

आज मार्क्सी विचार के जंगली रूप ने ही साइन्स को

गुमराही और धोखे का हथियार बना दिया है। जिन्हें अक़्ल की रौशनी में सही सोच का रास्ता अपनाना चाहिए था और हटधर्मी को छोड़कर खोज परख करके मसलों को समझने की कोशिश करना थी, वे लोग अब तक एक दूसरे की देखा–देखी अड़ियल रवैया अपनाये हुए हैं। ये लोग एक फ़रारी की तरह सोच समझ की ऊँचाइयों का इन्कार करते हैं और मज़े की बात यह है कि इस पर गर्व भी करते हैं। यह लोग कहते हैं कि साइन्स आने के बाद ख़ुदा के होने का मसला देस निकाला हो गया है। यह बात तर्क (Logic) से बहुत दूर है। यह तो बस एक तरह की नारेबाज़ी है क्योंकि हज़ारों साइन्सी प्रयोगों (Experiments) के बाद यह साबित नहीं किया जा सकता कि कोई ग़ैर मैटर (Non-material) चीज़ हो नहीं सकती। मैटरियलिज़्म तो अपने में पराभौतिकी (Meta-physical) विश्वास है। इसे फ़लास्फी तरीकों से ही साबित होने के बाद माना या न माना जा सकता है। इसी वजह से अगर मैटरियलिज़्म को मान भी लिया जाए तो पराभौतिकी (Metaphysical) विश्वास को झुठलाया नहीं जा सकता। इसीलिए मैटरियल सोच का इस तरह की बात करना पूरी तरह से बेमतलब बात है। और उसकी कोई साइन्सी वजह नहीं है बल्कि यह अंधविश्वास सच्चाईयों में बदलाव पैदा करने के अलावा कुछ भी नहीं है।

यह बात सही है कि कल तक इन्सान नेचर की बातों और उनकी वजहों को नहीं जानता था और अपने आसपास होने वाली बातों के रहस्यों के बारे में भी नहीं जानता था। मगर उसका विश्वास अन्जानपन का पाला हुआ नहीं था। अगर ऐसा होता तो दुनिया की सच्चाइयाँ खुलने के बाद ख़ुदा की पहचान की बुनियाद ही ढह गई होती। हम तो यह देख रहे हैं कि दुनिया के राज़ जितने ज़्यादा खुलते जा रहे हैं, ख़ुदा का विश्वास उतना ही

ज़्यादा साफ़ और उजागर होता जा रहा है। साइन्स एक सिमटे घिरे माहौल को ही चमकाती है। दुनिया की जानकारी भरपूर नहीं, थोड़ी है। साइन्स दुनिया के पूरे रूप की पहचान पूरी तरह करा नहीं सकती। साइन्स जितनी ज़्यादा बढ़ती जाएगी ख़ुदा की पहचान उतनी ही साइन्सी और तर्कसंगत (Logical) होती जाएगी, क्योंकि इन्सान साइन्स के सहारे वजहों और उसके नतीजों को अच्छी तरह समझ सकेगा। जब ऐसा होगा तो इन्सान इन सभी वजहों और नतीजों (Effects) की जड़ यानी परम कारण की अनदेखी न कर सकेगा।

प्रोफेसर रिवाया का कहना हैः इन्सान का ज्ञान पहली बार एलान करता है– और यह एलान किसी कमज़ोरी पर नहीं, प्रयोग और रिसर्च की बुनियाद पर है– पहले ही से इन्सान के इल्म का धर्म और मक़सद ख़ुदा और उसके जलवों को पहचानने के अलावा कुछ और नहीं है। ज़रूरी है कि यह सारे जतन ख़ुदा को समझकर मानने और उसकी 'साइन्सी' और लाजिकल पहचान के लिए किये जाएं। यह बात भी माथापच्ची करने के क़ाबिल नहीं है कि ज्ञान, साइंस, विश्वास से या विश्वास साइन्स से समझौता करे, क्योंकि सारी मज़हबी किताबें, सभी नबी और मज़हबी विचारकों (Thinkers) ने सोच समझ को इन्सान का बेहतरीन गिफ़्ट कहा है और इन लोगों ने अक़्ल से भरपूर फ़ायदा उठाने को कहा है।

ज़्यादातर लोगों की जेहालत, बेकारी और हठधर्मी बातों की भरमार और बे फ़ायदा समझ के दबाव ने सदियों से इस बात पर कोई ध्यान देने नहीं दिया। आज जब इन्सान होश–समझ के ज़माने में पहुँच चुका है और अपनी ज़िन्दगी में इसके रास्तों और पहुँच को दिन दिन बढ़ाता जा रहा है, तो यह बहुत ज़रूरी हो गया है कि सोच समझ को बनाने संवारने पर ज़्यादा ध्यान दिया

जाए और उस जानकारी पर ध्यान दिया जाए जो सही तरह से हो और फ़ायदे वाली हो।

मसला दुनिया या आकाशगंगा (Galaxy) और आकाशगंगा का नहीं है और न खरबों प्रकाश साल का, न दुनिया की बड़ाई का मसला है बल्कि मसला असल में उस सोच समझ का है जो सही तरह से फ़ायदेवाली हो।

कल तक इन्सान अकेला अपने सुडौल सजीले शरीर के बारे में सोचा करता था और शरीर के दर्शन में मस्त था लेकिन वह उसकी पैदाइश और पूरी रचना में छुपे उलझे राज़ों से अनजान था। मगर आज अपने इस छोटे से जिस्म की हैरान कर देने वाली ज़्यादा जानकारी रखता है और यह जानता है कि उसके छोटे से बदन में एक करोड़ खरब सेल (Cell) काम में लाये गये हैं। हालत यह है कि सारे साइन्सी ज़रियों और तकनीकी जतनों के होते हुए भी ऐसी चीज़ के बनाने वाले की बड़ाई का अन्दाज़ा नहीं लगाया जा सकता।

अब सोचिए, क्या यह अक़्ली बात है जो हम यह कहें कि इन्सान के पैदा होने और उसकी रचना बनावट की जानकारी न रखने वाला ही ख़ुदा को मानता है। क्या वह अक़्लमन्द जो नेचर के कारणों और नतीजों (Effects) की जानकारी रखता है और इन्सान के विकास और कमालों का जानकार है और जो जानता है कि सृजन के हर मरहले में गहरे नियम और बारीक हिसाब का राज है, क्या वह मान बैठेगा कि इन अचम्भे भरे नियमों को बनाने वाला एक बेसमझ बेअक़्ल मैटर है?

क्या आँखें खोलने वाली ये सारी जानकारियाँ उस बुद्धजीवी को वहाँ पहुँचाएंगी कि उन सारी चीज़ों के और ख़ुद अपने पैदा करने वाले का सृजनहार को एक समझ मैटर बताए।

मैटरियल कल्चर दुनिया को आँख बन्द करके देखता है। वह हमारे लिए ऐसे सवाल छोड़ देता है जिनका जवाब ही नहीं है।

धर्म विद्वानों ने मेटाफ़िज़िकली यह बात साबित की है कि 'है' का फैलाव मैटर से कहीं ज़्यादा बड़ा, ऊँचा और मैटर से परे है। मैटर से परे की दुनिया मैटर की दुनिया से कहीं ज़्यादा फैली हुई और धनी है।

ये लोग नेचर के सिस्टम को तो मानते हैं फिर भी वजूद की एक ऐसी सूरत का विश्वास रखते हैं जो मैटर से परे नहीं है। उसकी अस्लियत की पहचान प्रयोग वाले ज्ञान साइन्स के बस के बाहर है। नेचर और उसके तमाशे अपने से ख़ुदा की राम कहानी कहते रहते हैं। क्या ख़ुदा को मानने वाली यह सोच इस बात की दलील है कि ख़ुदा को मानने वाले मज़हब साइन्सी रूप से खोखले हैं।

साइन्स क्या दुनिया को दो हिस्सों में बांटती हैः मैटरियल और पराभौतिक (Metaphysical)? दुनिया के लिए कोई मक़सद है भी या नहीं? इन सवालों के जवाब नहीं है, क्योंकि साइन्सी शब्दों में यह सवाल साइन्सी नहीं है। इसके अलावा साइन्सी समझ हमको सामने की कुछ चीज़ों की जानकारी देती है, लेकिन हमको ज़िन्दगी के बारे में सही सही जानकारी नहीं दे सकती और न ही यह समझ उन रास्तों और तरीक़ों को हमारे दिल में डाल सकती है जिनको हम अपनी ज़िन्दगी में अपनायें और अपने को बनायें।

बर्ट्रेन्ड रसेल (Brtrand Russel) कहता हैः ''अगर आज की साइन्सी सभ्यता फ़ायदे वाली होती तो साइन्स के विकास और तरक़्क़ी से इन्सान की अक़्ल में बढ़ोत्तरी होती। 'अक़्ल' से मेरा कहने का मतलब ज़िन्दगी की समझ है। मगर ''माडर्न सभ्यता'' यह फ़ायदा नहीं पहुँचा रही है। इसलिए इन्सान की तरक़्क़ी के

लिए साइन्स का विकास और तरक़्क़ी चाहे जितनी ज़रूरी हो मगर यह साइन्सें इन्सान के सही विकास की गारंटी नहीं ले सकतीं।

इसलिए साइन्सी समझ में यह सकत नहीं है कि वह इन्सानी आइडियालोजी को समझ सके क्योंकि साइन्सी समझ की प्रेक्टिकल आइडियालोजी से ज़्यादा अकाडेमी Value है, और यह इन्सान को नेचर (Nature) पर हावी कर सकती है जबकि वह चीज़ जो उसको धर्म और विश्वास की समझ पर राज करा सकती है वह असली और सैद्धान्तिक (Theoretical) है, सिर्फ़ अकाडेमिक वाली नहीं।

सारे ज्ञान साइन्स का आधार रिसर्च एक्सपेरिमेन्ट और आँखों से देखने पर है। प्रयोगों (Experiments) के हिसाब से बने क़ानून टिकाऊ नहीं डांवाडोल होते हैं। विश्वास के लिए एक ऐसा केन्द्र चाहिए जो हमेशा रहने वाला हो, जो फेर बदल से पाक हो और उसमें यह भी बात होना चाहिए कि दुनिया की रूप ढंग और असलियत से जुड़े संसार–समझ के मसलों का भरोसे वाला हमेशा का जवाब दे सके। वह 'होने' के आम तरह से समझने की इन्सानी ज़रूरत को पूरी कर सके। एक इन्सान को पूरा होने में रूह और सोच में बैलेन्स रहने की ज़रूरत है। अगर उसका कोई मक़सद तय नहीं है तो वह बर्बाद हो जाएगा। अगर धर्म मज़हब की ओर से उसको कोई तय मक़सद न मिल सका तो वह अपने बनाये हुए रास्ते और मक़सद को अपना लेगा और यह नेचरल सिस्टम के ख़िलाफ होगा और सोच और समझ को जमाने का कारण बनेगा।

इस ज़माने के इन्सान की साइन्सी तरक़्क़ी ने उसे दुनिया के आम क़ानूनों का मतवाला बना दिया है। इसमें इतना आगे बढ़ गया है कि इन्सान मैटरियल चीज़ों की असलियत और उनकी सत्ता के गीत गाने लगा है। प्रैक्टिकली इतिहास और नेचर

ईश्वर/ख़ुदा मान बैठा है। इन्सान अपने 'अपनेपन' और अपनी सत्ता की अनदेखी कर तर्क (Logic) की पड़ताल के (Dialectic) दबाव के आगे हाथ जोड़े खड़ा है और अपने को मजबूर समझ बैठा है।

अब साइन्स की दर्जा–दर्जा तरक़्क़ी के साथ समझ और दुनिया के बारे में साइन्सी सोच ख़ुदा को एक मानने वाले एके (एकेश्वरवादी/Monotheist Entity) की ओर ध्यान में लगी है। नेचर के जो रूप पहले बे मेल के और बिखरे लगते थे, अब वे एक सूत्र से आपस में जुड़े मालूम होने लगे हैं। उनका एक मक़सद और एक कारण की ओर पलटने को माना जाने लगा है। नेचर के तरह–तरह के अलग–अलग रूपों में एक लगाव और बन्धन की बात को माना जाने लगा है। जब ये देखा जाएगा कि इन सारी चीज़ों में काम करने वाली ताक़त तो एक ही स्रोत से निकली है, तो फिर नेचर के सभी सामने के रूपों को उसी एक स्रोत (Source) की तरफ़ पलटाया जाएगा (यानी सबका कारण उसी एक सृजनहार को समझा जायगा)। फिर ये सब इकटठा होकर उसी एक सेण्टर तक पहुँच जायेंगे और उसी से सभी को सन्तोष होगा।

विश्वास न होने की वजहें

मज़हबों के इतिहास की किताबों में सारा ज़ोर इस बात पर लगाया गया है कि आख़िर वह कौन सी वजहें थीं जिन से लोग मज़हब की ओर झुके। यह बहुत ही ग़लत और अधूरा तरीक़ा है। इस से इन्सान कभी सच्चाई तक नहीं पहुँच सकता। इन्सान अपनी प्रकृति (Nature) यानी अपने ख़ास स्वभाव के झुकाव से भगवान को एक मानता है। इस बात को देखते हुए हमें उन वजहों को ढूँढना चाहिए जिनकी वजह से इन्सान अपने नेचर के ख़िलाफ़ बेमज़हबी ढंग या अधर्म की तरफ़ चला गया है।

मज़हब का होना एक नेचुरल चीज़ है। मैटरियलिज़्म या

दुनिया की पूजा फितरत और नेचर के ख़िलाफ़ है। अगर इन्सान अपनी नेचुरल ख़ासियत की वजह से सच्चे ख़ुदा तक नहीं पहुँच पाता, तो अपने लिए ख़ुद ही एक ख़ुदा गढ़ लेता (बना लेता) है, चाहे वह सोच–समझ न रखने वाला मैटर हो या इतिहास की ज़बरदस्ती उसे ऐसा करने पर मजबूर करती हो। धीरे–धीरे यही झूठा ख़ुदा सच्चे ख़ुदा की जगह ले लेता है और फिर इन्सान इन्हीं झूठे 'ख़ुदाओं' की बातों आदेशों और फ़ैसलों को मानने लगता है। यही वजह है कि इन्सान सच्चे ख़ुदा को बेच डालता है और नई या पुरानी मूर्तिपूजा करने लगता है और बड़ी बेदर्दी से ख़ुदा को इतिहास के ख़ुदाओं के चरनो पर निछावर कर देता है।[1] हीरे मोती देकर मिट्टी मोल ले लेता है।

सबसे ज़्यादा अफ़सोस तो इस बात पर है कि पिछड़ेपन/नीचभावना (Inferiority Complex) के शिकार लोग अपने ही हाथों के बनाए हुए 'भगवानों' को ईश्वर के सारे गुणों की माला पहनाकर उनको सजदा करने लगते हैं, दण्डवत हो जाते हैं और उस एक अकेले ख़ुदा से फिर जाते हैं। इस बदनाम और धिक्कार भरी भक्ति को जान की बाज़ी लगाकर ख़रीद लेता है। अगर ज़रा गहरी नज़र से देखा जाए तो मालूम होगा कि यूरोप में एक मत के रूप में मैटरियलिज़्म परम सत्य, असली सच्चाई से इन्सान को दूर करने के लिए सामने आया था। यह इसलिए भी था कि इन्सान को मैटर की ज़ंजीरों में जकड़ दिया जाये और

---

(1) उर्दू का एक शेर हैः

ख़ुदा फ़रोशिये ज़ुह्हाद सजदाकोश है क्या!
ख़ुदा फरामशिये रिन्दे कज अदा क्या है!!
(दण्डवत साधुओं का 'भगवान' बेचना क्या है!
बांके शराबियों में भगवान को भूल जाना क्या है!!)

मैटर को मज़हब की जगह दे दी जाये। यह सारा काम यूरोप में पैदा होने वाली कुछ तारीख़ी (ऐतिहासिक) और सामाजिक वजहों से किया गया था। एक और वजह यह भी थी कि जिस वक़्त नई तकनीकी तरक़्क़ी शुरु हुई और उन विद्वानों ने ऐसे नई सोच और रायों को सामने किया जो ईसाई धर्मगुरुओं के नज़रियों के ख़िलाफ़ थे, तो शुरुआती दौर में ही पादरियों ने उन लोगों का बहुत कड़ा विरोध शुरु कर दिया। इसका रिऐक्शन यह तो होना ही था कि उन आविष्कारकों ने धर्म का खुल्लम खुल्ला इन्कार कर दिया और धीरे–धीरे ज़ोर पकड़ते चले गये और उनके आगे पादरियों की एक न चली।

'गिरजाघर' (Church) अपने ख़ास मज़हबी विश्वासों के अलावा इन्सान और संसार के बारे में पुराने यूनानी और ग़ैर यूनानी फ़िलॉस्फ़र्स के ख़यालों को विरासत (Heridity) की तरह से मानता था। लेकिन जब गिराजाघर ने ऐसे नज़रिये देखे जो उनकी पाक किताब और उनके दूसरे माने हुए और अपनाये हुए तरीक़ों के ख़िलाफ़ थे, उन्होंने यानी गिरजाघर ने अपने विरोधी नज़रिए वाले को नास्तिक और धर्म से फिर जाने वाला ठहरा दिया और उसके लिए कड़ी से कड़ी ग़ैर इन्सानी (Inhuman) सज़ाएं लागू कर दीं।

ज्ञान और मज़हब की बैठकों में जब मार्डन एजुकेशन और मज़हब का टकराव पैदा होने लगा तो दोनों में दुश्मनी और मुख़ालेफ़त तेज़ी से उभरने लगी। खुले मन वाले ने देखा कि 'चर्च' अक़्ल और सोच की बेड़ी डाल देना चाहता है और सोचने समझने की आज़ादी को छीन लेना चाहता है। फिर नतीजे में इस जमी हुई सोच वाले सिस्टम ने नये दौर के इन्सान के लिए अक़्ल विरोधी ज़हरीला माहौल पैदा कर दिया और सूझबूझ वाले विचाराकों को गुमनामी के कोने में ढकेल दिया। इस तरह की लगातार दराड़ ने

पूरे यूरोप को घेर लिया। फिर चर्च का राज ख़त्म हो गया और ज़ुल्म, बर्बरता के बादल छंट गए, तो नये ज़माने के बुद्धजीवी जो गुमनामी के कोने में पड़े कठिनाइयाँ झेल रहे थे, उन्होंने पुराने कड़वे घूटों का बड़ा कड़ा जवाब दिया। सारे खुले विचार वाले लोग पुराने मज़हब से फिर गए। फिर जली कटी की महान फ़ौज मज़हब के ख़िलाफ खड़ी हो गई। घोर रूहानी तूफ़ान उठ गया। इसका नतीजा ज्ञान–साइन्स और धर्म में अलगाव के रूप में निकला। इसी बेअक़्ली व बदले का नतीजा यह हुआ कि लोग असली आसमानी मसलों और ख़ुदा के होने की सच्चाई का इन्कार कर बैठे।

यह सही है कि धर्म की कुछ बातें न सिर्फ़ अक़्ल में आने वाली ही न थीं बल्कि बेबुनियाद भी थीं और असली और सच्चे मज़हब से उनका कोई मेल भी नहीं था। मगर 'चर्च' से बदला लेना एक अलग बात है और आम तरह से धर्म का इन्कार कर देना अलग बात है। यह सामने की बात है कि बदला लेते समय ज्ञान का पास नहीं किया जाता है, ऐसे में सिर्फ़ भावनाओं का तूफ़ानी राज होता है। इस वजह से इन्सान की रूहानी फ़क़ीरी साइन्स और टेक्नालोजी से भरे पूरे होने के आगे और भी बढ़ गई। इन्सान टेक्नालोजी में जितना ज़्यादा बढ़ता गया, रूहानी और अच्छे चाल चलन के मैदान में उतना ही पीछे होता चला गया और फिर ज़रूरी रूहानी ताक़त को साइन्सी ज्ञानों से नहीं पा सका।

रूहानियत और अध्यात्म के आगे सारे साइन्सी ज्ञान अपने में ज़्यादा अहम नहीं है, क्योंकि हम टेक्नालोजी की तरफ़ जाकर लोगों की ज़िम्मेदारियाँ तय नहीं कर सकते। साइन्स के मैदान में चाहे जितनी तरक़्क़ी हो जाए अपने सामने एक क़दम से ज़्यादा नहीं देख सकती।

इन्सान को जानने से न तो इस दुनिया की हक़ीक़त तक पहुँच सकता है और न आने वाले ज़माने में इन्सान की ज़िन्दगी के बारे में कोई भविष्यवाणी की जा सकती है।

यह तो सिर्फ अल्लाह को एक मानने (तौहीद) का विश्वास है जो सिर्फ़ इन्सान की मैटरियल ज़िन्दगी ही में कमी नहीं करता बल्कि उसकी ज़िन्दगी की शुरुआत और ऊँचे मक़सद को भी तय करता है। अगर इन्सान अपने को तौहीद के रास्ते पर चलाता रहे तो वह ऐसे आम क़ायदे तक पहुँच जाता है जिससे संसारदर्शी के चौखटे में अपने उन सारे बुनियादी और ज़रूरी सवालों के जवाब पा लेता है जिन्हें जानना चाहता है। फिर इन्सान की ज़िन्दगी पूरी तरह से अपने रंग और असली मूल क़ीमत को पा लेती है। यह सब ख़ुदा को एक मानने की वजह से होता है।

ख़ुदा और मज़हब का इन्कार करने की एक वजह यह भी है कि चर्च की तरफ़ से ख़ुदा के बारे में जो समझने और समझाने का ग़लत हल्का और सस्ता तरीक़ा अपनाया था, उनकी वजह से मज़हब से इस्तीफ़ा देकर मैटर की शरण में चला गया, क्योंकि ख़ुदा का जो नज़रिया चर्च सामने लाया था, वह अक़्ल–होश वालों के अपना लेने के किसी तरह क़ाबिल नहीं था और न ही उनके लिए काफ़ी था। यह सब इसलिए था कि चर्च ख़ुदा को मैटरियल और इन्सानी ढांचे में ढालकर लोगों के सामने लाता था इन्सान हमेशा से सच्चाई और असलियत की खोज में रहा है और (मैटर के) सिमटे हुए घेरे को तोड़कर कहीं ऊँचा, बहुत ऊँचा जाना चाहता है तो भला वही इन्सान ख़ुदा को सिमटे घिरे चौखटे में बंधा क्योंकर मान सकता है।

यह बात अपनी जगह तय है कि अगर ठोस सच्चाई को भी क़िस्से और कहानियों की तरह मन में डाल दिया जाए, तो जब

इन्सान सोच और जानकारी की ऊँचाई पर पहुँचेगा तो इस सच्चाई के ख़याल के बुरे नतीजें ही निकलेंगे।

खुली सोच वाले लोगों ने जब ईसाई धर्मशास्त्र में ख़ुदा की ऐसी तस्वीर देखी और यह देखा कि ईसाई मज़हब विश्वास को अक़्ल से ऊँचा समझता है। उनके यहाँ धर्म वालों को सोचने से पहले मान लेना ज़रूरी है। उन्होंने यह अच्छी तरह समझ लिया कि इस मज़हब की इस सिकुड़ी सोच और ईसाई धर्म के छोटे घिरे चौखटे में साइन्स, ज्ञान और अक़्ल को घेर देना ज्ञान और अक़्ल की कसौटी के ख़िलाफ़ है। उनके सामने 'चर्च' और काँट–छाट की गई किताबों के अलावा ख़ुदा को समझने और पहचानने और इस तरह के मसलों की छानबीन के लिए कोई सच्ची सही शरण भी नहीं थी। न वे किसी ऐसे अच्छे सिस्टम तक पहुँच सके थे जो उनकी दुनियावी चाहतों के साथ–साथ रूहानी चाहतों और ज़रूरतों को भी पूरा कर सकता और उनकी मैटरियल और रूहानी ज़िन्दगी में सोच, विचार करने और भावनाओं के अच्छे उचित तरीक़े को सामने ला सका होता। फिर तो उनकी मैटरियल समझ ने उनकी सोच में इन्क़ेलाब पैदा कर दिया। इसके नतीजे में वह नेचर से परे किसी नान–मैटर चीज़ का इन्कार कर बैठे। उन्होंने इस बात की तरफ ध्यान नहीं दिया कि मज़हब जब भी जेहालत के अन्धेरों में सैर करने लगता है तो हमेशा शक, शुब्हे और ग़लत रास्तों की तरफ ले जाता है। लेकिन जो मज़हब सच्चा होता है, ख़ुराफ़ात, फेरबदल और अंधविश्वास से बिल्कुल ख़ाली होता है, वह इन्सान को क़िस्से कहानियों और ख़ुराफ़ात से नजात दिला देता है और अच्छे और सही विश्वास पर अडिग बना देता है और ख़ुदा के जानने समझने के रूप की सही तसवीर सामने लाता है जो रिसर्च वालों को सही जवाब दे सके और अक़्ल वाली दलीलों से सोच

और ग़लतियों का सुधार कर सके। लेकिन खुली सोच वाले इस गिरोह ने जब धर्म में ख़ुराफ़ात और ग़लत चीज़ें देखीं और यह भी देखा कि धर्म की बुनियाद बेअक़्ली के उसूल और क़ानून पर रखी गई है तो उन्हें पूरी तरह यक़ीन हो गया कि धर्म के सारे प्रोग्राम बेफ़ायदा और बेकार हैं और अपने मज़हब में जो चीज़ें देखी थीं उसकी वजह से सारे मज़हबों के विरोध पर उतर आए। हालांकि इस वजह से इतनी जल्दी और बेबुनियाद बात पर सारे मज़हबों का इन्कार कर देना अक़्ल तर्क से दूर और बिल्कुल ग़लत है।

फ़िज़ियालॉजिस्ट और बायोकेमिस्ट वॉल्टर ऑस्कर (Walter Oscar) इस सच्चाई को इस तरह कहता है कि साइन्स और ज्ञान की पढ़ाई से कुछ बुद्धजीवियों का ध्यान ख़ुदा के होने की तरफ़ नहीं जाता। इसकी कई वजह हैं मैं उनमें से दो वजहों को बताना चाहता हूँ।

1– शायद पॉलिटिकल प्रेशर, समाजी हालात, या 'सरकारी' बनावटें ख़ुदा के होने की वजह हैं।

2– इन्सान की सोच हमेशा कुछ अन्धविश्वासों से असर लेती है। इन्सान किसी भी तरह के जिस्मानी या रूहानी सज़ा अज़ाब का डर नहीं रखता फिर भी उसकी सोच सही रास्ते को चुनने में पूरी तरह आज़ाद नहीं होती। ईसाई घरानों में ज़्यादातर बच्चे शुरुआत ही में एक ऐसे ख़ुदा को मान लेते हैं जो इन्सान जैसा होता है। मानो इन्सान ख़ुदा के रूप में पैदा किया गया हो। यह लोग जब साइन्स के मैदान में पहुँचते हैं तो और साइन्सी बातों के याद करने और सीखने में लगते हैं तो यह इन्सान जैसी सूरत वाला कमज़ोर ख़ुदा साईन्स और अक़्ल की दलीलों पर खरा नहीं उतरता। जब किसी भी तरह से दोनो, कल्पना वाले ख़ुदा और लॉजिक वाले ख़ुदा में मेल पैदा नहीं हो पाता तो ख़ुदा को सोच

के घेरे से बाहर कर देते हैं।

इसकी ख़ास वजह यह है कि अक़्ल और साइन्स वाली समझ पहले के विश्वासों को बदल नहीं पाती। फिर दूसरी तरफ यह लोग सोचने लगते हैं कि ख़ुदा को मानकर हमने ग़लती की है। इसके अलावा भी बहुत सी ऐसी वजहें होती हैं जो इन्सान को मज़हबी सोच के टूट जाने पर घबरा देती हैं। नतीजे में वह इन्सान ख़ुदा को समझने का इन्कार कर बैठता है।

यही वजह थी, बुद्धजीवियों ने अपनी पूरी कोशिश लगा दी कि दुनिया के पैदा होने के मसले में जहाँ भी ख़ुदा या मज़हब का नाम है उसको मिटा दिया जाए और ऐसे–ऐसे टिकाऊ या बेटिकाऊ नियम और फारमूले निकाले जाएं जो उन सभी जगहों के लिए जहाँ ख़ुदा या मज़हब का नाम हो, वहाँ–वहाँ साइंसी बदल ढूँढ कर ख़ुदा व मज़हब का नाम बाक़ी न रहने दें और अपनी समझ से धर्म से जुड़ी इन्सानों की उम्मीदों को मिटा दें और नेचुरल सिस्टम या दुनिया में ख़ुदा के हर तरह के असर को नकार दें।

जब ये लोग किसी ऐसी जगह पहुँचे कि जहाँ समझने समझाने का दरवाज़ा बन्द है तो वहाँ पर कुछ तरह–तरह की बेसर पैर की बातों के सहारे मसलों को हल करने की निकम्मी कोशिश की या यह कहकर टाल गए कि आने वाले दिनों में होने वाली रिसर्च से यह गुत्थी सुलझ जाएगी। इस तरह अपने कच्चे ख़याल में इस बात पर तैयार नहीं हुए कि इस तरह की ख़ुराफ़ात और जेहालत में कोई कोशिश करें। इसलिए यह तो हुआ कि यह 'शिर्क' (किसी दूसरे को भी ख़ुदा का साझीदार और साथी मानना) जैसी गुमराही से तो बच गए मगर ख़ुदा का इन्कार करने (नास्तिकता) के दलदल में फंस गए।

ख़ुदा को समझने और किसी पैदा करने वाले के होने को

मानना तो नेचर की चीज़ है, लेकिन दुनिया की ज़रूरतों की तरह इन्सान उसकी खोजबीन में ज़्यादा नहीं रहता, बल्कि यह मसला मैटरियल ज़िन्दगी से बिलकुल अलग थलग है। इसमें सोच और सूझबूझ की गहराई की ज़रूरत है और नतीजे की जड़ तक पहुँच और 'होने' के बारे में रिसर्च करने की ज़रूरत है। हर इन्सान को हमेशा यह चाहिए कि सोच समझ के इस तक पहुँचे। मोटी सी बात है असलियत में मैटरियलिज़्म और 'सोच' का मज़हब किसी तरह एक जैसे नहीं है। दूसरी तरह से देखने में अनदेखी चीज़ जिसके गुण भी बताये न जा सकते हों, उसके होने पर सवालों को खड़ा करने से कहीं ज़्यादा उसका इन्कार आसान है। इसी लिए जिन लोगों के मन इस सोच को मानने के लिए तैयार नहीं हैं, ख़ास कर तरह–तरह की वजहों से अनदेखी सच्चाई की पहचान धुंधला जाने से वह लोग अपने लिए सोच विचार के कठिन रास्ते के बजाए आसान रास्ता चुनते हैं। यह सहज रास्ता ख़ुदा और मज़हब का इन्कार करना है। इस रास्ते को अपनाने में उन्हें कोई नुक़सान भी नहीं दिखाई देता। जब ख़ुदा के होने वाले मसले से हाथ झाड़ लेते हैं तो बैर, दुश्मनी और बेजा तरफ़दारी तासुब (Fanatism) पर उतर आते हैं। अगर आप दुनिया की व्याख्याओं को देखें जो धर्म से बिफ़रे लोगों से भरी है तो इस सच्चाई को समझ जाएंगे। इसी के साथ इस बात की भी अनदेखी नहीं की जा सकती है कि जाहिल और बेसमझ पुजारियों और सन्तों के मज़हब फैलाने के ढंग ने भी बहुत से लोगों को धर्म से नाराज़ कर दिया है और वह आख़िर में दुनिया के पुजारी (मैटरियलिस्ट) हो गए।

वह भावनाएं जो इन्सान की नेचर के साथ जुड़ी हैं वह बस बेकार और बेफल नहीं होती हैं बल्कि वे पैदा की हुई ताक़त, जीवन बनाने वाली, बढ़ाने चलाने वाली होती हैं जो इन्सान को

उसके पैदाइशी मक़सद की तरफ़ ले जाती हैं। ख़ास बात यह है कि जिस तरह इन्सान को अपनी चाहतों का ग़ुलाम न होना चाहिए, उसी तरह अपने अन्दर की सच्चाईयों से भी लड़ना नहीं चाहिए और न नेचर की हर दौड़धूप, खोज और चलन को रोकना चाहिए बल्कि हर समय चलते (Active) रहने में ही इन्सान का भला है। मगर कामों में बराबर संतुलन रखना चाहिए वरना भावनाएं मारना भी मुश्किलें खड़ी कर देता है और इन्सान को तबाह कर देता है।

मध्यकाल (Medieval/Middle Age) में चर्च के सामने सिर्फ और सिर्फ आख़िरत/परलोक था यानी दुनिया की चीज़ें और दुनिया उनके लिए कुछ न थी। आप ज़रा ग़ौर कीजिए कि ख़ुदा और मज़हब के आगे अगर हम नेचुरल चाहतों को अहमियम न दें या उन्हें ख़त्म समझ लें और दुनिया से सन्यास ले लेने को पाकी मान लें और शादी बियाह और घर बसाना, जिसकी वजह से इन्सान की जाति बाक़ी रह सकती है, उसको गन्दा और नजिस चीज़ मान लें, भिखारी होने को ख़ुशक़िस्मती और शुभ धन समझने लगें तो इसका नतीजा क्या होगा? और दूसरे लोग ऐसे मज़हब के बारे में क्या सोचेंगे और उस मज़हब से कितनी आशाएँ जोडेंगे?

मज़हब का मक़सद सुधार और सही रास्ता दिखाना, दिल की चाहतों पर कन्ट्रोल और इन्सान के सभी कामों को टेढ़ेपन और अति या बाढ़ से बचाना है और उसकी ख़ॅाहिशों को हद के अन्दर रखना है, न कि ख़ाहिशों को बिल्कुल से मिटा देना है।

इन्सान अगर अपनी चाहतों को कन्ट्रोल में रखे और इक्षाओं के जाल में फंसने के बजाए लगातार उससे आज़ाद होने की कोशिश करता रहे तो वह ख़ुद अपने हाथों अपनी ज़िन्दगी

मक़सद वाली बना सकता है। वरना इन्सान के नेचर में इक्षाओं की खींचातानी इतनी ज़्यादा हैं कि जब तक इन्सान को हर तरह से सिखाया बनाया न जाए, सीधे सादे ढंग से वह अपने अन्दर की चाहतों पर कन्ट्रोल नहीं पा सकता।

इन्सान एक तरफ़ तो मज़हब के जज़्बे से इम्प्रेस होता है और मज़हब अन्दर से उसे नेकी और अच्छाई करने के लिए तैयार करता है, मगर दूसरी तरफ़ से इन्सान दिल की ख़ॉहिशों से भी बुरी तरह असर लेता है। याद रखिये जिस समाज में ख़ुदा और मज़हब के नाम पर लोगों को यह बात भरायी जाएंगी कि तुम्हारी भलाई और ख़ुशक़िस्मती दुनिया से अलग रहने ही में है, वहाँ इन्सान घुटन और खटक के एहसास में दब जाएगा अन्दर से मैटरियलिज़्म की तरफ़ मुड़ जाएगा और दीन से बिल्कुल फिर जाएगा।

असल में यह दीन की लॉजिक है भी नहीं, बल्कि सच्चा दीन इन्सान को मन की ग़ुलामी और मैटर का बन्धवा बनने से आज़ाद कराता है। ख़ुदा पर विश्वास और मज़हब और दुनियावी शिक्षाओं की बुनियाद पर इन्सान को असली और रूहानी मूल्यों का ध्यान दिलाकर फ़रिश्तों की दुनिया (दैव्यलोक) के दर्शन को बढ़ा देता है और साथ ही साथ मैटरियल चीज़ों के मज़े उठाने को सही बताता है।

इसी तरह कुछ लोगों का ख़याल है कि वह सारी चीज़ें जो मज़हब की तरफ़ से रोकी गई हैं, हक़ीक़त में उनमें आज़ादी का होना ही ख़ुशक़िस्मती और शगुन है, मज़हब तो बहुत कड़ाई से मौज मस्तियों से रोकता है और किसी भी तरह दुनिया का मज़ा लेने की इजाज़त नहीं देता। ख़ुदा तो बस यह चाहता है कि इन्सान या तो दुनिया की ख़ुशियाँ ले ले या फिर सिर्फ़ मरने के

बाद वाली (परलोक की) ख़ुशियाँ पाये। इस तरह की सोच भी मज़हब से दूर करने का एक तरीक़ा है और हक़ीक़त के बिल्कुल ही ख़िलाफ़ है। असल में इन्सान के कामों में मज़हब के हाथ डालने की वजह यह है कि मज़े लेने की खुली छूट, मन की चाहतों के आगे झुकना और दिल के कहे पर चलना यह सब इन्सान को अन्जाने में तबाही और ग़ुलामी के जीवन पर डाल देते हैं। नतीजा यह होता है कि इन्सान गिर जाता है और पाक नेचर से अलग, सत्य के रास्ते, सन्मार्ग से दूर हो जाता है। अगर मना की हुई यह बातें इन्सान की गिरावट और सदा के दुर्भाग्य की वजह न होती तो उनसे कभी रोका न जाता, उन्हें हराम (निषेध) न किया जाता। इस रोक के पीछे सूझबूझ का अन्दाज़ा किया जा सकता है और परलोक आख़िरत की भलाई का राज़ पता लगाया जा सकता है। यही वाजिब (मज़हब की ओर से ज़रूरी किये गये) कामों का हाल है, क्योंकि इबादतों (भक्ति) का वाजिब होना और उनको बग़ैर दिखावे के पूरा करना, यह सब इन्सान के फ़ायदे के लिए ही है, इसलिए नहीं है कि इन्सान की दुनिया की ख़ुशियों को ले उड़े।

इन्सान के ठण्डे जमे दिल के रुके हुए पानी में इबादत[1] जोश और गर्मी दौड़ाने का काम करती हैं। इबादत इन्सान के अन्दर के मन और (Values) की कसौटी में सुखी बदलाव करती है। बल्कि इबादत ऐसा पत्थर है जिस पर धर्म की नींव रखी जाती है। इबादत ट्रेनिंग और एक्सरसाइज़ वाला ऐसा काम है जो दिल की गहराईयों में उतर जाता है। इबादत ऐसी धारवाली कटेली तलवार है जो सारी ख़राबियों और बिगाड़ के तारों और अन्दर की गिरावट को काट देती है। यही इन्सान को अनन्त, बेहद पाक और

(1) इबादत= हर वह काम जिसके करने में ख़ुदा की ख़ुशी शामिल हो।

शुभ दुनिया तक उड़ान की ताक़त देती है और इन्सान के लिए तरक़्क़ी और ऊँचाई को आसान बनाती है। मुख़्तसर बात यह है कि कोई इबादत दुनिया और दुनिया के मसलों में कोई रोक नहीं पैदा करती बल्कि एक अच्छी भली ज़िन्दगी देती है।

ईसाईयों की अक़्ल से दूर वाली शिक्षाओं का नतीजा यह हुआ कि रसल (Russel) जैसे मैटरियलिस्ट यह कहने लगे कि मज़हब और ख़ुदा पर विश्वास ऐसी चीज़ें हैं जिनकी वजह से इन्सान बर्बाद हो गया। वह कहता है कि चर्च की शिक्षाएं इन्सान की दो ख़राबियों में से एक के बीच ज़रूर डाल देती हैं: या तो इन्सान दुनिया की चीज़ों को नहीं पाता या आख़िरत की हूरें और वहाँ का सुख चैन नहीं ले पाता।

चर्च की नज़र में ज़रूरी है कि इन्सान इन दो बदकिस्मती में से एक को अपनाये। या तो दुनिया को छोड़ दे और सन्यास ले ले और उसके बदले में आख़िरत (दूसरी दुनिया) के आराम और सुख को ले या अगर दिल चाहे तो इस दुनिया में मज़े उड़ाए। मगर हाँ तब यह मान लें कि बाद वाली दुनिया में कोई आराम नहीं मिलेगा, घाटा ही घाटा है।

इस तरह के विचार का फैलना मज़हब की गहरी सोच न रखने का सुबूत है। इससे आने वाले वक़्त में मज़हब और मज़हबी क़ानून के चलन की क्या हालत होगी, इसका अन्दाज़ा अच्छी तरह लगाया जा सकता है।

मज़हब के बारे में इस तरह की सोच रखने का असर इन्सान की सोच और उसके कामों पर कितना गहरा होगा, इसको छिछली नज़र से सोचकर नहीं समझा जा सकता। इसी तरह की सोच का नतीजा यह हुआ कि जाने या अनजाने में इन्सान का ध्यान सिर्फ मैटर की चीज़ों पर जाकर रुक गया और इस भरपूर

ध्यान के नतीजे में रूहानी और अच्छे चाल चलन की दीवारें कमज़ोर से कमज़ोर होती चली गईं।

ऐसा हरगिज़ नहीं है कि इन्सान हर हाल में इन दोनों में से किसी एक बदक़िस्मती को ले बल्कि इन्सान चाहे तो दुनिया और आख़िरत दोनो के आराम और सुख को पा सकता है। भला वह ख़ुदा जिसकी दया मेहरबानियाँ बेहद खुली हुई हैं वह अपने बन्दों के लिए दुनिया और आख़िरत की भलाई क्यों नहीं चाहेगा? इसमें कोई शक नहीं कि ख़ुदा अपने बन्दों के लिए दोनों दुनियाओं का शगुन चाहेगा।

मैटरियल सोच के फैलने की दूसरी वजह सेक्स और दूसरी चाहतों में डूब जाना है। जिस तरह मन की सोच काम ही की बुनियाद बनती है और इन्सान के रहन–सहन के तरीक़े बनाती है, उसी तरह इन्सान के कामों और चाल–चलन का असर भी उसके दिल दिमाग़ पर पड़ता है और इन्सान की सोच बदल देता है।

सेक्स और चाहतों का पुजारी इन्सान धीरे–धीरे ख़ुदा को मानने वाली ऊँची सोच से हाथ धो बैठता है और जिस दिन वह अपने लिए ख़ुदा के अलावा काम का कोई और धुरा बना लेता है और यह सोचता है कि जो कुछ भी दुनिया में है वह आज़ाद है और अपने पैदा होने के मक़सद को नहीं मानता, समझ ही नहीं पाता। इसलिए अपने पूरे तन मन से सेक्स और दूसरी मौज–मस्तियों के मज़े उड़ाने में लग जाता है। फिर ऊँचाइयों की तरफ़ बढ़ने वाली उसकी रूह सूख कर बर्बादी के गढ़े में गिर जाती है।

इसी तरह ख़ुदा का मानना भी एक जैसा ऐसी ज़मीन को चाहता है जो उसके पनपने में मदद दे। यह बीज पाक–साफ़ जगह में फूटता है, ऐसी जगह जहाँ इन्सान अपनी हद में रहते हुए अपनी लाइन को तय करते हुए आसानी और तेज़ी के साथ

तरक़्क़ी करता हुआ अपनी मनचाही मंज़िल पा सके। अगर ख़ुदा का मानना ऐसे बन्जर माहौल में है जो उसे रास न आये तो कभी भी उस का कोई फ़ल नहीं मिल सकेगा।

ज़िन्दगी की हावहू, शोरगुल, इन्डस्ट्री की पैदावार की बहुतात, धन–दौलत ताक़त वग़ैरा की भरमार, दुनिया की चमक–दमक, तड़क–भड़क, सेक्स भड़काने वाली चीज़ों की बहुतात ने इन्सान को इतना बेहोश कर दिया है कि वह अपने आपको भूल गया है। वह अपने आप को मज़हब, ईमानदारी और उसकी बातों से किसी तरह बचाए रखने पर अपना पूरा ज़ोर लगा देता है। और किसी भी तरह कन्ट्रोल करने वाली ताक़त को मानने पर तैयार नहीं, क्योंकि वह अपने साथ कोई सामने का मैटरियल फ़ायदा नहीं रखती बल्कि उसकी हवस और ख़ॉहिश के तूफ़ान के सामने एक रुकावट बन जाती है। इसीलिए जिस जगह के लोग गुनाहों में डूबे हों और हर तरह के बन्धनों से आज़ाद हों और चाल चलन और काम काज में किसी क़ानून से बन्धे न हों, वहाँ पर सिर्फ़ मज़हब नाम ही को बाक़ी रह सकता है। लालची और मैटर के पुजारी लोग भी ख़ुदा के मानने वाले नहीं हो सकते। नेचुरल बात है कि मैटरियलिस्ट और ख़ुदा वाली दो सोचों में जब एक सोच माहौल में छा जाएगी यानी इन्सान के मन में बैठ जाएगी तो वहाँ दूसरी सोच की जगह ही बाक़ी न रहेगी। इसलिए या तो मैटरियल चीज़ों की चाहत ख़ुदा की इबादत करने वाली रूह को इन्सान से दूर कर देगी या ख़ुदा की चाहत मैटरियलिज़्म को दूर भगा देगी। जब मन की चाहतें दब जाएंगी और लगातार जतन इन्सान को अल्लाह की तरफ ले जाएगा तो इन्सान अपने मैटरियल तौर तरीक़ों को छोड़ देगा और नेचर के बन्धनों से आज़ाद होकर इन्सानी आज़ादी का पूरा नमूना बन जाएगा।

इन्सान का मक़सद जितना ऊँचा होता है, उसकी तरफ़ बढ़ना और उसको पाने के लिए उतनी ही ज़्यादा मेहनत और कोशिश करना पड़ती है। अगर हम ख़ुदा को अपना मक़सद बना लें, तो वह मक़सद भी बहुत ऊँचा है और उस तक पहुँचने का रास्ता भी लम्बा लेकिन साफ़ और सीधा है। ऐसे में बहुत सी कठिनाइयों और मसलों से पार पा जाना आसान हो जाएगा। अपने 'मन' को भगवान न मानने के साए में सच्ची आज़ादी जन्म लेगी।

अगर हम ख़ुदा को मक़सद मान लें तो तरक़्क़ी और आज़ादी के बीच का तालमेल भी समझ में आ जाएगा। तरक़्क़ी के लिए इन्सान जो दुख सहता है और जो खोज करता है, वह हमेशा की ज़िन्दगी के मानने और ख़ुदा की तरफ़ से बढ़ावे के साथ वह अपनी पहचान पा लेगा। ख़ुदा की इबादत से जो ऊँचाई मिलती है, वह न तो आज़ादी से टकराती है और न इन्सान की गुलामी की वजह बनती है।

हम दुनिया की चौमुखी तरक़्क़ी में सोच समझकर जानबूझ कर साझी बनें और यह बात नेचर के चलन या इतिहास (History) के दबाव में न हो, तभी हम अपने को आज़ाद कह सकते हैं। क्योंकि नेचर के चाहे हिसाब से साथ देना, फ़ायदे और भलाई के ख़िलाफ जाकर, नेचर या मन के गुलाम होने के अलावा कुछ भी नहीं है। जो तरक़्क़ी ज़बरदस्ती नेचर के पीछे चलने से मिले वह अंधी गुलामी के अलावा कुछ नहीं। मैटरियल स्कूल (मत) जो तरक़्क़ी और भलाई को नेचर के बन्धनों से छुटकारे में समझते हैं, हम वहाँ आज़ादी और तरक़्क़ी के बीच टकराव समझते हैं। जिस तरक़्क़ी को लिए इन्सान अपने सर ले और बड़ी कोशिशें और मेहनत जतन करे लेकिन उसके फल से कोई फायदा न उठा सके, तो उसके क्या माने?

चाहे इन्सान की अपनी नेचर की ही वजह से कोशिश जतन हो मगर उसके लिए हो जो दुनिया पैदा करने वाले ख़ुदा को न माने, उसके लिए बिल्कुल खेल और बेकार नहीं है? चाहे वह समाज के लिए कितना ही फ़ल देने वाला क्यों न हों क्या एक बेसमझी का बेकार काम नहीं कहा जाएगा। अगर मेरी कुर्बानी, त्याग इन्सानियत की तरक़्क़ी के लिए हो लेकिन इस कुर्बानी से ख़ुद मुझे कोई फ़ायदा न पहुँचे तो यह बात आज़ादी के भी ख़िलाफ़ है और अक़ल और लॉजिक के ख़िलाफ़ भी। मैटरियल स्कूल के लीडर्स जो यह ख़याल करते हैं कि तरक़्क़ी और बन्धन के बीच एक भयानक टकराव है, उनकी नज़र हक़ीक़त में उसी मैटरियल तरक़्क़ी की तरफ है जो ख़ुदा वाली नहीं है और असलियत और हक़ीक़त में जिसका कोई मक़सद नहीं है।

ख़ुदा के ख़ास गुण और ख़ुसूसियतें

क़ुर्आन किस तरह ख़ुदा के गुण बताता है?

जब हम किसी पढ़ेलिखे बुद्धजीवी लेखक के ज्ञान जानकारी का अन्दाज़ा लगाना चाहते हैं तो उसकी अपनी लिखी किताबें आदि पढ़ते हैं और उसको परखते हैं। इसी तरह जब हम किसी आर्टिस्ट के लिए उसके आर्ट को जांचते परखते हैं।

उसी तरह हम अगर ख़ुदा के गुणों को जानना चाहें तो उसकी पैदा की हुई चीज़ों को गहरी नज़र से देखना पड़ेगा तब कहीं जाकर हम अपनी हैसियत के हिसाब से उसकी सूझबूझ, सकत, ज़िन्दगी और ज्ञान का अन्दाज़ा लगा पाएंगे।

अगर यह चर्चा हो कि ख़ुदा को हर तरह से और भरपूर पहचान पाना चाहिए तो फिर हमको ये मान लेना चाहिए कि ख़ुदा की भरपूर पहचान कर पाना इन्सान की समझ के बस का नहीं, न उसके गुणों की हदों को जाना जा सकता है। ख़ुदा के लिए

अटकल लगाना और उसकी मिसाल की बात करना ग़लत है क्योंकि पूरी दुनिया जो कुछ भी है, यहाँ तक सोच, सूझबूझ वह सब की सब ख़ुदा की बनाई हुई है और उसके 'चाहने' और 'हुक्म' का नतीजा हैं, जबकि उसकी ज़ात (परमात्मा) न तो नेचर का हिस्सा है, न ही वह बनायी हुई चीज़ कही जा सकती है। इसलिए अन्दाज़े से उसे समझा नहीं जा सकता है।

ख़ुदा एक ऐसा वजूद है जिसकी 'ज़ात' को पहचानने के लिए न तो कोई तराज़ू है और न उसकी सकत या ज्ञान के बारे में अन्दाज़ा लगाने के लिए कोई गिनती है और न ही उसको घेरने का कोई तरीक़ा है। फिर क्या ऐसे में ख़ुदा की ज़ात या उसके गुणों को जानने समझने में इन्सान बौना और बेबस नहीं है?

लेकिन फैली, गहरी और भरपूर पहचान से बेबसी का मतलब ये भी नहीं है कि हम उसको किसी भी तरह जान या समझ ही नहीं सकते, क्योंकि दुनिया का सिस्टम चीख़–चीख़ कर उसके गुणों को बता रहा है और इतना तो हमारे बस में है कि हम नेचर के जलवों और उसकी ख़ूबसूरती को देखकर और उसमें ग़ौर करके उसकी सकत और उसके रचने को पहचान लें।

जो चीज़ ख़ुदा की पहचान करा सकती है और उसके वजूद को 'छू' सकती है वह वही सोचने की अनोखी न्यारी ताक़त है जो उसी ख़ुदा के हुक्म से एक बिजली की तरह मैटर पर चमकती है। ये भी उसी का हुक्म है कि उसने सोच को अन्दर की बात समझने और सच्चाई तक पहुँचने की ताक़त दी है। इसी चमक से किसी हद तक ख़ुदा की पहचान होती है।

इस्लाम में ख़ुदा की पहचान अनोखी और साफ़ बुनियाद पर रखी है। इस्लाम के ख़ास सोर्स (Source) क़ुर्आन ने सवाल–जवाब के ढंग से 'हाँ' और नहीं के बीच इस मसले को हल किया है।

कुर्आन सबसे पहले तो झूठे ख़ुदाओं की नहीं करता है क्योंकि एक अकेले ख़ुदा को पहचानने के लिए पहले दिल और दिमाग़ से किसी दूसरे में ख़ुदाई ताक़त का मानना और उसकी पूजा करना निकालना ज़रूरी है। यह बात एक अकेले ख़ुदा तक पहुँचने के लिए रास्ता बनाने की पहली सीढ़ी है। ''कुरान कहता हैः–

क्या उन लोगों ने अल्लाह को छोड़कर कुछ और ख़ुदा बना रखे हैं? (ऐ रसूल) तुम कहो कि भला कोई दलील तो दो जो मेरे (ज़माने में) हैं उनकी किताब (कुरान) और जो लोग मुझसे पहले थे उनकी किताबें (तौरेत वग़ैरा) ये (मौजूद) हैं (उनमें ख़ुदा का साझी बता दो) बल्कि उनमें से ज़्यादातर लोग तो सच्ची बात को जानते ही नहीं (तो जब ख़ुदा की बात होती है) ये लोग मुँह फेर लेते हैं।''

(सूरा अंबिया आयत–24)

और एलान करता हैः

(ऐ रसूल!) तुम कहो कि ऐ किताब वालों तुम अपने मज़हब में ग़लत बढ़ोत्तरी न करो और न उन लोगों (अपने पुरखों) के मन की चाहतों पर चलो जो पहले ख़ुद ही बहक चुके और बहुतों को बहका कर छोड़ा और सीधे रास्ते से दूर भटक गये।

(सूरा 'मायदा' आयत–24)

जो इन्सान उस एक ख़ुदा से अपना रिश्ता तोड़ लेता है वह दुनिया में अपनी जगह और अपने 'होने' को ही भूल जाता है और अपने को गुम कर देता है। ख़ुद से परायेपन की आख़री सूरत ये होती है कि इन्सान अपने नेचर से अपना रिश्ता तोड़ लेता है। अन्दर और बाहर की अलग–अलग वजहों के असर से आदमी

'अपने' से और अपने 'नेचर' से अजनबी हो जाता है। इन्सान जब 'अपने' से अजनबी हो जाता है तो अपने पैदा करने वाले (प्रभु) ख़ुदा से दूर हो जाता है, दूसरे के सामने सर झुकाने लगता है। और अक़्ल और लॉजिक के परे उसकी पूजा, इबादत करने लगता है यही बात नेचर की चीज़ों को ख़ुदा बनाने की तरफ़ पहुँचा देती है। अब चाहे मूर्ति के आगे माथा टेके या मैटर को ही असल मान ले, ये दोनों बातें इन्सान के मन का फेर और पिछड़ापन है, ये उसकी तरक़्क़ी और बाढ़ को छीन लेती हैं।

इस हाल में सिर्फ़ एक ख़ुदा को मानना ही वह अकेली ताक़त है जिससे इन्सान अपनी असलियत को वापस पा सकता है। अपने नेचर और दुनिया की असलियत के एक लय में होने से वह 'अपने' को ऊँचाई तक पहुँचा सकता है।

इतिहास गवाह है कि सारी नबूवतें और असमानी इलाही रिसालतें अल्लाह को एक मानने का पैग़ाम लेकर अपने मिशन की शुरुआत किया करती थीं। इन्सान की डिक्श्नरी में तौहीद (अल्लाह को एक मानना) से ज़्यादा माने मतलब रखने वाला कोई ऐसा शब्द देखा ही नहीं गया जो इन्सानी ज़िन्दगी के अलग–अलग हिस्सों पर छायी हुई है और उसको हेरफेर से बचाता है। कुरान साफ़ और खुले प्रमाणों से दलीलों के साथ ख़ुदा को जानने और पहचानने का तरीक़ा बताता है, जैसे यह कहता हैः–

''क्या ये लोग किसी के (पैदा किये) बग़ैर ही पैदा हो गये हैं या यही लोग (पैदा हुई चीज़ के) पैदा करने वाले हैं या उन्होंने ही सारे आसमान और ज़मीन को पैदा किया है (नहीं) बल्कि ये लोग यक़ीन नहीं रखते''

(सूरा 'तूर' 52 आयत 34–35)

कुर्आन ने दो गढ़ी हुई बातों की तोड़ करने को अक़्ल और

नेचर के हवाले कर दिया हैः

1— इन्सान अपने आप 'न होने' से 'होने' में आ गया।

2— इन्सान ख़ुद अपने आपको पैदा कर सकता है।

ताकि इन्सान इसको अपनी अक़्ल की कसौटी पर परखे और इसका हल निकाले, ख़ुदा की निशानियों में ग़ौर करे और अटूट यक़ीन के साथ 'होने' के स्रोत को माने और ये समझ ले कि दुनिया बग़ैर बनाने चलाने और संजोने और सजाने वाले के बिना हो नहीं सकती। दूसरी आयतों में पैदाइश की कड़ियों और उसकी हालत की तरफ़ इन्सान का ध्यान कराया गया है।

कुरान कहता हैः—

''और हमने आदमी को गीली मिट्टी के सत्त से पैदा किया फिर हमने उसको एक जगह (औरत के पेट) में नुत्फ़ा (गर्भ) बनाकर रखा, फिर हम ही ने नुत्फ़े को जमा हुआ ख़ून बनाया, फिर हम ही ने जमे हुए ख़ून को गोश्त का लोथड़ा बनाया, फिर लोथड़े की हड्डियाँ बनाईं, फिर हड्डियों पर गोश्त चढ़ाया फ़िर हमने ही उसको (रूह डाल कर) एक दूसरी सूरत में पैदा किया तो (सुब्हानल्लाह) ख़ुदा बरकतों वाला है जो सारे बनाने वालों से अच्छा है।

(सूरा मोमिनून आयत 11—13)

जिस वक़्त बच्चा माँ के पेट में बन रहा होता है, उसकी सूरत बन रही होती है, चीज़ें आँख, नाक, कान, दिमाग़ और दूसरी चीज़ें अपने—अपने काम में लग जाती हैं। कुर्आन इन्सान को इस बात की तरफ़ ग़ौर दिलाना चाहता है कि क्या ये अजीब बदलाव ख़ुदा के बग़ैर समझ में आने और मानने के क़ाबिल है?

कुरान ख़ुद इस बात का जवाब देता हैः—

''वही ख़ुदा (सारी चीज़ों को) पैदा करने वाला, ईजाद (नया पैदा) करने वाला, सूरतों का बनाने वाला है।''

(सूरा 'हश्र' आयत—23)

बस वही असली बुनियादी चीज़ों (तत्वों) का पैदा करने वाला है और वही जिस्म के हर हिस्से के हर सेल (Cell) का पैदा करने वाला है और वही सूरतों का बनाने वाला (Artist) है।

डाक्टर कार्ल (Dr. Karl) कहता हैः—

''जिस्म के अंगों की बनावट बच्चों को सुनाए जाने वाले क़िस्से कहानियों में जिन्नात से ज़्यादा मिलती जुलती है और ये शरीर के सेलों का काम है जो ऐसा लगता है कि वे ये बात जानते थे कि किसे किस शक्ल में ढलना है और ये अपने अन्दर की ताक़त की मदद से बनावट के लिए तैयार हो जाते हैं।

हर उस समझ पाने वाली चीज़ को इन्सान जब अपने चारों ओर देखता है, उनके बारे में कुरान मसलों की तरह ऐसे कहता है कि इस बारे में बहुत गहरी सूझबूझ के साथ सोचना चाहिए और नतीजा निकलना चाहिए।

कुरान कहता हैः—

''और तुम्हारा ख़ुदा तो वही एक ख़ुदा है उस के अलावा कोई ख़ुदा नहीं है वह बड़ा मेहरबान और दया करने वाला है, कोई शक नहीं कि आसमान और ज़मीन की पैदाइश और रात दिन के अदल—बदल में और पानी के जहाज़ों में जो लोगों के फ़ायदे की चीज़ें (बिज़नेस का माल) वग़ैरा दरया (सागर) में लेकर चलते हैं और पानी में ख़ुदा ने जो आसमान से बरसाया और ज़मीन को मुर्दा (बेकार) होने के बाद जिला दिया और उसमें हर तरह के जानवर फैला दिये और हवाओं

के चलाने में और बादल में जो आसमान और ज़मीन के बीच हैं (ख़ुदा के हुक्म से) घिरे रहते हैं (इन सब बातों में) समझ वालों के लिए (बड़ी–बड़ी) निशानियाँ हैं''

(सूरा 'बक़रा' 2 आयत 163–164)

'ऐ रसूल तुम कह दो कि ज़रा देखो तो सही कि आसमानों और ज़मीन में (ख़ुदा की निशानियाँ) क्या कुछ नहीं''

(सूरा 'यूनुस' 10 आयत–101)

कुरान इन्सान के इतिहास, उसके बदलाव और पिछले समाजों के हालात को सिर्फ़ इसलिए बताता है कि ये (ख़ुदा के) जानने के ख़ास तारीक़े हैं। सच्चाईयों को खोलने के लिए पहले के अलग–अलग समाजों की हार, जीत, इज़्ज़त, ज़िल्लत, अच्छी क़िस्मत, बुरी क़िस्मत की भी बातें करता है ताकि क़ानूनों को समझना और इतिहास के गहरे, गठे सिस्टमेटिक, हिसाब को जानकार इन्सान ख़ुद भी फ़ायदा उठा सके और इन्सानी समाज के लिए भी भला हो।

कुरान कहता हैः–

'तुमसे पहले बहुत से वाक़ेए हो चुके हैं बस तुम ज़रा ज़मीन पर चल फिरकर तो देखो कि (अपने–अपने पैग़म्बरों को) झुठलाने वाले लोगों का नतीजा क्या हुआ''

(सूरा 'आले इमरान' 3 आयत–137)

फ़िर कुरान कहता हैः–

''हमने तो लोगों के पास वो ग्रन्थ (कुरान) भेजा है जिसमें (तुम्हारी भी) अच्छी चर्चा है तो क्या

तुम लोग (इतना भी) नहीं समझते और हमने कितनी बस्तियों को जिनके रहने वाले ज़ालिम (अत्याचारी) थे बर्बाद कर दिया और उनके बाद दूसरे लोगों को पैदा किया। (सूरा अंबिया आयत–10)

कुरान इन्सान की जान को भी फ़ायदे वाली सोच और सच्चाई के उजागर करने के लिए दूसरा स्रोत बताता है और उसी अहमियत का इस तरह एलान करता हैः–

''हम जल्दी ही अपनी (कुदरत की) निशानियाँ दुनिया में हर तरफ़ और ख़ुद उनमें भी दिखा देंगे यहाँ तक कि वो जान जाएंगे कि वही बस बेशक सच हक़ है।'' (सूरा सजदा (14) आयत–52)

''और यक़ीन (निश्चय) रखने वालों के लिए ज़मीन में (ख़ुदा की कुदरत की) बहुत सी निशानियाँ हैं और ख़ुद तुम में भी हैं तो क्या तुम देखते नहीं हो।''

(सूरा ज़ारियात (51) आयत–21)

यानी यही सजीला सुडौल शरीर अपने काम और बदल के काम करने के तरीक़ों और टेक्निक के साथ, जिसमें नेचर और ताक़त की क़िस्मों, इन्सानों और जानवरों की बनावटों, तरह–तरह के एहसासों और भावनाओं, उनकी समझ बूझ और अक़्ल और ख़ास कर दंग कर देने वाली सोचने की ताक़त दी गई है, ये सब जानने के भरे पुरे रास्ते हैं। अभी तक इन्सान ने न दिखाई देने वाली चीज़ों और रूह की ताक़तों को पहचानने में और उन चीज़ों के शरीर से रिश्ते के बारे में इन्सान की ज़्यादा जानकारी नहीं है और अभी तो उसमें पहचानने के बहुत खुले दानी स्रोत हैं।

कुरान खुलकर कहता है कि अगर तुम अपनी जान ही में ग़ौर करो, सोचो, खोज और रिसर्च करो तो वह तुमको न मिटने

वाले बेहद और हर चीज़ से बेपरवाह ताक़त के स्रोत तक पहुँचा देगी। यह जान लो कि वह सच्चाई अनन्त है जिसने ऐसे 'होनहारी' गठे जोड़ (शरीर) को पूरे एके के साथ मिला दिया है और उसे 'न' से 'है' के संसार में ले आया है। इसलिए ऐसी ज़िन्दा निशानियों और कटीली दलीलों के बाद, जो ख़ुद तुम में डाली गई है और तुम्हारे बस में है, ख़ुदा की पहचान के बारे में तुम्हारा कोई बहाना नहीं चलेगा।

कुरान ख़ुदा के ख़ास गुणों के बारे में भी 'हाँ' और 'नहीं' के तरीक़े से फ़ायदा उठाता है यानी ख़ुदा के कुछ गुण ऐसे हैं जो उसमें पाए जाते हैं। *सिफ़ाते सुबूतिया*, सकारात्मक या स्थाई गुण जैसे (खोज) जानना, हर काम कर सकना, इरादे, उसका ऐसा 'होना' जो कभी भी 'न' नहीं था, जिसकी कोई शुरुआत नहीं (अनादि) और न जिसके पहले कोई और था, और फिर

दुनिया जो चल रही है, उसी ख़ुदा के इरादे चाह और सकत के अलावा किसी से कोई ताक़त (Energy) नहीं पाती है।

कुरान कहता हैः–

''वह वही अल्लाह है जिसके अलावा कोई ख़ुदा भगवान नहीं है जो छुपे–खुले, देखे–अनदेखे का जानने वाला, बहुत ज़्यादा मेहरबान (दयानिधान) है। वही वह अल्लाह है जिसके अलावा कोई ख़ुदा नहीं, वही (सच्चा) बादशाह, पाक, हर कमी से दूर, शान्ति देने वाला, रखवाला, सब पर हावी (प्रभु), ज़बरदस्त, बड़ाई वाला, यह लोग जिसको (उस ख़ुदा का) साथी और साझी मानते हैं वह उससे पाक (अलग) है।

(सूरा हश्र (59) आयत 21–22)

सूरा साफ़्फ़ात (आयत 180) में है कि *''यह लोग जो बातें*

ख़ुदा के बारे में बनाया करते हैं, उनसे तुम्हारा पालने वाला, इज़्ज़त का मालिक (परमेश्वर) पाक है।''

या फिर ख़ुदा के गुण 'नहीं' वाले (नकारात्मक) हैं यानी वो बातें जो ख़ुदा में नहीं पाई जाती *(सिफ़ाते सलबिया)* जैसे न ख़ुदा का शरीर है, न वह जगह घेरता है, न कोई साथ–साझी रखता है, मैटरियल या भौतिक हदों में बन्द नहीं है, न वह किसी का बेटा है और न उसका कोई बेटा है (न वह जनक है, न जनित), उस (की ज़ात) में चाल–गति और बदलाव नहीं है। वह पूरी तरह पूरा है (परम है) और अपने से ही सब करने वाला (सच्चा कारू कामता) है, उसने चीज़ों के पैदा करने, सिरजन का काम किसी और के हवाले नहीं किया है। कुरान के सूरा एख़लास (112) में हैं किः–

(ऐ रसूल (स0) तुम कह दो कि वह अल्लाह एक अकेला है, अल्लाह सच्चा बेपरवाह है (उसे कोई किसी की किसी तरह की ज़रूरत नहीं), न उसको किसी ने पैदा किया, न उसने किसी को पैदा किया है (न वह जनक है, न जनित), उसका कोई भी बराबर वाला नहीं है।

इसमें कोई शक नहीं कि इन्सान की सिमटी सिकुड़ी समझ ख़ुदा की ज़ात और असलियत के बारे में कोई फैसला नहीं कर सकने में कमज़ोर और बेबस है। हम यह मानते हैं कि हम उस ख़ुदा की असल ज़ात को समझने में बेबस हैं। हमारी सोच समझ में उस जैसा कोई हो नहीं सकता। यह वह जगह है जहाँ गहरी सी गहरी सोच के धारे और इन्सानी सूझबूझ के सारे बड़े से बड़े ढंग होकर रह गए। इस जगह वे रास्ते से भटक कर भ्रम का शिकार हो गये। वह एक अकेला इकलौता किसी भी एक शब्द या शब्दों के जोड़े के माने मतलब से बिल्कुल परे है, और सारी पूरेपनों (Perfections)

को एक करने वाला है, क्योंकि अनन्त असीम बेघिरे परम सत्य से बढ़कर कोई पूरापन नहीं है। अगर उस के बाहर कोई पूरापन होता तो वह ज़रूर ही घिरा हुआ होता।

जिस तरह सारी होने वाली चीज़ों के 'होने' के सिलसिले की हद का एक ऐसे परम वजूद ('होने') पर पहुँच कर ख़त्म होना ज़रूरी है जिसका होने (Existence) में 'अवश्य' (Absolute/परम) है, जो अपने में Necessary & Sufficient हो, जो कभी अपनी 'होने' से 'न' कभी 'नहीं' हुआ हो और न कभी हो सके (वाजिबुल वुजूद) यानी वह अपनी में ही 'है' हो, उसका होना किसी दूसरे से न मिला हो, वह बस 'है' हो। सारी चीज़ों का होना उसी से जुड़ा हुआ हो। उसी तरह इस दुनिया में जितने भी पूरेपन और बाढ़ वाले गुण पाए जाते हैं जैसे ज़िन्दगी, सकत और जानना वे सब उसी से मिले हैं। इन गुणों का उस अनन्त असीम ईश्वर से ख़ास होना ज़रूरी है।

आदर्श (Ideal) ख़ुदा की शर्तें

बेशक परमेश्वर ख़ुदा में– जैसा कि ख़ुद कुरान ने भी कहा है– पूजा भक्ति इबादत के क़ाबिल ख़ुदा परमात्मा के सारे गुणों का मिलना ज़रूरी है। अच्छाई, ख़ूबसूरती और पूरेपन का पैदा करने वाला है (सत्यम् शिवम् सुन्दरम), सारी ताक़तों और सकत का आविष्कारक है। इसको जानना और पहचानना एक ऐसा अथाह सागर है जिसमें ग़ोता लगाने वाली आम समझ, बुद्धि लहरों का खिलौना बन जाती है। उसने ज़मीन और आसमान को गिरने से रोक रखा है। अगर एक सेकेण्ड के लिए भी वह अपनी मेहरबानियों की आँख फेर ले, इस संसार की थोड़ी सी अनदेखी कर दे, तो सारे के सारे 'है' का अता–पता न रह जाए और सब कुछ धूल बनकर लापता हो जाए। संसार का हर ज़र्रा अपने 'होने,

टिकने और रहने' के लिए उसी पर भरोसा करता है। वह सारी भलाइयों और अच्छाईयों का देने वाला है, उसी के हाथ में हमारा भाग्य और क़िस्मत है। वह जब किसी चीज़ को पैदा करना चाहे तो "कुन" (हो जा) कह दे, बस वह चीज़ हो जाती है।

उसी की ज़ात से सच और सच्चाई है, आज़ादी इन्साफ, और दूसरे अच्छे गुण उसी के गुणों का चमत्कारी आइना हैं। उस की ओर उड़ान और उसके दरबार में उसके पास हो जाने का मतलब, सारी चाही उँचाइयों को पा लेना है। जिसने उससे लौ लगाई उसने उसे मेहरबान, साधा–नाधा और चाहने वाला पाया। जिसने उस पर भरोसा किया उसने अपनी उम्मीद की नींव एक मज़बूत जगह पर रखी। जिसने उसके पराये को दिल दिया, ग़लत किया, अनर्थ किया, उसने अपने को जड़ से बर्बाद कर लिया।

वह संसार में कहीं भी हल्के से हल्के हिलने डुलने को जान लेता है। वह हमारी ख़ुशक़िस्मती की रेखाएँ बना सकता है। वह इन्सान की ज़िन्दगी और इतनी बड़ी दुनिया से उसके रिश्तों के लिए शरीयत (धर्म का क़ानून) बना सकता है, क्योंकि इन्सान की सच्ची भलाई और कल्याण को वही समझ सकता है और ये हक़ अधिकार सिर्फ़ इस संसार के पालनहार का ही है। यह उसके पालने पोसने का नेचुरल और तर्क भरा (Logical) नतीजा है। उसकी बनाये प्रोग्राम के हिसाब से चलना ही हमारे मन की उँचाई की गारण्टी है। ये कैसे हो सकता है कि इन्सान इन्साफ़ और सच्चाईयों से अपनी जान से ज़्यादा प्यार करे और इन्साफ़ व सच्चाई और अद्ल के असली सोते (Source) से दूर हो जाये?

अगर किसी की पूजा, इबादत भक्ति हो सकती होती तो संसार के चलाने वाले सिरजनहार के अलावा और किसी की नहीं।

कोई चीज़ भी ऐसी नहीं है जो इन्सान से अपनी ग़ुलामी और अपनी सराहना करा सके क्योंकि उसके अलावा कोई भी अपने से मूल्य (Value) क़ीमत में परम, बेलाग, असली और टिकाऊ नहीं है, सभी लगाव वाली (Relative/सापेक्ष्य) है और वे सिर्फ़ अपने से ऊँची जगह तक पहुँचने की सीढ़ी तक ही हो सकती है।

भक्ति, इबादत पूजा ये सिर्फ़ और सिर्फ़ ख़ुदा के लिए ख़ास है क्योंकि उसने हमें तरह–तरह की नेमतें दी हैं, वही हमारे जिस्मों में भरी ताक़त, हमारी हैसियतों और ज़रूरतों को बहुत अच्छी तरह जानता है। इसीलिए इबादत, भक्ति, पूजा सिर्फ़ और सिर्फ़ ख़ास उसी की है, सबका वजूद ('होना') उसी पर टिका है, सबका भरोसा उसी पर है। संसार उसी की मदद से उसकी तरफ़ बढ़ता जाता है। उसका हुक्म संसार के ज़र्रे–ज़र्रे पर चलता है। इसी से असल भक्ति इबादत उसी की ख़ास है जो संसार के ज़र्रे–ज़र्रे के दिल में है। हमारे जैसे बेबसी और कमज़ोरी के नमूने लोगों के आगे झुका जा नहीं सकता। वे ख़ुदा के राज में हमारी ज़िन्दगी पर छिन्ताई वाले कन्ट्रोल करने के भी क़ाबिल नहीं है। उनके आगे गिरने से इन्सान कहीं ऊँचा बड़ा है।

इन्सान को जिस की पूजा (भक्ति) करना चाहिए वह वही एक अकेला है जिसका कोई साथी साझी नहीं है। इन्सान पर ज़रूरी है कि अपने पूरे जतन सिर्फ़ और सिर्फ़ उसकी ख़ुशी पाने में लगा दे। ख़ुदा के अलावा किसी भी महबूब (जिसे चाहा जाए) या किसी चीज़ की भी ख़ुशी को ख़ुदा की ख़ुशी से ऊपर नहीं करना चाहिए। इसके माने इन्सान को अपनी ऊँचाई, बड़ाई और मान को मानना है। इन्सान एक छोटी सी बूँद है, अगर ये बूँद सागर के साथ न रहे तो हमेशा हलचल और बिगाड़ की मार पर रहेगा और आख़िर में सूख जाएगा, मगर जब दरया या सागर से

मिल जाएगा तो अपनी सही पहचान और हमेशा की ज़िन्दगी पा लेगा। उसका ख़ुदा उसकी सही ज़िन्दगी का सही मतलब हो जाएगा। ज़िन्दगी की सारी बातों के पीछे वही होगा। इसी जगह से हमारे लिए लोगों की हालतों के फैलाव और घुटन को समझा जा सकता है। हम या तो ऊँचाई, बढ़ावे, इन्साफ़ और सारे अच्छे चाल चलन और भले गुणों को ख़याली मान लें या ज़मीर, अन्तः कारण, नेचर और ज़रूरत के चलते इन्हें सच मानें, दोनों तरह से उस परम सच्चाई जो नेकी पुण्य, ज़िन्दगी, सकत और मूल्यों को दान करने वाला है, उसके आगे गिरना और अपना सर झुकाना ज़रूरी हो जाता है।

हम अगर ग़ौर करें तो मालूम हो जाएगा कि संसार की अनगिनत चीज़ें और हमारी सारी ज़रूरतें जिनकी जड़ें हमारी गहराईयों तक पहुँची हुई हैं, ये सब की सब एक सोते और एक बिन्दु से जुड़ी हुई है। वह सोता या बिन्दु ख़ुदा है। संसार की सारी सच्चाई और असलियत का मिलान उसी की तरफ़ है और सबका लगाव उसी से है। जो वजूद इस बिन्दु से शुरु होता है उसकी तरफ पलट कर जाता है। अकेला वही इबादत (भक्ति) के क़ाबिल है। जब इन्सान उसको पा ले और उसकी इबादत करने लगे तो फिर उसी को चाहेगा, उस परमेश्वर ख़ुदा को ऐसा चाहेगा कि किसी दूसरे का ख़याल भी ज़ेहन में न आ सके। हम देखते हैं कि दुनिया की सारी चीज़ें 'नहीं' थी फिर हो गयीं। उनका रहना चाहे कम हो या लम्बे समय का हो, उन्हें बाहरी ज़रूरत रही है, उनके चेहरे पर दबाव, बेबसी और बेकली की मुहर लगी हुई है।

जिस ख़ुदा को हम ढूँढते हैं कि मिले तो उसके क़रीब होने की कोशिश करें, अगर वह हमारी चाहतों, दुखों और दुनिया की सच्चाईयों से अनजान निकला या हमारी उम्मीदों और ज़रूरतों को

पूरा न कर सकने वाला और हमारी ही तरह कमज़ोर और अधूरा हुआ, तो हम भला उसको अपना मक़सद क्योंकर मान सकते हैं? उसकी सराहना, गुणगान कैसे कर सकते हैं? इबादत अगर किसी ज़रूरत को देखते हुए है तो सिर्फ़ ख़ुदा ही उसको पूरी कर सकता है, कोई दूसरा नहीं कर सकता।

कुरान मजीद का एलान हैः–

''बेशक वह लोग जिनकी तुम, ख़ुदा को छोड़कर, इबादत करते हो वो भी तुम्हारी तरह ख़ुदा के बन्दे हैं।'' (सूरा आराफ़ (07) आयत–193)

ख़ुदा को छोड़ किसी दूसरे के सामने झुकने या उसका ध्यान करने के लिए कोई दलील नहीं है, और न ही हमारी क़िस्मत पर उसका थोड़ा सा भी असर पड़ता है, क्योंकि अगर कोई ख़ुदा इन्सान की इबादत का हक़दार होगा और इन्सान को भलाई की ऊँची चोटी तक पहुँचा सकता होगा तो वह हर बुराई और हर कमी से पाक होगा। अपनी हमेशा रहने वाली किरनों से वह सारी मौजूद चीज़ों की ज़िन्दगी को सहारा देने वाला होगा और अपने भले रूप से हर अन्दर के मन वाले को अपने सामने झुका सकता होगा। वह इन्सान की हर तरह की ज़रूरतों को पूरा कर सकता होगा। मगर इन्सानी नेचर के सच्चे बनाने वाले (विधाता) तक न पहुँचकर उसकी पहचान का रास्ता पाया नहीं जा सकता।

अगर हमारा ख़ुदा कुछ ही तरह से ख़ास हो और कुछ ही चीज़ों और ज़रूरतों को पूरा कर सकता हो, तो जैसे हम अपनी ज़रूरतों को पूरा करा लेंगे, वह हमारी नज़रों से गिर जाएगा क्योंकि अब हमको उसकी ज़रूरत न रही। वह हमारे थम जाने की वजह होगा और न सिर्फ़ ये कि वह हमारी इबादत से भरी नेचर

को चैन न दे सकेगा बल्कि हमें किसी ऊँचे बड़े के बारे में ऊपर सोचने से भी रोक देगा और हमको एक सिमटे छोटे–छोटे घेरे में बन्द कर देगा। फिर ऊँचाइयों की तरफ़ बढ़ने की हमारी चाह भी मिट जाएगी।

हमारा ख़ुदा अगर हमारे दर्जे/क्लास का हुआ, न कि वह हमसे भी गिरे दर्जे का हो, तो वह हमारी भलाई का कारण नहीं हो सकता, और न वह हमारी उठान का ज़रिया हो सकेगा बल्कि हम अगर उसकी तरफ़ गये, तो गिरावट और नीचपन के और गहरे गड्ढे में गिर जाएंगे, जिसका नतीजा बेकली और परेशानी के सिवा कुछ न होगा। उस वक़्त हम अपने अभागापन और सदा की मरन को टाल न पायेंगे।

दुआ शुक्र (करने वालों) की बेहतरीन पहचान है

इबादत में जिसके आगे हम सर झुकाते हैं वह ख़ुदा इन्सान की चाल को ढंग पर लगा सकता है और चलने वालों के रास्ते में अंधेरे हटाकर रौशनी पैदा कर सकता है। वह वही ख़ुदा कि इन्सान की चाहतों, आरज़ुओं, आशाओं को पूरा कर सकता है। वह हमेशा से होने, हमेशा रहने में, ठहरे रहने में, असर और होने के, सबसे ऊँचे दर्जे पर है। वह रूहानी असर देने वाला और सोच और कामों में रास्ता दिखाने वाला और इन्सान की तरक़्क़ी के सफ़र को आसान बनाने वाला है।

ग़लत मक़सद की तरफ उठने वाला इन्सान का कोई क़दम उसको अपने 'आप' से दूर कर देता है और उसकी असलियत को बिगाड़ देता है।

ख़ुदा के पहचानने से हट कर इन्सान ख़ुद को भी ठीक तरह से समझ नहीं सकता। ख़ुदा को भूलने ही से जुड़ा अपने आप को भूलना है और इन्सानी ज़िन्दगी के समूचे मक़सद से बेहोशी

है। जिस दुनिया में वह पहुँच चुका है, वहाँ रहकर ऊँचे सपने भी नहीं देख सकता, उसकी सोच किसी भी तरह की ऊँची उड़ान नहीं भर सकती।

जिस तरह ख़ुदा को छोड़ दूसरे से लगाव इन्सान को 'अपने' से पराया बना कर एक चलती फिरती मशीन बना देता है उसी तरह ख़ुदा पर भरोसा और उस तक पहुँच भुलावे में डूबे हुए रूहानी ज़िन्दगी से ख़ोखले इन्सान को बेहाशी के सागर से निकल कर उसे असली हालत में पलटा देती है। 'सत्य' की इबादत के साये में रूहानी और दैव्य (फरिश्तों वाली पाक) ताक़तें परवान चढ़ती हैं, फिर इन्सान अपनी घटिया चाहतों, बेभाव की सिमटी हुई मैटरियल आशाओं और अपने अन्दर की कमियों और बिगाड़ को समझ जाता है। इस तरह वह अपनी असली बड़ाई को पहचान जाता है।

''जिसने अपने को पहचान लिया, उसने ख़ुदा को पहचान लिया।''

ख़ुदा की याद और उससे क़रीब होना दिल में उजाला और मन में जीवन भर देता है और वह उस मज़े का रसिया कर देता है, जिसका अन्दाज़ा दुनिया के मज़ों से किया ही नहीं जा सकता। बस उस परमात्मा, Absolute सच्चाई का ध्यान लगाना सोंच को तरक़्क़ी और मूल्यों (Values) के मान को बढ़ा देता है।

हज़रत अली (अ0) 'दिलों में ख़ुदा के ज़िक्र का अजीब असर होने' का बयान करते हैं:

''ख़ुदा ने अपनी याद को दिलों की चमक ठहराया है। ख़ुदा के ज़िक्र के नतीजे में दिल बहरे होने के बाद सुनने लगते हैं अन्धे होते हुए देखने लगते हैं, सर उठाने और अकड़ने के बजाए नर्म और मुलायम

हो जाते हैं'' (नह्जुल बलाग़ह ख़ुतबा न0 22)

एक और जगह फ़रमाते हैं:

''ऐ ख़ुदा तू अपने दोस्तों का बेहतरीन साथी और अपने पर भरोसा करने वालों के लिए तू सबसे बड़ा, संकटमोचन (कठिनाइयों को दूसर करने वाला), उनके अन्दर के हालात को देखने वाला, उनके अन्दर के मन की गहराईयों को अच्छी तरह जानने वाला है, उनकी सूझबूझ और सोच समझ की हदों का जानकार है। उनके सारे राज़ों तुछ पर खुले हैं, उनके दिल तेरी विरह में बेचैन हैं। अगर अकेलापन उनके लिए बेकली और डर के कारण हो, तो तेरी याद उनके दिल रखने वाली, अगर कड़ाई उन पर बोझ हो, तो तू उनकी शरन है।'' (ख़ुतबा न0 225)

मशहूर साइकॉलोजिस्ट विलियम जेम्स (William James) कहता है:–

इन्सान का इबादत (उपासना) की तरफ़ ध्यान इस बात का नतीजा है कि इन्सान की ज़ाती समझ चाहे निजी और प्रेक्टिकल पहुँच की गहरी क़िस्म से हो, फिर भी वह अपने भरपूर साथी की सोंच की दुनिया में ही पा सकता है और ज़्यादातर लोग चाहे बराबर या इत्तेफ़ाक़ से ही अपने दिल को उसकी तरफ़ मोड़ देते हैं तो इस तरह ज़मीन का सबसे गिरा हुआ भी उस ऊँचे ध्यान की वजह से अपने को सच्चा और भाव वाला समझने लगता है।

महान ख़ुदा के दरबार में इन्सान के लिए शुक्रिये का सब से ऊँचा तरीक़ा यह है कि उसकी इबादत (उपासना) करें और

उससे मोहब्बत ज़ाहिर करें। ये भी संसार की सारी चीज़ों से तालमेल का तरीक़ा है। कुरान कहता है:

"सातों आसमान और ज़मीन और जो लोग उन में हैं, उसकी तसबीह (कीर्ति भजन) करते हैं। बस कोई भी चीज़ ऐसी नहीं है जो उसकी हम्द (संस्तुति, कीर्ति, सराहना) की तसबीह न करे, लेकिन तुम उनके कीर्ति भजन को नहीं समझते। वह तो बड़ा नर्म, क्षमा करने वाला है।"

(सूरा 'असरा' (17) आयत–43)

यह अलग बात है कि यह इबादत उसको ज़र्रा बराबर भी फायदा नहीं पहुँचाती क्योंकि वह तो परम् (Absolute) कमाल (पूरापन / Perfection) है। संसार और इन्सान उसे किसी तरह ज़र्रा बराबर भी न बढ़ा सकते हैं, न घटा सकते हैं। भला यह कैसे सोचा जा सकता है कि जिसने इन्सान को पैदा किया है, वह उसकी भक्ति, उपासना, इबादत और पाकी के भजन कीर्तन से कुछ फायदा उठा सकता है। हाँ, इन्सान ख़ुद उस असली सच्चाई (Absolute Truth) की पहचान और इबादत करके अपने सही कमाल, अपनी हक़ीक़त और अपने आख़री मक़सद तक पहुँच सकता है। फ़लासफ़ी के प्रोफ़ेसर और मशहूर फिज़िशिष्ट रेमण्ड रिवाया संसार में अक़्ल के होने के सिलसिले में कहते हैं:–

माडर्न साइंस कहती है, ज़र्रे और सारे अणु (Molecules) जो करते हैं, उसे जानते हैं। ये अपने सारे काम और ज़िन्दगी में लगातार होने वाले चलनों को अच्छी तरह जानते हैं और अपनी समझ से फ़िज़िक्स के जानकारों से ज़्यादा जानने वाले हैं, क्योंकि फ़िज़िक्स के जानकार एक ऐटम के बारे में जो जानते हैं वह यह कि अगर ये ऐटम महसूस करने और पहचानने के क़ाबिल न होता,

तो इस बारे में कोई क्या जानता?

जिस्म, चाल–ढाल, तेज़ी, यहाँ–वहाँ, किरनें, बैलेन्स, स्पेस, दूरी, यह सब के सब ऐटम की वजह से हैं। अगर ये ऐटम न होता तो वजूद यानी 'है' की दुनिया में इन अनोखे जलवों को कौन पैदा करता? समझ और जिस्म में वही रिश्ता (Proportion) है, जो चलने और ठहरने में है। लेकिन यह स्पेस अपने गुट के अन्दर अन्धा नहीं है। आपको याद होगा, यह बात साबित हो चुकी है कि किसी चीज़ को देखने के लिए ख़ास चीज़ आँख है, लेकिन आँख इन्सानी कुव्वत सकत की हदों में घिरी हुई है। इसका ताल्लुक़ सिर्फ़ ज़मीन और ज़मीनी चीज़ों से है। इसलिए इसके फ़िज़िकल काम का मैदान भी घिर गया है। इसलिए ज़मीन और सूरज, सूरज और गैलक्सियों के बीच आँख का कोई काम नहीं है। एक ज़मीनी अंग के लिए यह कहाँ हो सकता है कि वह इन चीज़ों को भी देख सके?

लेकिन इसी दलील से हम इस बात की सच्चाई जता नहीं सकते कि बड़ी–बड़ी सकत और तगड़े–तगड़े बदलावों के मैदान में अन्धेर और नासमझी का राज़ है। महान ताक़तों का मतलब जैसे आकाशगंगाएं (Galaxies), जिनमें केवल आकर्षण (Gravitation), सन्तुलन (Equilibrin), चाल (Motion), रौशनी (Light), तेज़ी और केन्द्र (Centre) से दूरी के नियम राज करते हैं, उनमें यह नासमझी है, हम इसको सच नहीं बता सकते। हाँ, ये अजीब चीज़ें, अन्धी नहीं हैं। हद यह है कि रौशनी के वह कर्ण जो अपने चलने में एक डाकिया का काम करते हैं वे भी ख़बरों और इशारों (Signals) को पहुँचाने में बेफ़ायदा नहीं हैं।

ख़ुदा के गुण अटकल वाले नहीं है

अपनी पूरी की पूरी कोशिश जुटा कर भी हमें ख़ुदा और

उसके गुणों को अच्छी तरह जानने समझने के लिए ऐसे शब्दों और मानों की ज़रूरत हैं जो हमारी पहुँच के बाहर हैं। उसके सच्चे गुण बताने के लिए हमारे लाये हुए शब्द (Terms) हमारी मदद करने में ओछे हैं। उसके 'बेहद गुणों' की हालत समझ में आना हमारे सिमटे और घिरे हुए मन के बस से बाहर है। ख़ुदा इन्सान के बनाये शब्दों और मानों से कहीं ऊँचा है।

इन्सान ख़ुद उसी का पैदा किया हुआ है और हर तरह से अपनी हदों से घिरा और सिमटा है। उसको इस फेर में नहीं होना चाहिए कि पराभौतिक (Metaphysical) सच्चाई को मैटरियल गुणों से तौला या बयान किया जाए।

मैटरियल चीज़ों से परे की सच्चाई के बारे में हमारी चर्चा है जिसकी परम सकत और बेहद ज्ञान दूसरी सारी चीज़ों को घेरे हुए है। कुरानी मतलब से वह किसी भी पैदा की हुई घिरी सिमटी चीज़ जैसा नहीं। (सूरा 'शूरा' (42) आयत–91) सीधी सी बात है ऐसे को आम चालू विषयों की तरह बयान नहीं किया जा सकता। हज़रत अली (अ0) का कहना हैः–

> *''जो भी ख़ुदा को किसी से उपमा (Simile) दे, या उसका जैसा ठहराये, या मिलाये या उसकी पाक ज़ात (निज) की ओर इशारा करे (उसे चिन्हित करे), उसने असल में ख़ुदा का इरादा किया ही नहीं। ख़ुदा के गुणों के बारे में आदमी की 'सोच', 'समझ' सब (पैदा करने वाले सिरजनहार) की बनायी हुई है। ख़ुदा पैदा करने वाला 'सिरजनहार' बनाने वाला है। जो चीज़ भी दूसरे के सहारे से हो वह 'नतीजा' और 'पैदा की/बनायी गयी, होती है। मगर ख़ुदा तो बस और बस कारण' है।''*

ख़ुदा 'कारणों' और माध्यम, रास्ते, कलपुर्ज़ों के बिना पैदा करता है, सोच विचार की मदद लिए बग़ैर, रूपरेखा तैयार किये बिना अन्दाज़ा करता है, उसे किसी की ज़रूरत नहीं है, वक़्त और जगह (Time & Space) उसके साथ नहीं हैं, मशीनें और हथियार उसकी मदद नहीं करते। वह हमेशा से है, कोई भी उससे पहले नहीं, वह हमेशा रहेगा। वह किसी हद में बन्द नहीं है। उसके यहाँ चलना, हिलना और रुकना, ठहराव जैसी कोई बात नहीं। और यह कैसे हो सकता है कि जिन चीज़ों को उसने पैदा किया है वे उसके वजूद में हों? अगर ख़ुदा की ज़ात में चाल और ठहराव होगा तो उस में बदलाव आएगा और उसके वजूद का हमेशा से हमेशा होना नहीं रह सकेगा। वह सारी कुव्वतों (Energies) का स्रोत (Source) है इसलिए कोई भी उसमें असर डाल नहीं सकता यानी यूँ कि वह ऐसा पैदा करने वाला है जो किसी बदलाव को नहीं ले सकता और कभी मिट नहीं सकता। (फिर भी) पहचानने वालों की सूझबूझ की आँख (तीसरी आँख) से छुपा भी नहीं रह सकता। (नह्जुल बलाग़ह खुतबा (व्याख्यान) न0 185)

सीधी सी बात है कि इस बारे में चर्चा ज्ञान की, ऊँची और बहुत गहरी बहेस है। हज़रत अली (अ0) फ़रमाते हैं: जिसने उसे हालतों वाला समझा, उसने उसे एक अकेला नहीं समझा, जिसने उसे किसी का रूप दिया, वह उसकी सच्चाई तक नहीं पहुँचा। जिसने उसे किसी जैसा समझा तो उसने उसके लिए अपना मन ही नहीं किया (उसे सोचा ही नहीं), जिसने उसकी तरफ़ इशारा किया या ख़याल में लाना चाहा, उसने उसको बेपरवाह (हर ज़रूरत हर की ज़रूरत से आज़ाद) नहीं समझा जो अपनी ज़ात के सहारे से 'पहचाना' जाए वह 'बनने वाला' पैदा हुआ या होता है। जो दूसरे का सहारा ले, वह ज़रूरत का गुलाम होता है। वह तो किसी तरह

की मशीनरी कलपुर्ज़ों को इस्तेमाल किये बग़ैर काम करने वाला (कारक) है। वह सोच को काम में लाये बिना अन्दाज़ तै करने वाला है। वह दूसरों से फ़ायदा उठाए बग़ैर छका हुआ है, भरा पुरा है, न समय उसका साथी है और न कोई चीज़ उसका सहारा है। वह हमेशा से है, पहले से है, उसका 'होना' समय से पहले है और 'नहीं' के बिना है। उसने समझ की ताक़तों को पैदा किया है, इसलिए वह ऐसी 'समझ' को अपना हथियार नहीं बनाता। चूँकि उसने हर चीज़ में उसका 'तोड़' रखा है। इसलिए पता चलता है कि उसका तोड़ नहीं हो सकता है। उसने चीज़ों को एक दूसरे के साथ रखा (उसने जोड़ बनाया) इसलिए मालूम हुआ कि उसका कोई साथी (जोड़) नहीं है। उसने उजाले को अंधेरे का, ख़ुशकी को गीले का और गर्मी को सर्दी का उलटा (विलोम) बनाया। वह एक दूसरे की दुश्मन चीज़ों को आपस में जोड़ने वाला, अलग–अलग चीज़ों को मिलाने वाला, दूर–दूर को पास–पास करने वाला और मिली हुई चीज़ों को अलग–अलग करने वाला है। वह किसी सीमा में घिरा हुआ नहीं है। वह गिनती में आने वाली चीज़ नहीं है। मैटर वाली चीज़ें हमेशा मैटर वाली चीज़ों को घेरा करती हैं और अपने जैसों की तरफ़ इशारा किया करती हैं। ख़ुदा के गुणों और हमारे गुणों में फ़र्क़ है और दोनो का अन्दाज़ा नहीं हो सकता, इसकी वजह ये है कि 'कारण', 'Source' के गुणों के मतलब और सारी दूसरी चीज़ों (नतीजों) के गुणों के मतलब में बहुत फ़र्क है। जैसे हम कुछ काम कर सकते हैं, लेकिन हमारी सकत उन पर ऐसी नहीं है जैसी सकत ख़ुदा रखता है, क्योंकि हमारी सकत की बात कुछ और है और उसकी सकत की बात कुछ और है। जब हम अपने जानने के बारे में बात करते हैं तो हम और हमारा 'जानना' दोनों चीज़ अलग–अलग हैं क्योंकि बचपन में हम थे मगर हमारा

'जानना' नहीं था, हम तो बाद में, धीरे–धीरे जानने लगे। इसका मतलब है कि 'जानना' और 'सकत'/ताक़त हमारे वजूद ('हम') से अलग चीज़ें हैं। ये 'जानना' 'हम' नहीं हैं, 'हम' 'जानना' नहीं है इन दोनों का हिसाब अलग–अलग है। लेकिन ख़ुदा के यहाँ ऐसा नहीं है। जब हम कहते हैं कि ख़ुदा 'जानने वाला' है, ख़ुदा सकत वाला है तो हमारा मतलब यह होता है कि ख़ुदा 'जानने' और सकत का स्रोत Source है।

यहाँ विशेषण (Adjective), Quality/गुण और विशेष्य (Qulified/गुण का पात्र) वाली बात नहीं है। विशेषण और विशेष्य मानों में अलग–अलग होते हैं, लेकिन जब ख़ुदा की बात की जाए तो ये दोनों एक होते हैं क्योंकि वहाँ कोई ऐसी चीज़ (वस्तु/पात्र/Object) नहीं जिस पर ये गुण जा लगे। ख़ुदा के गुण, ख़ुदा की ज़ात (Essence/Person/आत्मा) में 'बस' है वही बिल्कुल 'है' (परम–अस्तित्व/परमात्मा/Absolute Existence) है जो बस 'ज्ञान' ('जानना') ही है, बस 'सकत' ही है, बस 'जीवन' ही है, बस 'ठहराव' ही है। 'है' बस वही है, 'ज्ञान' बस वही है, 'सकत' बस वही है, 'जीवन' बस वही है, 'ठहराव' बस वही है।) उसके साथ कोई सोच वाली या बाहरी हद है, न बन्धन।

सच बात ये है कि हम नेचर (प्राकृति) की गोद के पले पोसे हुए हैं। हमने उसी रंग–बू के संसार में आँख खोली और प्राकृति के सिस्टम से हम बराबर रहे और यहाँ हमने जो भी चीज़ देखी है उसके ख़ास रूप, आयाम में समय–जगह (Time & Space) है। पिण्ड या जिस्म के ख़ास गुण होते हैं। नेचर की सामने वाली चीज़ों के मानों हमारे मन के जाने पहचाने हैं। इसी से हम इन्हीं की नापों से हर चीज़ को नापने लगे हैं, हम इन्हीं की तरह हर चीज़ का अन्दाज़ा करने के आदी हो गये हैं।) फिलासफ़ी से और

साइन्सी रिसर्चों से यह नतीजा निकला है कि हमारी अक़्ल समझ और सोच वाले 'माने मतलब' पहले दिन से यहीं के बने बढ़े, पले हैं।

इसी लिए एक ऐसे वजूद के बारे में सोचना जिसमें मैटर की कोई भी बात या गुण न हो, इस माने में कि हम अपने मनों में जो कुछ भी सोचें या कल्पना करें, वह वजूद उससे अलग हो। ऐसी ज़ात के गुणों का समझना जिसके गुण उससे कभी किसी भी तरह अलग न हो सकते हों, बहुत ही मुश्किल बात है। इसके लिए ज़रूरी है कि हमारा दिमाग़ पूरे तौर से वो मैटर, चीज़ें, तसव्वुर/धारणा से ख़ाली हों।

हज़रत अली (अ0) ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि इन्सान अल्लाह को अपने सोचे बन्धे टिके गुणों में बन्द करके समझ नहीं सकता, उसकी परिभाषा (Defination) नहीं कर सकता। आप कहते हैं:

> *''ख़ुदा को एक मानना तब पूरा होता है जब उससे गुणों की 'नहीं' की जाए (उसे निर्गण माना जाए) क्योंकि हर गुण इस बात की गवाही देता है कि जिसमें ये गुण पाया जाता हो उस गुण से वह अलग है। जिसने ख़ुदा के गुण बयान किये उसने जैसे (इन गुणों को) ख़ुदा का साझी बना दिया और जिसने ख़ुदा का साझी बना दिया, उसने ख़ुदा के हिस्से टुकड़े ठहरा दिये। जिसने ख़ुदा के लिए हिस्से टुकड़े ठहराये, वह ख़ुदा को पहचान ही नहीं सका।''*

(नहजुल बलाग़ा का पहला खुतबा)

दिमाग़ की सोच में इतनी समायी नहीं कि वह गुणों की हदों में ख़ुदा की परिभाषा (Defination) या पहचान कर सके। या

जिस तरह कोई अर्थ मतलब अपने पर्याय (वह जो इस अर्थ को सच कर दे) पर खप जाता है, उसी तरह ख़ुदा के गुण उस पर जा खपें, यह बात नहीं हो सकती। हर एक गुण और बात अपने ख़ास माने में दूसरे गुण या बात से अलग होती है। जेसे, 'जीने' का मतलब, ताक़त के मानों से बिल्कुल अलग अजनबी होता है। एक के माने दूसरे पर नहीं खपते। हो सकता है, कोई ऐसा पर्याय मिल जाये जिन में ये गुण मिल जायें, फिर भी एक–एक शब्द अपने ख़ास माने ही पर खपेगा।

जब इन्सान की अक़्ल किसी चीज़ का कोई गुण बताना चाहती है, उसका मक़सद यह होता है कि उसके गुण और उसमें एक तरह का एका बना रहे, लेकिन चूँकि गुण माने से चीज़ विशेष से अलग है, इसलिए चाहते, न चाहते हुए भी दोनो में अलगाव एक–दूसरे का पराया समझना और मानना ही पड़ता है। चीज़ों की पहचान का एक ही तरीक़ा, दिमाग़ी सोच से उनके गुण बताना है। ये सोच की नज़र में एक दूसरे से अलग हैं। फिर उन गुणों का हदों में रहना ज़रूरी है। इसीलिए वह ज़हनी मतलब उस परम सच्चाई को समझने या पहचानने से बेबस है और वो पाक ज़ात गुणों से पहचाने जाने से कहीं ऊँची है।

एक मिसाल देकर यह बात समझाने की कोशिश करूँगा कि ख़ुदा के गुण ख़ुदा से अलग नहीं हैं। आप सोचिए कि आग का लूका हर चीज़ को गर्म कर देता है यानी आग का एक ख़ास गुण जलाना और गरमाना है। क्या आग का ये गुण लूके के एक ख़ास हिस्से में होता है। ज़ाहिर है, गुण ऐसा नहीं है, बल्कि पूरे का पूरा लूका यही गुण रखता है। एक आदमी ने छठे इमाम हज़रत जाफ़र सादिक़ (अ0) से ख़ुदा की हक़ीक़त के बारे में पूछा तो आपने फ़रमाया:–

''वह एक ऐसी चीज़ है जो हर चीज़ से अलग है, वही अकेला बस असल सच्चा वजूद है, वह न पिण्ड रखता है, न रूप और न वो छूने, देखने, सूँघने वग़ैरा से महसूस किया जा सकता है और न ठोह और कोशिश के रास्ते से उसे पाया जा सकता है। सोच और ख़याल उसको समझने में बेबस हैं। समय उसे घुला मिटा नहीं सकता, उसमें कमी नहीं कर सकता। कोई भी उसमें कुछ भी बदलाव नहीं कर सकता।''

''फ़िज़ियोलोजिस्ट पॉल क्लेरेन्स (Paul Clarence) कहता हैः पाक किताबों तौरेत, इंजील में जब भी ख़ुदा की बात की जाती है, तो उन्हीं लफ्ज़ों से की जाती है जो इन्सानों के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। सीधी सी बात है कि ये डिक्शनरी की कमी की वजह से है, वरना ख़ुदा का मतलब एक रूहानी माने में है। इन्सान जिसकी सोच मैटर की चार दीवारी में घिरी हुई और बन्द है, वह ख़ुदा की ज़ात की सच्चाई तक पहुँच ही नहीं सकती है, और न उसके माने पर खपने वाली कोई बात ही बता सकती है।''

हम ख़ुदा की ज़ात और गुणों को किसी भी तरह नहीं घेर सकते, फिर भी जिस हद तक हमारी सकत चल सके, जहाँ तक जैसे हो सके हमें उसकी पहचान के रास्ते पर क़दम बढ़ाने की कोशिश करते रहना चाहिए।

ख़ुदा का एक अकेला होना

जब कभी मज़हबी चर्चाओं में तौहीद (ख़ुदा का एक होना) की बात छिड़ जाती है तो उससे ख़ुदा की ज़ात और गुणों में संसार पर राज करने में, उसके सिस्टम के चलाने में और दूसरी

तरहों से उसकी इकाई और ऐकता का ही मतलब होता है। जिस तरह उसकी एक ज़ात में कई की गिनती सोची नहीं जा सकती है, उसी तरह वह गुणों में भी एक है। उसकी ज़ात और गुण किसी तरह से अलग–अलग नहीं हैं, क्योंकि अलगाव घेर देता है और ख़ुदा की ज़ात और गुण घिरे नहीं हैं। अगर हम ख़ुदा की ज़ात (निज) और गुणों को एक नहीं गिनते या उनमें किसी तरह का अलगाव मानते हैं तो यह हमारी सोच समझ की वजह है। उसमें किसी तरह से या किसी लगाव से एक छोड़ किसी गिनती का कोई सवाल नहीं है।

अगर हम किसी चीज़ को रंग–रंग के शीशों के पीछे से देखें तो हर बार वो अलग रंग की दिखाई देगी। उसी तरह जब हम अपनी अक़्लों से ख़ुदा की तरफ़ देखते हैं तो कभी इस तरह कि सारी चीज़ें उसके सामने हैं, तो उसको जानने वाला (सर्वज्ञ) कहते हैं। जब इस तरह से नज़र करते हैं कि वह हर चीज़ पर ज़ोर रखता है तो उसको सकत रखने वाला (क़ादिर/सर्वशक्तिमान) कह देते हैं। हम अपने गुणों को जब रंग–रंग के झरोकों से देखते हैं तो वैसे ही अलगाव ख़ुदा के गुणों में भी समझते हैं। यह सब गुण एक 'है', एक सच्चाई का पता देते हैं। वह सच्चाई वही है जो हर कमी से दूर है और जो सारे कमाल (पूरेपन) का रूप है जैसे ज़ोर, सकत, रहमत, दया, जानना, समझ, तेज, रोब वग़ैरा।

जब हमने जान लिया कि ख़ुदा का वजूद ख़ुद से है तो अब ये जानना चाहिए कि ये परम वजूद (Absolute Existence) हर तरह से ग़ैर महदूद यानी हदों से परे है।

ख़ुदा का एक और अकेला होना उसके खुले हुए गुणों से है। तमाम आसमानी मज़हबों ने अपनी असली और बेबदली, अछूती शिक्षाओं में सारे इन्सानों को उसे एक और अकेला मानने को कहा

जो हर तरह के साझे (दूसरे को शामिल करना) से बचा है क्योंकि शिर्क (साझापन) अपने सब चेहरों और तरहों से इन्सान के लिए सबसे बड़ा नुक़सान पहुँचाने वाला धोखा है। ये सब अनजानेपन, नासमझी की वजह और अक़्ल और ख़ुदा के नबियों की तौहीद की शिक्षाओं से फिरने की वजह से है। अगर लोग सही सोच और अक़्ल की दलीलें और नबियों की बताई हुई बातों से ख़ुदा को मानते, तो ख़ुदा को छोड़कर किसी और पैदा की हुई चीज़ को ख़ुदा की जगह ख़ुदा न मानते। कोई भी हुक्म चलाने, भाग्य बनाने या किसी काम में ख़ुदा का साझी या हाथ बटाने वाला नहीं हो सकता।

जब हम यह कहते हैं कि अल्लाह एक है तो इसका मतलब यह हरगिज़ नहीं कि ख़ुदा जिस्म (शरीर) रखता है क्योंकि जिस्म तो कई चीज़ों से मिलकर बना है और हम अल्लाह के लिए मिलने, टूटने और पैदा होने, इन सारी बातों से इन्कार करते हैं क्योंकि ये बातें (कारण से) हो सकने वाली चीज़ों के गुण हैं और हर वह चीज़ जो मिलाने या जोड़ने से पैदा हुई हो, वह न ख़ुदा हो सकती है और न ख़ुदा के जैसी हो सकती है। ख़ुदा के कई रूप तभी सोचे जा सकते हैं जब उस पर मात्रा (Mass), हालतें और समय, जगह (Time & Space) जैसी बातें सच होतीं। ख़ुदा में ऐसी बातें और बन्धन नहीं होते। इसलिए किसी तरह ख़ुदा का रूप, उपमा यानी उसका जैसा रूप भी सोचा नहीं जा सकता।

अगर किसी बन्धन के बग़ैर पानी की हक़ीक़त के बारे में सोचें और कई बार सोचें तो पहली सोच में पानी सिर्फ़ पानी रहेगा क्योंकि पहली बार बग़ैर किसी पाबन्दी और हालत के सोचा था इसलिए पानी ही सोचा पहली हालत में किसी दूसरी या तीसरी बार सोचने से पानी के अलग–अलग रूप नहीं उभरेंगे।

लेकिन अगर पानी की हक़ीक़त से बाहर उसके बन्धनों को बढ़ा दें तो सोर्स और हालतों से पानी के कई 'रूप' हो जायेंगे जैसे बारिश का पानी, सोते का पानी, नहर का पानी, समन्दर का पानी। तरह–तरह के वक़्त और जगहों में, यहाँ और वहाँ के बन्धन से रूप या नाम बढ़ते ही जाएंगे। लेकिन जब असल हक़ीक़त ही पानी सामने रखेंगे तो उसके कई नाम, रूप नहीं हो सकते और वह सिर्फ एक ही हक़ीक़त रह जाएगी।

इसी तरह यह बात भी ध्यान में रखने वाली है कि जो चीज़ किसी जगह में होगी तो उसे जगह की ज़रूरत होगी और जगह के अन्दर रहने वाली चीज़ अपने से सही समय और जगह की सौंपी हुई होगी और सिर्फ़ उसी ज़माने तक रहेगी जब तब वे ख़ास शर्तें हैं। लेकिन अगर हमको ऐसा मिले जिससे कोई समय, कोई जगह ख़ाली न हो और उसमें सबसे ऊँचे गुण पाए जाते हों और पूरी तरह से बिल्कुल (Absolute) हो। उसके अलावा कोई दूसरी चीज़ न पूरी तरह से परम (Absolute) हो और न उसको छोड़ कोई और कमी और बुराई से दूर हो तो ऐसे में ख़ुदा के दो होने को सोचना यानी उसे हदों में बन्धा घिरा सोचना है।

बुनियादी तरह पर ख़ुदा गिनती से ऐसा एक नहीं है कि उसके जैसा दूसरा सोचा जाए बल्कि वह एक ऐसा अकेला है कि अगर उसके साथ किसी दूसरे को सोचा जाए तो भी वह बस वही पहले वाला होगा।

चीज़ों की गिनती के लिए ऐसे बन्धनों का होना ज़रूरी है जो उनको एक दूसरे से अलग और ख़ास कर दें इसलिए अगर कोई ऐसा मान लिया जाए जो हर शर्त और बन्धन से आज़ाद हो तो वैसी दूसरे चीज़ का ख़याल एकदम बेअक़ली होगी।

खुदा के अकेले होने का मतलब यह है कि अगर हम सिर्फ़ ख़ुदा को सारी चीज़ों से अलग हटके ऐसा सोचें यूँ तो इस तरह सोचना बहुत मुश्किल है— जो ख़ुदा किसी साझी या उसके जैसे या उसके बेटे या बाप के बिना हो तो भी उस सोच में ख़ुदा का ही ख़याल उभरे, सोचा जा सकता है। इसी तरह ख़ुदा को सारी चीज़ों के साथ सोचने से भी उसका वजूद बग़ैर किसी के साझे के बाक़ी रहे लेकिन सारी चीज़ों को ख़ुदा के वजूद के बग़ैर सोचने से वे चीज़ें बाक़ी न रह सकें क्योंकि सारी चीज़ें अपने होने और बाक़ी रहने में ख़ुदा के सहारे पर हैं। जब ख़ुदा ही न होगा तो ये चीज़ें क्योंकर हो सकती हैं? इसलिए अगर ख़ुदा के लिए कोई शर्त या बन्धन मान लें, तो उस शर्त या बन्धन के हटने या मिटने से ख़ुदा भी मिट जाएगा। हमारे ऐसा मानने से हमारी सोच में उसका वजूद न रहेगा) क्योंकि ख़ुदा का वजूद अपने में बस एक, Absolute (जिसे आप ज़बान में निखट्टू कहते हैं), बिना शर्त है उसकी गिनती सोची नहीं जा सकती। इसीलिए अक़्ल उसकी तरह का दूसरा एक (नग) नहीं सोच सकती। मिसाल के लिए मानो इस दुनिया की कोई हद नहीं है और न इसका कोई आख़री छोर है। हम उसके किसी भी तरफ़ चलना शुरु कर दें, तो उसकी आख़री बिन्दु (Point) तक नहीं पहुँच सकेंगे। इस तरह के संसार के मान लेने के बाद क्या हम दूसरा संसार सोच सकते हैं? कभी नहीं, एक बेहद और बेछोर के संसार को मान लेना ख़ुद ही उसके साथ किसी दूसरे संसार के सोचने में रोक होगा क्योंकि वह दूसरा ख़याली संसार या तो यही संसार होगा या इसका ही एक टुकड़ा। इसलिए जब हमको ये मालूम है कि ख़ुदा ख़ुद का 'होना' बस (परमात्मा/Absolute) 'है' तो अब उसके साथ उसी जैसा दूसरा ख़ुदा मानना ऐसा ही है जैसे इस संसार को बेहद और

बेछोर वाला मानकर एक ऐसी ही दूसरी दुनिया को मानें।

इस से ये बात साफ़ हो गई कि 'अल्लाह एक अकेला है' इसका मतलब ये नहीं कि दूसरा ख़ुदा नहीं है बल्कि इसका मतलब यह है कि उसके साथ दूसरा ख़ुदा किसी भी तरह से सोचा भी नहीं जा सकता है।

ख़ुदा के होने की असल उसके एक अकेले होने से ही जुड़ी/बन्धी हुई है। वह अपने से अपने में एक अकेला इकलौता (और निखट्टू) है। इस तरह वह दूसरी चीज़ों से अलग हो जाता है जबकि दूसरी चीज़ें अपने में दूसरों से अलग पहचानी नहीं जा सकतीं। वहाँ ख़ुदा ने ही जो अलग पहचान के कारण उन्हें दिये हैं, उनसे ही वह अपनी–अपनी अलग–अलग पहचान बनाती हैं।

अगर 'अल्लाह' को सही–सही और ठीक–ठीक माने समझ वाले इन्सान के मन में सच हो जाये और इन्सान सही तरह उसकी पहचान (ज्ञान) पा जाये तो अपने आप वह मान जायेगा कि ख़ुदा का 'कई होना' बिल्कुल से ही नहीं हो सकता।

हम अच्छी तरह साफ़–साफ़ देख रहे हैं कि चलने वाला एक ही सिस्टम पूरी तरह से दुनिया के ज़र्रे–ज़र्रे में काम कर रहा है। इन्सान पेड़–पौधों के लिए हमेशा कार्बनडाइ आक्साइड गैस पैदा करता रहता है और पेड़–पौधे इन्सान के सांस लेने के लिए आक्सीजन छोड़ते रहते हैं। इस तरह इन्सानों और पेड़–पौधों के बीच लेन देन में अक्सीजन की एक ख़ास नाप भर बची रहती है। अगर ऐसा न होकर कुछ और हो जाये तो ज़मीन पर इन्सानों का अता पता न रहे।

ज़मीन सूरज से उतनी ही गर्मी लेती है जितनी उसकी चीज़ों को ज़रूरत होती है। ज़मीन का सूरज के चक्कर लगाने की चाल और ताक़त व गर्मी के महान ख़ज़ाने सूरज से ज़मीन की दूरी

उतनी ही रखी गई है जिससे इन्सान ज़िन्दा रह सके। अगर ज़मीन की चाल एक घन्टे में एक हज़ार मील से घटकर सौ मील हो जाए तो ये दिन–रात दस गुना बढ़ जाएंगे और गर्मी के मौसम में इतनी गर्मी बढ़ जाए कि सारे पेड़–पौधे जल जाएंगे और जाड़े के ज़माने में इतनी सर्दी बढ़ जाए कि सब पेड़–पौधे जम जाएं। अगर सूरज की गर्मी जितनी इस वक़्त है उससे घटकर आधी रह जाए तो सर्दी में सब जानदार जम जाएंगे और वह किसी तरह की हिलडुल न सकेंगें। अगर यह गर्मी दो गुना बढ़ जाए तो भी कोई ज़िन्दा नहीं रह पाएगा।

इसी तरह ज़मीन से चाँद की दूरी बहुत ज़्यादा (कम) हो जाए तो तो समन्दरों में ऐसे उतार चढ़ाव (ज्वारभाटा) आएं कि पहाड़ों को उखाड़ के फेंक दें।

ये दुनिया कुछ इस तरह पैदा की गई है जैसे ये एक क़ाफ़ला है जिसमें चलने वाले सब के सब लोग आपस में ज़ंजीर की कड़ियों की तरह जुड़े हुए हैं और ये सब एक ही सिस्टम के छोटे बड़े हिस्से की तरह एक ढंग से अपने–अपने काम में जुटे हुए हैं। इस सिस्टम के एक–एक हिस्से का अपना–अपना कामधाम और अपनी–अपनी ज़िम्मेदारी है। वे एक दूसरे की मदद करके एक दूसरे की पुरौती करते हैं। ज़र्रे–ज़र्रे के बीच आपस में एक गहरा रिश्ता है।

मशहूर विचारक रवाया कहता है:

इस संसार की सारी पैदा हुई चीज़ों में ज़ंजीर या तागे से बंधा हुआ मज़बूत रिश्ता है जो इनके बीच पूरा बैलेंस (बराबरी) बनाए रखे है, यहाँ तक कि वो बेसमझ चीज़ें भी जिनमें अक़्ल नहीं होती इसकी बरकतों, वरदानों और फ़ायदों से ख़ाली नहीं हैं। इस संसार की चीज़ें, मानो, ठीक की हुई गठी संजोयी हुई लगातार

एक अनन्त लाइन में हैं या फिर ये सब एक तस्बीह/माला के न टूटने वाले दानों जैसी हैं। इन चीज़ों में ज़िन्दगी के चलन उसी अनदेखी और मज़बूत रिश्ते की वजह से ठहरे हुए हैं।

ज़रा एक ज़िन्दा आदमी को देखिये। उसके अन्दर ख़ून के चलने, हारमोन के निकलने और नसों (Nerves) के फैलने सिकुड़ने में आपस में इतनी ज़्यादा एकरंगी, एकजुटापन और मेल–जोल और फिर इतने फैलाव, इनर्जी और ज़ोर के साथ यह सब चलता है रहता है कि पहली बार देखने वाला ये सोचने लगता है कि शायद ये उथल–पुथल भरे बेहंगम सिस्टम के तूफ़ान में ज़िन्दगी बिता रहा है।

सबसे ज़्यादा अनोखी बात यह है कि फिज़ियालॉजी (Physiology) से हटकर हर ज़िन्दा सेल (Cell) का आम रूप ज़ंजीर की कड़ियों के अटूट सिलसिले या बड़ी उथल–पुथल और भयानक तूफ़ानों के बीच दूसरे लम्बी लाइन ज़ोर सकत की खोज में है। इन्सान की सोच उस समय भौचक्की हो दाँतों तले उंगलियाँ दबा लेती है जब ये देखती है कि यह सब ऊँच–नीच, तूफ़ान, बैलेन्स, आपसी गठन जोड़ने वाले और एक करने वाले महान चलाने वाले के कमाण्ड में काम कर रहे हैं। हर 'देखने में बेहंगम एके' इकाई और सिस्टम में उस सर्वशक्तिमान चलाने वाले को देखा जा सकता है।

इसी वजह से हम कहा करते हैं जो संसार एक एके से भरा है उसको एक हक़ीक़त और एक पैदा करने वाले सोर्स से जुड़ा होना चाहिए, इस संसार का वजूद उसी एक बिन्दु और एक पैदा करने वाले से होना चाहिए। अगर वजूद एक होता है तो उसका पैदा करने वाला भी एक ही हो सकता है। जिस ख़ुदा ने कई अलग–अलग तरह के वजूदों में एक रिश्ता और सिस्टम पैदा

किया है, उसने अपनी इस सकत को ज़ाहिर करके अपने एक अकेला होने और अपने जानने और सकत पर एक खुला सबूत दिया है।

कुरान मजीद कहता हैः—

''(ऐ रसूल) तुम उनसे पूछो तो ख़ुदा के अलावा तुम अपने जिन साझियों (साझे के ख़ुदाओं) की इबादत (भक्ति) करते हो, क्या तुमने उनको (कुछ) देखा भी, मुझे भी ज़रा दिखाओ तो कि उन्होंने ज़मीन (की चीज़ों) से कौन सी चीज़ पैदा की या आसमानों में कुछ उनका आधा साझा है या हमने उन्हें ख़ुद कोई किताब दी है कि वह उसकी कोई दलील रखते हैं (ये सब तो कुछ नहीं), बल्कि यह ज़ालिम तो एक दूसरे से धोके ही का वादा करते हैं। बेशक ख़ुदा ही सारे आसमान और ज़मीन को अपनी जगह से खिसकने से रोके हुए है और अगर (मानो जैसे) ये अपनी जगह से हट जाएं तो फिर उसके अलावा कोई उन्हें रोक नहीं सकता। बेशक, वह बड़ी नर्मी करने वाला (और) बड़ा माफ़ करने वाला है।

(सूर—ए—'फातिर' आयत 39—40)

खुद हमारा नेचर भी एके और इकताई को मानता है क्योंकि जब हम बड़ी परेशानियों, कड़े संकट और जानलेवा जकड़नों में घिर जाते हैं तो फितरी (प्राकृतिक) तौर पर हमारी सारी उम्मीदें एक ही केन्द्र की ओर झुकती हैं और एक ही बिन्दु का ध्यान करती हैं और उसी से लगन पैदा करती हैं। इमाम जाफ़रे सादिक़ (अ0) के शार्गिद *हश्शाम बिन (सुपुत्र) हकम* ने इमाम से पूछा, ''ख़ुदा के एक और अकेले होने की क्या दलील है?'' कहाः ''पैदा होने वाले

(इस) संसार का सदा का रहना, चलते रहना और उसमें आपसी तालमेल और 'होने' के सिस्टम का पूरा होना।'' इस तरह संसार के सिस्टम का चलते रहना ख़ुदा के कई होने की सोंच की तोड़ के लिए बहुत है।

मोरिस मेटेरिंग (Moris Metering) कहते हैंः जिस वक़्त तमाम ज़र्रों को तोड़ा जाता है तो एक ऐटम तक हमारी पहुँच होती है। जब उस ऐटम को तोड़ा जाए तो हमारी पहुँच उस चीज़ तक होती है जिसे हम मजबूर होकर बिजली कहते हैं और यही वह चीज़ है जो सारे रूपों सूरतों में दिखाई देती। सारी दुनिया की भलाई का आधार इसी पर है। हम इससे ये नतीजा निकालते हैं कि दुनिया का पैदा करने वाला एक है, दो हो ही नहीं सकते क्योंकि दुनिया की सारी चीज़ें चाहे वह मैटर हों या नियम क़ानून एक ऐसी चीज़ से वजूद में आते हैं जिसको अभी तक हम नहीं जानते।

कुरान संसार की पैदाइश और इरादे के सिलसिले में ख़ुदा के एक और अकेले होने पर बल देता है, फिर भी उन कारणों की भी बात करता है जो उसके हुक्म पर चलते हैंः—

''और ख़ुदा ने ही आसमान से पानी बरसाया तो उससे ज़मीन को मुर्दा (पड़ी) होने के बाद ज़िन्दा किया कुछ शक नहीं कि इसमें उन लोगों के लिए जो सुनते हैं (ख़ुदा की कुदरत की) बहुत बड़ी निशानी है।''

(सूरा 'नहल' (16) आयत—65)

जब हम इस नतीजे पर पहुँच गए कि इस संसार में ख़ुदा के अलावा कोई पैदा करने वाला, तदबीर करने वाला, इरादा करने वाला नहीं है और संसार के सारे असर करने वाले स्रोत उसी के हुक्म और चाहने पर चलते हैं। हर छाप चाहे जिसकी हो या

संसार का हर कारण उसी एक अकेले की ओर से उसे सौंपा हुआ है। फिर उस एक अकेले ख़ुदा के साथ किसी दूसरे ख़ुदा को क्योंकर माना जा सकता है? क्योंकर किसी दूसरे की इबादत की जा सकती है?

कुरान इसी बात को कहता हैः–

''और उसकी कुदरत (सकत) की निशानियों में से रात और दिन और सूरज और चाँद हैं, (तो) तुम लोग न सूरज को सजदा करना और न चाँद को और तुम को अगर (ख़ुदा ही की) इबादत करना है तो बस उसी को सजदा करो जिसने इन चीज़ों को पैदा किया है।'' (सूरा हाम मीम सजदा (41) आयत–36)

ख़ुदा की बेहद सकत

नेचर (प्राकृति) की ज़ाहिर होने बातें और चीज़ें और उनके रंग–रूपों और सूरतों, जो बयान से बाहर है, पर ग़ौर करने से ख़ुदा की बेहद सकत पर ज़्यादा साफ़ और खुली दलील नहीं मिलेगी।

जब हम ख़ुदा की पैदा की हुई चीज़ों पर नज़र डालते हैं तो अपने वजूद को ख़ुदा की उस महान सकत के सामने देखते हैं, जिसकी हदों और बन्धनों को सोचा भी नहीं जा सकता। उन सारी पैदा हुई चीज़ों पर ग़ौर और लाखों वो सच्चाइयाँ जो उनमें और हमारी जानों में कुदरत ने डाल दी हैं, वह हमको ऐसे रास्तों तक पहुँचाती हैं जिनसे पैदा करने वाले की, बेइन्तेहा सकत का सुबूत मिलता है और इस सिस्टम की वजह ख़ुदा की असल/परम शक्ति (असल सकत) के अलावा और कुछ हो भी नहीं सकती।

ख़ुदा की बेपनाह सकत ही वो चीज़ है जो अक़्ल को इस सबसे बड़े सिस्टम के पैदा करने वाले के सामने सर झुकाने के लिए

तैयार करती है। हमारे पास ऐसा कोई शब्द नहीं है जो इस बेपनाह सकत के आयाम (लम्बाई, चौड़ाई, गहराई) तय कर सके। अपनी सकत की तरफ उसने ख़ुद (सूरा 'यासीन' (36) आयत–82) में इशारा किया हैः उसकी बात तो यह है कि जब किसी चीज़ को पैदा करना चाहता है तो वह कह देता है 'हो जा' तो (फौरन) हो जाती है। नेचुरल साइन्सों के बड़े–बड़े जानकार रिसर्च करने वाले आज तक इस तरह–तरह की छोटी बड़ी पैदा की हुई चीज़ों की इस बहुततात के बावजूद पूरी तरह से एक ज़र्रे की भी सच्चाई का पता नहीं चला सके। फिर भी इस संसार के मौजूद सिस्टम के मुक़ाबले ये थोड़ी और अधूरी मालूमात बहरहाल महान और बेपनाह सकत के समझ सकने के लिए बहुत है यानी रंग–रंग की छोटी बड़ी चीज़ें जिनके एरिया या क्षेत्रफल भी अलग–अलग हैं, समन्दरों और दरयाओं की गहराईयों में छोटे बड़े जानवर, अपने हैरतभरे अन्दाज़ों के साथ और रंग–रंग के ख़ूबसूरत बाल और पर वाले और सुरीली बोली वाले पन्छी जो हवा में अपने बाल खोल देते हैं, जंगलों के बीच जीवन बिताते हैं कि अगर कलाकार इन पंछियों की थोड़ी सी ख़ूबसूरती अपनी कला में ढाल लें तो उनकी कलाकारी का बाज़ार गर्म हो जाए।

और ये चाँद तारे, सूरज का उगना–डूबना, शाम, आसमान की लाली, आकशगंगाएं (Galaxies) और वह बादल जिनमें लाखों चमकदार तारे हैं ये चीज़ें अक़्ल वालों को चौंका देती हैं। क्या ये चीज़ें उसकी बेपनाह सकत की दलील नहीं होतीं?

प्रोफेसर रिवाया– ख़ला/अन्तरिक्ष (Space) के एक हिस्से की बड़ाई बयान करते हुए लिखते हैं कि हमारी इस आकाशगंगा (Galaxies जिसमें हमारी ज़मीन, सूरज, चाँद हैं) में एक लाख तारे (सूरज) मौजूद हैं और अब तक उनमें से सिर्फ़ पाँच हज़ार पहचाने

जा सके हैं और ये पूरा सिस्टम हमारी Super Galaxies का एक बहुत ही छोटा सा टुकड़ा है जिसके सिर्फ़ एक छोटे से हिस्से को ही हम देख सकते हैं और ये हिस्सा बहत ही भारी और घना है।

यह सुपर गैलेक्सी दूसरी ऐसी अरबों गैलेक्सियों के मुक़ाबले में सिर्फ़ एक ऐसा छोटा सा बादल है जिसमें तारे हों– और उनका समूह Meta Galaxy कहा जाता है जो हमारी दुनिया को एक रूप देता है।

बेमिसाल बुद्धजीवी आइंस्टाइन (Einstein) ने इस संसार की ग़ैर असली (सापेक्ष/Relative) किरनों का हिसाब छः खरब प्रकाशवर्ष[1] किया और साइन्टिस्टों को अपने इस नज़रिये पर राज़ी कर लिया है कि संसार अपनी ऊपरी हद में बेपनाह (Infinite) है और हमारे आज के ज़माने के साइंसी ज़रिये और सम्भावनाएं इस संसार के आख़िर/अन्त का पता नहीं लगा सकतीं। इस लिए अब यह बात ठीक है कि इस संसार की ग़ैर असली किरनों को छः खरब प्रकाशवर्ष मान लिया जाए जो बेइन्तहा (Infinity) के बराबर है और इसके बाद सापेक्ष अन्तरिक्ष (Relative Space) पर रिसर्च शुरु करे जिसके एक छोर से दूसरे छोर की दूरी बाईस सौ (2200) खरब प्रकाशवर्ष है। आइन्स्टाइन ने ये हिसाब और ये साइन्सी रिसर्च स्पेस रिसर्च वाली Observatories के सहारे बनाई है, जैसे पालोमर आब्ज़र्वेटरी[2] जो उस समय सबसे

(1) एक प्रकाशवर्ष (Light year) वह दूरी है जिसे प्रकाश एक साल में तय करता है। प्रकाश की रफ्तार एक सेकेण्ड में 3 लाख कि0मी0 चलता है।
(2) यह Observatory 1904ई0 में बनी इसका नाम पालेमर माउन्ट आब्ज़र्वेटरी रखा गया फिर 1969ई0 में इसका नाम हेल आब्ज़र्वेटरीज़ रखा गया। 1952ई0 में इसमें (उस समय की) दुनिया की सबसे बड़ी दूरबीन (Telescope) लगी थी।

बड़ी समझी जाती थी आर आज भी गिनी जाती है। इसके बाद रेडियो ने इस हद को गहना दिया।

स्पेस कैमरों से उतारे गए असली रंगो वाले फोटो जिनमें ज़्यादा पालोमर ऑब्ज़र्वेट्री ने खींचे बहुत दिनों तक स्पेस साइन्स की रिसर्च का विषय है।

हमारी इस गैलेक्सी की लम्बाई एक लाख प्रकाशवर्ष है। हमारा ये सौरमण्डल (Solar System) इसके एक कोने में है और ये गैलेक्सी स्पेस में खरबों साल से दो सौ पचास किलोमीटर प्रति घंटा की चाल से चल रहीं है।

तो क्या ये संसार अक़्लों को चौका देने वाली अपनी इस बड़ाई के साथ परमेश्वर ख़ुदा की परम सकत पर दलील नहीं बनती?

क्या उस पैदा करने वाले की सकत से अनदेखी की जा सकती है जिसने अलग–अलग रंगों ढंगों को ज़िन्दगी दी है और जिसने उनके लिए जीने के क़ानून दिये हैं और उनको रूप दिया है और उनकी हदें तय की हैं। हम जानते है कि ये मनोहर चीज़ें ऐटम से पैदा हुई हैं। इन सारी चीज़ों को इरादा, चाह और सकत के साथ कमान करने वाली उस एक बेहद 'सकत' को माने बिना समझा समझाया नहीं जा सकता है, जिसको अल्लाह कहा जाता है, जो पैदा कर सकता है और नये सिरे से बना सकता है और हिसाब वाला और समझ वाला है।

छोटी बड़ी मुश्किल और आसान जैसी बातें हदों में घिरी चीज़ों से ख़ास है, मगर ख़ुदा के यहाँ छोटे बड़े, कम ज़्यादा का सवाल नहीं है। बेबसी और कमज़ोरी काम करने वाले की महदूद ताक़त की वजह होती है और रुकावट के होने या साधन का नतीजा होता है जो ख़ुदा के बारे में सोचा ही नहीं जा सकता।

कुरान कहता हैः

''और ख़ुदा ऐसा (गया गुज़रा) नहीं है कि उसे कोई चीज़ बेबस कर सके (न तो) आसमानों में और न ज़मीन में, बेशक वह बड़ा ख़बर रखने वाला और बड़ी सकत वाला है। (सूरा फातिर (35) आयत–43)

ख़ुदा के हर चीज़ पर सकत रखने के बावजूद उसने संसार को एक ख़ास और तय सिस्टम को नज़र में रखते हुए पैदा किया है। इस गहरे सिस्टम के चौखटे में हर चीज़ के लिए एक ख़ास तय की हुई जगह बना दी है और घेरा बना दिया है। सारी चीज़ें उसके हुक्म पर चल रही हैं, हुक्म का हल्का सा भी तोड़ नहीं सकती।

कुरान कहता हैः–

''और उसने चाँद, सूरज और सितारों को पैदा किया ये सबके सब उसी के हुक्म का पालन कर रहे हैं, देखो! हुकूमत और पैदा करना ख़ास उसी के लिए है, वह ख़ुदा जो सारे संसारों का पालने वाला है बड़ा बरकत वाला है।'' (सूरा अअ्राफ़ (7) आयत–53)

इस होने वाले संसार की कोई चीज़ अकेली न सकत को दिखा सकती है और न अपने इरादे और अपने हुक्म पर टिकी रह सकती है। ख़ुदा का जिस तरह कोई ज़ात में साझी नहीं है उसी तरह उसके कामों में भी कोई साझी नहीं है। जिस तरह संसार की होने वाली चीज़ें अपनी ज़ात में टिकाऊ (Permanent) नहीं है बल्कि ख़ुदा से जुड़ी हुई हैं, इसी तरह अपने काम और असर में टिकी नहीं हैं। हर काम करने वाला और हर कारण ख़ुदा से अपने होने की सच्चाई पाता है, अपने काम और असर को भी उसी से लेता है। अगर ख़ुदा की मर्ज़ी हो और संसार के इस सिस्टम को

मिटाना चाहे तो यही तगड़ा सिस्टम उसके चाहने के सामने सर झुका देगा क्योंकि जिस ख़ुदा ने वजहों को ख़ास असर दिया है वह हर वक़्त इस बात की सकत रखता है कि जिस वक़्त चाहे असर को मिटा दे और जिस तरह एक हुक्म से सब चीज़ों को पैदा किया था दूसरे हुक्म से उनके असर को ख़त्म भी कर सकता है।

कुरान कहता हैः–

''(आख़िर) वह लोग (आपस में) कहने लगे कि अगर तुम कुछ कर सकते हो तो इब्राहीम[अ०] को आग में जला दो और अपने ख़ुदाओं की मदद करो (बस उन लोगों ने इब्राहीम[अ०] को आग में डाल दिया तो) हमने कहा ऐ आग तू इब्राहीम[अ०] पर बिल्कुल ठंडी हो जा और इब्राहीम[अ०] की सलामती का सबब हो जा (कि उनको कोई तकलीफ़ न पहुँचे) और उन लोगों ने इब्राहीम[अ०] के साथ चालबाज़ी करनी चाही थी तो हमने उन सबको नाकाम कर दिया।''

(सूरा अंबिया (21) आयत 68–69)

सूरज और ज़मीन के खिंचाव का ज़ोर (Gravitational Force) यूँ तो इस दुनिया के बहुत बड़े मैदान में अपना असर रखता है मगर ख़ुदा के इरादे के सामने सर झुकाए हुए है। जहाँ ख़ुदा ने छोटे से पन्छी में भी ताक़त डाली तो वह ज़मीन के इस ज़ोर का मुक़ाबला करने को तैयार हो जाता है और वह हवा में उड़ने लगता है। इसी को कुरान कहता हैः–

''क्या इन लोगों ने परिन्दों (पन्छियों की तरफ़ ग़ौर नहीं किया जो आसमानों के नीचे हवा में घिरे हुए (उड़ते रहते) हैं, उनको तो बस ख़ुदा ही (गिरने से) रोकता है। बेशक इसमें भी मानने वाले लोगों के लिए

(ख़ुदा की सकत की) बहुत सी निशानियाँ हैं।''

(सूरा नहल आयत–78)

इस सिस्टम के अन्दर जो भी चीज़ सोच ली जाए, उसके होने और जीते रहने की ज़रूरतें सिर्फ़ ख़ुदा ही के ज़रिए पूरी हो सकती हैं। इस सिस्टम में जिस सकत का भी होना सोचा जाए वह घूम फिर कर ख़ुदा ही की बेपनाह सकत की तरफ़ पलट जाती है।

''हज़रत अली[अ०] नह्जुल बलाग़ह के ख़ुतबा न0 159 में कहते हैं:

''हम तेरी बड़ाई की असलियत को नहीं पहचान सकते। हम तो बस इतना जानते हैं कि तू (हमेशा से है और हमेशा) जीने और टिका रहने वाला है, न तुझको नींद आती है न ऊँघ। कोई नज़र या कोई सोच तुझ तक नहीं पहुँच सकती, न कोई आँख तुझको देख सकती है, तू नज़रों को समझे हुए है, तूने कामों को घेर रखा है, तूने सर के बालों और पैरों से पकड़ की है। हम तेरी पैदा की हुई किसी चीज़ से नहीं समझे फिर भी तेरी सकत पर दंग ज़रूर है, तेरी महान बड़ाइयों की तारीफ़ (महिमागान) करते हैं। ये और बात है कि जो चीज़े हमसे छिपी हुई हैं, हमारी आँखें उन्हें देखने की ताक़त नहीं रखतीं और हमारी समझ और सोच वहाँ तक पहुँच नहीं सकती है, हमारे और उन चीज़ों के बीच जो अनदेखी के पर्दे पड़े हैं वह बहुत महान हैं।''

इन्सान जब किसी चीज़ को बनाने का इरादा रखता है जैसे अस्पताल बनाना चाहता है तो वह कुछ ऐसे सामान और मशीनें इकटठा करता है जिनके बीच कोई ज़ाती लगाव नहीं होता

सिर्फ़ उनमें सबसे काम आने का रिश्ता होता है। ये सब इसलिए करता है कि मक़सद में कामियाबी मिले। उन ज़रूरी और काम में आने वाली चीज़ों को बनाने के लिए तरह–तरह की चीज़ों और ताक़तों से फ़ायदा उठाता है। उसका यह करना उस सिस्टम की एक बहुत ही छोटी चीज़ है, ये उसका नया पैदा करना (आविष्कार, सिरजन) नहीं है, बल्कि ये करना ऐसी बात की देन है जो इन चीज़ों को आपस में जोड़कर एक शक्ल और सूरत में ढाल देती है। ख़ुदा का बनाना यह नहीं कि कुछ अजनबी चीज़ों को जमा करके उन्हें ख़ास रंगरूप दे दिया जाय। ख़ुदा सारी चीज़ों को उनके अपने ख़ास गुणों के साथ और अपनी ख़ास ताक़तों के साथ पैदा करने वाला (आविष्कारक, सिरजनहार) है।

याद रखिये ये ''ख़ुदा हर चीज़ पर सकत रखता है'' कहने का मतलब यह है कि उसकी सकत का ताल्लुक़ सिर्फ़ मुम्किन कामों से है लेकिन अक़्ल से 'न' वाले कामों को उसकी सकत से जोड़ना बेमाने है। सही है कि ख़ुदा की सकत की हद नहीं है, लेकिन यह नहीं भूलना चाहिए कि इसके लिए सबसे अहम शर्त ये है कि उस में अल्लाह की सकत क़बूल करने की सलाहियत भी हो। किसी भी चीज़ से ख़ुदा की सकत का ताल्लुक़ उसी वक़्त हो सकता है जब वह अक़्ल से बाहर न हो और सकत को क़बूल करने की अपनी सलाहियत रखती हो। ये बात अपनी जगह सही है कि ख़ुदा की तरफ़ से कोई कमी नहीं है। उसकी कोई इन्तेहा नहीं है, लेकिन अक़्ल में न आने वाली बातों के लिए ख़ुदाई सकत को क़बूल करने की सलाहियत नहीं है। समन्दर में पानी बहुत है, लेकिन आपके पास जितना बड़ा बर्तन है, उतना ही तो पानी आप ले सकते हैं? कोई भी बर्तन अपनी समाई से ज़्यादा पानी नहीं ले सकता यानी हद बर्तन की तरफ़ से है, समन्दर की तरफ़ से नहीं हैं।

'एक आदमी ने हज़रत अली[अ0] से पूछा कि क्या ख़ुदा इस बात की सकत रखता है कि एक अण्डे में पूरी दुनिया समो दे और दुनिया छोटी भी न हो और अण्डा बड़ा भी न हो? आपने कहा, ''ख़ुदा को किसी काम से बेबस नहीं समझना चाहिए लेकिन तुमने जो पूछा है, वह नहीं हो सकता।'' यानी ख़ुदा की ज़ात किसी भी काम में आजिज़ नहीं है, मगर अक़्ल में न आने वाली बातों के बारे में ख़ुदा से जुड़ा सवाल करना बेवकूफ़ी और बेमतलब जैसी बात है।

जिस मोमिन का दिल ख़ुदा के मानने से और उसकी मुहब्बत से भरा होगा, वह कभी अपने को अकेला निकम्मा और बे आस नहीं समझेगा क्योंकि जिस बात की तरफ़ क़दम बढ़ाएगा, ये यक़ीन होगा कि हम एक महान ताक़त की देखरेख में हैं जो मुश्किलों को दूर कर सकता है।

जो ख़ुदा को पहचानता है और यह जानता है कि ख़ुदा उसकी मदद करने वाला है, वह मुश्किलों के सामने सब्र (सहन) करने वाला और साबित क़दम रहने वाला (धैर्य वाला) होगा क्योंकि मुश्किलें उसके सामने समन्दर के झाग जैसी होंगी जो बहुत जल्दी दूर हो जाता है। जितनी मुश्किल की आग उसके सामने भड़कती है उतना ही वह पत्थर की तरह सख़्त और ताक़तवर हो जाता है। सारे कठिन मौक़ों पर ख़ुदा की इनायत, कृपा का एहसास करता है। यही एहसास उसकी कोशिश और काम को एक रूप देता है। कोई भी नाकामी उसका रास्ता नहीं रोक सकती और न वह किसी मुश्किल के सामने हथियार डालता है, बल्कि लगातार अपनी कोशिशों और साफ़ खरे मन की वजह से अपने पूरे मक़सद को पा लेता है।

ख़ुदा को मानने वाला अच्छी तरह जानता है कि ख़ुदा के सिस्टम में कामयाबी सिर्फ़ ख़ुदा के मानने वालों के लिए है। वह

अन्याय के मारे जो ख़ुदा के अलावा और किसी से शरण नहीं माँगते, ख़ुदा उनकी मदद करता है और उनको इज़्ज़त और बड़ाई की चोटी तक पहुँचा देता है। बहुत से ऐसे इज़्ज़त वाले लोग हैं जो सरफिरे राक्षस शैतान होते हैं, ज़ुल्म करने और सताने वाले होते हैं जो अपनी ताक़त के सामने किसी को कुछ नहीं समझते, जो लोगों का कोई मान नहीं समझते, ख़ुदा उनकी नाक रगड़ देता है। इतिहास में इस तरह के कितने ही अत्याचारी, ज़ालिम, और ज़बरदस्ती करने वाले हुए हैं जो ज़िल्लत की लहरों में घिर कर मर मिट गए।

हम में से हर एक जानता है कि सारे नबी इन्सानी मूल्यों के पूरे–पूरे नमूने थे। उन्होंने ग़लत ताक़तों का किस तरह डट कर मुक़ाबला किया। ये सिर्फ़ इसलिए कि लोगों की हिदायत (सीधा रास्ता दिखाना) करें और इन्सानियत को उंचाइयों की तरफ़ ले जाएं। यही वह लोग थे जिन्होंने शिर्क (ख़ुदा में किसी और का साझा मानना) और बहकावे के सामने सबसे पहले इन्क़ेलाब की मशाल जलाई। इतिहास में काफ़ी हद तक उनके अच्छे असर भी हुए। यही वह लोग है जिन्होंने अल्लाह को एक मानने की नींव को मज़बूत किया। क्या कोई है जो उनकी इन अनथक कोशिशों का इन्कार कर सके। नबियों को देखकर हमको सोचना चाहिए कि इन्सान कितना सब्र कर सकता है और अपने इरादे में कितना मज़बूत हो सकता है। अगर उनके फ़ख़्र वाले जीवन को देखा पढ़ा जाये तो उसमें खरेपन, मन की सफाई, माफ़ करने की आदत, दया, कृपा, सीधा रास्ता दिखाना और इन्सान बनाने की उनकी बातों की रोशनियों से बहुत कुछ देखा समझा जा सकता है। उनके बाक़ी रहने का असली राज़ यह है कि उन्होंने कभी अपने बारे में नहीं सोचा, अपने को पूरे ख़ुलूस और खरे मन के साथ ख़ुदा की

राह में भेंट कर दिया। इसलिए ख़ुदा ने भी उनके नामों और उनके किरदार को हमेशा–हमेशा के लिए अमर कर दिया।

ख़ुदा का इल्म (जानना)

ख़ुदा न तो किसी जगह के अन्दर समा सकता है, न उसके लिए किसी हद के बारे में सोचा जा सकता है, फिर भी न ज़मीन और न आसमान का कोई ज़र्रा उसके वजूद से ख़ाली है। वह हर चीज़ का जानने वाला है। पूरे संसार के सिस्टम में ऐसी कोई चीज़ नहीं है जिस पर ख़ुदा की जानकारी की तेज़ किरनें न पड़ रही हों। संसार के दूर से दूर के बिन्दु में भी जो होगा, खरबों साल पहले क्या हो चुका है और खरबों साल बाद क्या होने वाला है कुछ भी उसकी जानकारी से बाहर नहीं है। बड़ी से बड़ी, गहरी से गहरी हमारी समझ की पहुँच उसके 'जानने' के पास तक भी नहीं हो सकती है। उसके 'जानने' की हदों को समझने के लिए सोच को चाहे जितना फैलाया जाए और अक़्ल –जो एक सेकेण्ड में नेचर के पूरे वजूद को घूम कर देखी लेती है– चाहे जितनी ऊँची उड़ान भरे और सोच की आज़ादी के साथ मक़सद ढूँढने में आगे बढ़े फिर भी अपने मतलब तक नहीं पहुँच सकती। जिस तरह हम एक जगह और एक ख़ास हिस्से में हैं, उसी तरह अगर सब जगह होते और कोई जगह हमारे वजूद से ख़ाली नहीं होती तो ऐसे में हमसे भी कोई चीज़ छिपी नहीं रह सकती थी।

दुनिया दो हिस्सों में बटी हुई हैः छुपी हुई यानी अनदेखी और सामने वाली यानी देखी। कुछ सच्चाइयों का छिपा हुआ होना बेहद होने की वजह से या मैटरियल न होने की वजह से या हमारे सामने वाले एहसास से न महसूस हो सकने की वजह से नहीं है, बल्कि वह चीज़ एहसास में आने वाली उन बातों पर टिकी नहीं है जो हमारे तजुर्बों में शामिल हों।

इस दुनिया की सच्चाइयों के सारे राज़ों को समझने के लिए हमको एक ऐसी सीढ़ी की ज़रूरत है जिससे वहाँ तक पहुँच सकें। उस उठान की तेज़ी और कामयाबी हमारी सोच की चुस्ती फुरती के ज़ोर पर ठहरी होती है। अगर ये सब हो सके तो बहुत सी हक़ीक़तों को हम भी जान सकते हैं।

'ग़ैब' (अनदेखे) के सिलसिले में ख़ुदा ने संसार के बारे में गहरी सूझबूझ को बताया है। नबियों ने भी इस बात की भरपूर कोशिश की कि इन्सान को सामने दुनिया से 'ग़ैब' के मानने की तरफ़ ले जाएँ। इससे 'हद में घिरे' से 'बेहद' तक ले जाएँ और सामने से 'अन्दर' और छिपे हुए अनदेखे तक पहुँचा दें। जहाँ तक ख़ुदा का सवाल है, उसके लिए कोई चीज़ ग़ैब में (छिपी हुई) नहीं, पूरा संसार 'आँखों' के सामने है।

क़ुरान कहता हैः–

''छिपी हुई और नज़र आने (सामने) वाली चीज़ों का जानने वाला है, वही बड़ा मेहरबान और बहुत दया करने वाला है।'' (सूर हश्र (59) आयत–22)

इन्सान की बनाई हुई चीज़ें हमेशा अपने बनाने वाले की जानकारी और उसकी समझ से पैदा होती हैं। जो चीज़ कारीगरी, कला के हिसाब से जितनी जटिल होगी, वो बनाने वाले की जानकारी पर उतना ही ज़्यादा ज़ोरदारी सबूत देगी और बनाने वाले के निशाने और हिसाबी सोच समझ पर ज़्यादा दलील (प्रूफ़) होगी।

यूँ तो इस संसार की महानता का इन्सान की बनाई हुई चीज़ों से कोई रिश्ता नहीं है, फिर भी इस संसार की महानता और उसकी चीज़ों की ठीक ढंग के रूप और इस महान सिस्टम में पाई जाने वाली सोच समझ और ये ख़ूबसूरत और अक़्ल को अचम्भे में

डाल देने वाले दृश्य (Scene) उस विधाता पैदा करने वाले और चलाने वाले ख़ुदा के बेहद जानने के गवाह हैं। बल्कि ये सामने चीज़ें उस दाता वजूद के जानने और इरादे और 'सूझबूझ' पर सबसे मज़बूत दलीलें हैं। उस पैदा करने वाले ने इन अजीब चीज़ों को एक जटिल और सिस्टमेटिक प्लान से पैदा किया है। हम इस वजूद के सामने दिखाई देने वाले एक–एक हिस्से में उसकी फैली हुई जानकारी का अन्दाज़ा लगा सकते हैं।

लैबॉर्टियों के तजुरबों और साइंस्टिस्टों नज़रियों पर चलने वाले लोग, जानवरों, पन्छियों, पेड़–पौधों, कीड़े मकोड़ों में भी उसके बेहद जानने के बेपनाह और अनोखे जलवे पढ़ सकते हैं। वह तो बादलों की गरजती दुनिया और सूरज, चाँद तारों के चलते फिरते संसार को शुरु से आख़िर तक को जानता है। वह आसमानी दुनिया के ऐटमों की गिनती, धरती के ऊपर और सागर के तहों के ज़र्रे–ज़र्रे हर चीज़ को खुले छुपे को और फिर नेचर में चलते चलन और क़ानूनों और क़ानून नियमों को भी जानता है, दिलों में छिपे हुए राज़ों को दिलवालों से ज़्यादा वह जानता है। यहाँ हमको कुरान की आवाज़ फिर सुनाई देती हैः–

''बेशक कोई चीज़ ख़ुदा से छिपी नहीं है (न) ज़मीन में न आसमानों में'' (सूरा आले इमरान (3) आयत–5)

''भला जिसने पैदा किया वह बेख़बर है वह तो बहुत बारीकी (सूक्षम) से जानने वाला है।''

(सूरा मुल्क (67) आयत–13)

न्युटन (Newton) आँख और कान के बारे में कहता हैः

कान का बनाने वाला आवाज़ से जुड़े सारे क़ानूनों को पूरी तरह जानता है और आँख का पैदा करने वाला रौशनी और देखने से जटिल नियमों अच्छी तरह जानता है। आसमानों के सिस्टम को

देखकर हम उस बड़ी सच्चाई तक पहुँच जाते हैं कि इस सिस्टम का चलाने वाला कोई ख़ास सूझबूझ वाला है।

इसीलिए नेचुरल साइन्स के विद्वान जो 'वजूद' की गहराइयों में सिस्टम की गुत्थियों के बारे में बहुत जानते हैं और अपनी रिसर्च की बुनियाद पर ज़िन्दा और मुर्दा के बारे में ऐसी जानकारियाँ रखते हैं जो काफ़ी जटिल हिसाब की होती है और सिर्फ़ ज़िन्दा और मुर्दा ही के बारे में नहीं बल्कि शरीर के एक छोटे से Cell और ख़ून के बारे में भी जानकारी रखते हैं। क्रिया और प्रतिक्रिया (Action and Reaction) की तरह–तरह की हालतें, खुले और छिपे बदलाव और अलग–अलग मैटर और तत्वों (Elements) के असर को अपनी रिसर्च से अच्छी तरह जानते हैं, और दुनिया में और ख़ुद जानों में बेहद जानने और अचम्भों भरी सूझबूझ को बहुत ही अच्छे ढंग से देखते समझते हैं। यह लोग दूसरा लोगों के मुक़ाबले में ख़ुदा के 'जानने' की गहराईयों व फैलाव और उसके गुणों के पूरेपन को ज़्यादा जानते हैं। अगर यह लोग दिल के अन्दर (अन्तःकारण) की आवाज़ को न ठुकराएं तो ख़ुदा के वजूद को ज़्यादा ही साफ़ तरह से महसूस करते हैं।

एक विचारक कहता है हमारी दुनिया एक महान सोच–समझ की वजह से एक मशीन से बहुत ज़्यादा मिलती जुलती है। मैं एक सोच (नज़रिये) और साइन्सी समझ से (जानेबूझे) कहता हूँः हमारी दुनिया एक महान सोच समझ की पैदा की हुई है, जो हमारी सोच में दिखाई देने वाली चीज़ों से कहीं ऊँची है और मैं देख रहा हूँ कि साइन्सी खोजें उसी निशाने की तरफ़ जा रही हैं।

ख़ुदा का जानना सिर्फ़ बीते हुए कल या आज के लिए नहीं है बल्कि वह अपने वाले कल को उसी तरह जानता है जिस तरह आज को। ख़ुदा का जानना बाहरी वजूद के सदा के भिखारी

इन्सानी ज्ञान से कुछ भी मिलता–जुलता नहीं, न यह कहना सही है कि ख़ुदा का जानना पैदा हुई चीज़ों की सच्चाइयाँ पता चलाने से मिला है। इन्सानी जानकारी से उसके जानने का अन्दाज़ा करना बिल्कुल सही नहीं है और न अभी तक तरक़्क़ी पायी एडवांस दुनिया के पास कोई ऐसा ज़रिया हाथ आया है जिससे ख़ुदा के जानने की हालत को नापा या समझा जा सके क्योंकि इन्सानी जानकारी के लिए एक 'जाना हुआ' का होना ज़रूरी है जिससे जानने का सिरा मिल सके। ख़ुदा के यहाँ यह बात नहीं है, बल्कि हर चीज़ उसके लिए खुली किताब है। ख़ुदा 'होने वाली चीज़ों' में नहीं है फिर भी वह इन 'हैं' से बाहर भी नहीं है। हज़रत अली (अ0) फ़रमाते हैं: बीता हुआ काल और आने वाला काल, बग़ैर किसी बीच बिचौली के, सीधे उसके सामने हाज़िर हैं।

हज़रत अली फ़रमाते हैं:–

वो सारी चीज़ों को जानता है, लेकिन किसी बिचौली और ज़रिये से नहीं कि अगर वह बीच ख़त्म हो जाए तो ख़ुदा की जानकारी मिट जाए। उसके 'जाने हुए' के बीच कोई 'जानकारी' के नाम से अलग से चीज़ नहीं है, बस उसकी ज़ात है और बस।

(तौहीदे सदूक़: पेज–73)

हज़रत अली (अ0) अपनी इस हदीस (सूक्ति) में यह बताते हैं कि उसका जानना सीधा है, 'सामने वाल' उससे अलग नहीं, उसके और 'जानने' के बीच कुछ भी नहीं है। उसकी जानकारी अपनी है, किसी तरह की पाई हुई नहीं है। 'पाने वाली' जानकारी के लिए जिस सोच समझ और ध्यान की ज़रूरत होती है उसकी उसे ज़रूरत नहीं। उसे तो किसी तरह की किसी की ज़रूरत नहीं।

जिस ख़ुदा ने जानकारों और दुनिया को पैदा किया है,

उनकी हर ज़रूरत को पूरी करता है और हर भलाई, ऊँचाई, नेमत देने वाला है और ख़ुद में हर ऊँचाई और पूरेपन का एका है, उसके बारे में ये क्योंकर सोचा जा सकता है कि सबकी माँगें पूरी करने वाले को किसी की भी ज़रूरत हो सकती है। (एक सच्चा दानी क्या भिखारी हो सकता है?) ध्यान में बने रूप हमारे चाहे, हमारे मन में बाक़ी रह सकते हैं। जब उनको हटा दें वे चले जाते हैं क्योंकि वे हमारे बनाये हुए होते हैं। ख़ुदा का जानना सीधा है, ऐसे में ध्यान के मिटजाने वाले रूप का आभारी नहीं होता, जबकि 'पा जाने वाली' जानकारी देखने, सुनने, चखने, छूने, सूँघने के आइने में नेचर का ही रूप होती है।

हमारे और ख़ुदा के बीच ये फ़र्क़ है कि उसे बिल्कुल से किसी की ज़रूरत नहीं है, उसे ख़याली रूपों की भी ज़रूरत नहीं है। बीती और आने वाली बातें हमारी सोच में बनती हैं, जबकि हम समय और जगह से घिरे हैं और इसकी हद के बाहर नहीं जा सकते। हमेशा से हमेशा वाले और सब जगह रहने वाले ख़ुदा के लिए बीते और आने वाले काल का कोई मतलब ही नहीं है।

हर हो जाने वाली चीज़ को अपने होने और रहने के लिए ख़ुदा की ज़रूरत है। इसलिए ख़ुदा और उसके बीच कोई आड़ या पर्दा नहीं माना जा सकता क्योंकि वह सारी चीज़ों के सामने और अन्दर पर छाया हुआ है वैसे ही दूर, पास और दूरी की बात की हमारे हदों में घिरे रहने से पैदा होती है।

क़ुरान कहता है:

और जो कुछ भी सूखे में और पानी में है उसको भी वही जानता है और कोई पत्ता नहीं गिरता मगर वह उसे ज़रूर जानता है और न ज़मीन के अंधेरों में कोई दाना और न कोई गीली और न कोई सूखी चीज़ है

मगर ये कि वह खुली किताब (मासूमीन के सीने) में मौजूद है। (सूरा अनआम (6) आयत–57)

मान लीजिये जैसे हम एक ऐसे कमरे में खड़े हैं जो किसी बड़ी सड़क के किनारे है और एक छोटी सी खिड़की से बसों और कारों की एक बड़ी भीड़ को दौड़ते हुए देख रहे हैं। सामने की बात है, हम सारी बसों और कारों को एक साथ नहीं देख सकते बल्कि इस छोटी सी खिड़की के सामने से एक के बाद दूसरी कारें निकलेंगी और आँखों से ओझल होती जाएंगी। अब अगर हम कारों की सच्चाई से बेख़बर हों तो यही ख़याल होगा कि ये कारें एक–एक करके एक तरफ़ से पैदा हो रही हैं और दूसरी तरफ़ ख़त्म होती जा रही है।

सच तो यह है कि ये छोटी सी घिरी हुई खिड़की हमारी सोच में कारों के बीते और आने वाले को लाती है, लेकिन जो लोग सड़क के किनारे खड़े हैं वह सभी कारों को एक साथ चलते देख रहे हैं। उसी तरह दुनिया का बीता हुआ कल और आने वाला कल हमारे हिसाब से बिल्कुल उसी तरह है जो छोटी सी ख़िड़की के पीछे से कारों को देख रहा है।

टोपोलोजी में कहा गया है कि संसार के चार ओर हैं लेकिन बहुत ऐसी भी ख़ास हिसाब हैं जो सिर्फ़ तीन ही आयाम (Dimension) हैं जो आम ओर के ख़िलाफ़ है।

अगर कोई देखने वाला एक पेज के ऊपर हो, तो वह पूरे पेज को पूरी तरह देख सकता है, आगे–पीछे की बात ही नहीं रहेगी। इसी तरह अगर कोई देखने वाला समय के आयाम के ऊपर हो तो वह तीन आयाम उसके वाले संसार को देख सकता है, उसके लिए चार आयाम बेमाने है। यूँ इस तरह के देखने वाले को सोचना मुश्किल है। लेकिन अगर कोई देखने वाला रौशनी की

तेज़ी से चले करे तो रास्ते की दूरी जीरो होगी। जैसे देखने वाले के रास्ते में पड़ने वाले स्पेस के सारे बिन्दु एक साथ उसके सामने आ गये होते हैं और वह सब होने वाली बातों को इकट्ठा देख सकता है। ऐसे के लिए समय ठहरा हुआ होगा। यह होनी बातें यूँ तो अलग–अलग होंगी लेकिन देखने वाले की आँखों में एक पल में होगी। वे समय के लम्बे होने के साथ उसकी आँखों में चलती नहीं रहेगी। उस देखने वाले के लिए बीता, सामने का और आने वाले समय के माने कुछ नहीं होंगे। उसके लिए सब एक ही पल में है।

जब हम जानते हैं कि ख़ुदा समय और जगह से ऊपर है तो सारी होने वाली बातें चाहे वह हो चुकी हों या आगे होने वाली हों, सभी उसके सामने होंगी। इस बुनियाद पर हम हर वक़्त ख़ुदा के सामने हैं जो हर छोटे बड़े को जानता है जैसा कि– कुरान ने कहा है:–

''अल्लाह तो जो तुम करते हो सब जानता है।''

(सूरा बक़रा (2) आयत–283)

इसलिए हम पर ज़रूरी है कि हम सौंपी गई अपनी ज़िम्मेदारियों (जो हम पर डाली गई हैं) को समझें और हर लड़खड़ाहट से दूर रहें, जो हमारी गिरावट और अल्लाह से दूरी का कारण बने, और बिल्कुल सब जानने वाले ख़ुदा के सामने हमेशा सर झुकाए रहे कि जिसने हमारा हाथ पकड़ कर हमें ज़िन्दगी के मोड़ों से पार कराया है यहाँ तक हम उस जगह पहुँचे जहाँ हम ताक़त और सकत वाले हो गये। हमें उन बातों को उलटना नहीं चाहिए जो हमारे लिए भलाई के रास्ते खोलती है और नेकी और ऊँचे इन्सानी मक़सद की तरफ़ ले जाती हैं। इस मक़सद को पाने का तरीक़ा यह है कि हम अल्लाह के गुणों को

खुद में पैदा करने की कोशिश करें और ख़ुदा से मिलने के रास्ते का सामान जुटायें, इसी से अल्लाह की ओर पलटने को सच कर सकते हैं। तक़वा (संयम) के बिना वहाँ तक पहुँचा नहीं जा सकता।

इसलिए ख़ुदा के पहचानने और उसको एक अकेला मानने की ज़िम्मेदारी इन्सान को सौंपी गई ख़ुदा की अमानत है।

ख़ुदा के न्याय की चर्चा

ख़ुदा के गुणों में न्याय, (अद्ल/इन्साफ़) की एक अलग और ख़ास बात है। ख़ुदा के न्याय करने के सिलसिले में मुसलमानों की सोच अलग–अलग है। उनके अपने–अपने विचार अलग–अलग तरह से रखे गये हैं।

(1) अशअरी लोगः

अबुलहसन अशअरी का मानने वाला सुन्नी मुसलमानों का गिरोह अल्लाह के अद्ल को हमारी तरह नहीं मानता। वह अल्लाह के कामों में अद्ल न्याय को नहीं मानता। उनके विचार में ख़ुदा जो भी काम करे वह अद्ल है, यहाँ तक कि अगर किसी काम पर सवाब या अज़ाब का हक़ न बनते हुए भी अगर ख़ुदा किसी को सवाब या अज़ाब दे तो यह ख़ुदा का काम अच्छा है और बिल्कुल न्याय और सच्च है।

यह लोग अद्ल को ख़ुदा के कामों से अलग करते हैं। हर उस चीज़ को अद्ल कहते हैं जो ख़ुदा की तरफ़ से हो। इस तरह अगर ख़ुदा अच्छे काम करने वालों को सज़ा और पापी लोगों को सवाब दे तो यह सब अद्ल है। अगर इसका उलटा करे यानी अच्छे लोगों को सवाब और बुरे लोगों को सज़ा दे तो भी यह अद्ल है।

ये हज़रात जो यह कहते हैं कि ख़ुदा के बारे में अद्ल और

अन्याय के कोई माने नहीं हैं, उसे ये लोग ख़ुदा की पाकी समझते हैं, जबकि हम लोग क्या कोई समझदार इन्सान ऐसी नासमझी और ओछेपन की बातों को कभी भी ख़ुदा की पाकी नहीं समझ सकता।

इस तरह की सोच, संसार के सिस्टम और इन्सान की सोच में ढंग के हिसाब और कारण नतीजे की असलियत से इन्कार है।

यह लोग ये भी कहते हैं कि अक़्ल अपनी सारी चमक–दमक के होते हुए भी इस्लाम के मसलों को समझने के लिए बुझ जाती है। यहाँ उसकी रौशनी इतनी कम हो जाती है कि सामने पास की चीजें भी नहीं दिखाई देतीं। इसलिए इन मसलों में अक़्ल के कहने पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। लेकिन यह बात न तो कुरआन से मेल खाती है और न सुन्नत से क्योंकि कुरआन अक़्ल से दूरी को बहकना कहता है और अल्लाह को जानने और दीन के अक़ीदों में ग़ौर करने और सोचने के लिए कहता है। जो लोग अपने से जगमगाते इस लैम्प से फ़ायदा नहीं उठाते, उनकी मिसाल ख़ुदा ने जानवरों से दी है।

कुरान कहता हैः

"इसमें शक नहीं कि ज़मीन पर चलने वाले जानवरों से भी बुरे (गए गुज़रे) वह बहरे, गूँगे इन्कार करने वाले हैं।"

(सूरा इन्फ़आल आयत–21)

ख़ुदा के रसूल (स0) फ़रमाते हैः

"लोगों के लिए ख़ुदा ने दो रास्ता दिखाने वाले तय किये हैंः पहला दिखाई देने वाला जिन्हें नबी कहते हैं, दूसरा न दिखाई देने वाला यानी अक़्ल।"

(काफ़ी जिल्द–1 पेज–25)

इस धड़े के मुक़ाबले में मुसलमानों के दो फ़िरक़े और हैं (1) मोतज़िली (2) शिया

मोतज़ली लोग

यह लोग अल्लाह को गुणों में अद्ल को मानते हैं और अद्ल को इन्होंने मुस्तक़िल (Permanent) तौर पर मज़हब की एक बुनियादी जड़ माना है। इन लोगों ने इन्सान के कामों को अल्लाह के फ़ैसले और भाग्य के लिखे की मजबूरी मानने को अद्ल के ख़िलाफ़ ठहराया है। इन लोगों का मानना है कि पैदा करने के सिस्टम और मज़हबी क़ानूनों के ढंग दोनों में ख़ुदा के सारे काम उसकी अदालत, न्याय इन्साफ़ की बुनियाद पर हैं। जिस तरह इन्सान के कामों को अच्छाई और बुराई की तराज़ू पर तौला जाता है, ख़ुदा के काम भी उसी तराज़ू पर तौले जाते हैं। लॉजिकली अक़्ल की नज़र में अद्ल एक अच्छाई और ज़ुल्म, अत्याचार, अपने में बुराई है इसलिए जानने वाला और सारी सूझबूझ वाला ख़ुदा ऐसे किसी काम को नहीं करेगा जो घिनावना हो और अक़्ल उसे मना करे।

हम जिस वक़्त कहते हैं 'अल्लाह इन्साफ करने वाला है' से हमार मतलब ये होता है कि ख़ुदा सूझबूझ और अच्छाई भलाई के ख़िलाफ़ कोई काम नहीं करता। ख़ुदा की सूझबूझ का मतलब यह नहीं है कि वह अपनी कमियों को पूरा करने के लिए और अपने मक़सदों तक पहुँचने के लिए बेहतरीन रास्ता चुनता है। यह तो इन्सान है जो अपनी कमियों और अधूरेपन से पूरेपन और ऊँचाई की तरफ़ बढ़ता है, लेकिन ख़ुदा का काम तो सब चीज़ों को कमियों से बाहर करना है और उनको उनके अपने मक़सदों के पूरेपन और ऊँचाइयों पर पहुँचाना है। पैदा की हुई चीज़ में सूझबूझ का मतलब वह सारे मतलब मक़सद हैं जो उसमें ख़ुदा ने भर दिये

हैं। ख़ुदा ने उन चीज़ों को वजूद देने की कृपा कर उनको दोबारा उनकी अपनी बाढ़ की ओर ले जाता है। इसलिए यह समझ लेना चाहिए कि अद्ल के माने तो बहुत फैले हुए हैं लेकिन इसका सबसे साफ़ और खुला मतलब ''ज़ुल्म, अति, अन्याय और ज़्यादती से दूरी'' है।

इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) ने अद्ल का मतलब समझाते हुए बतायाः ख़ुदा के बारे में अद्ल का मतलब यह है कि तुम ख़ुदा की तरफ़ कोई ऐसी बात न जड़ो जो तुमसे होती तो धित्तकार और पछतावे का कारण होती।

इन्सान के कामों और चाल–चलन में जो भी और जैसे भी अत्याचार या उधम होता है वह बस नासमझी, न जानने या बुरी चाह की वजह से होता है या फिर मन के खोट और मैलेपन के कारण।

बहुत से ऐसे लोग हैं जो अन्याय और बिगाड़ को बहुत बुरा मानते हैं मगर उसके नतीजों को न जानने की वजह से कभी–कभी ज़ुल्म अन्याय उधम या बुरे बिगड़े कामों में लिप्त हो जाते हैं।

कभी–कभी इन्सान को ऐसी चीज़ की ज़रूरत पड़ती है जो उसकी सकत और पहुँच के बाहर होती है तो उसे इन्सान हथियाने के लिए दंगा–फ़साद और तबाहियों पर उतारू हो जाता है। बैर, जलन, लालच, परेशानियाँ, दुख, ज़रूरत ये ऐसी चीज़ें हैं जिनकी वजह से इन्सान दूसरों पर ज़ुल्म (अत्याचार) करने के लिए तैयार हो जाता है। कभी–कभी तो अपने आपे से बाहर हो जाता है। अपना मतलब पाने के लिए कोई जतन उठा नहीं रखता। ऐसे में इन्सान अपने चलन और इन्सानियत की हदों को तोड़ देता है और बेबस मज़लूम की गर्दन पर सवार हो जाता है। मगर ख़ुदा की ज़ात इन सारी कमियों से दूर है और पाक है क्योंकि उसकी फैली

हुई जानकारी के सामने कोई चीज़ छुपी हुई नहीं है और न उसके लिए किसी भी तरह की बेबसी या बेइज़्ज़ती के बारे में सोचा जा सकता है। सीधी सी बात है कि सारे ऊँचे, अच्छे गुणों को जमा करने वाले ख़ुदा को कभी भी किसी की ज़रूरत हो ही नहीं सकती। ख़ुदा को यह ख़तरा नहीं है कि कहीं वक़्त न निकल जाए। जब वह किसी चीज़ का इरादा करे तो वह बग़ैर किसी हद के अपना इरादा पूरा कर सकता है। इसलिए वह न्याय के रास्ते से हट कर किसी पर ज़ुल्म या अन्याय नहीं कर सकता और न अपने को सुख पहुँचाने के लिए किसी से बदला लेगा। नहीं कोई ऐसा काम करेगा जो उसकी बड़ाई ऊँचाई को शोभा न दे।

इससे ये पता चला कि इस तरह के काम की वजह ख़ुदा, जिसका दान–दया और जिसकी पाकी कर्ण–कर्ण से झलकती है, नहीं हो सकता। वह किसी पर ज़ुल्म और ज़्यादती करे, यह कैसे हो सकता है!! कुरान कहता है:

''बस ख़ुदा ने उन पर कोई ज़ुल्म नहीं किया मगर वह लोग (कुफ़्र और सरकशी) से ख़ुद अपने ऊपर ज़ुल्म ज़्यादती करते थे।

(सूरा 'रूम' (49) आयत–9)

इस आयत में ख़ुदा ने अपनी ज़ात को ज़ुल्म से अलग बनाया है, यह काम ख़ुद इन्सानों का बताया है।

ये सभी सोचने की बात है कि क्या ऐसा हो सकता है कि ख़ुदा एक तरफ़ तो अपने बन्दों को इन्साफ़ का हुक्म दे और बुराईयों से रोके और ख़ुद ये काम करे और अद्ल (इन्साफ़) के ख़िलाफ़ करे।

कुरान कहता है:–

''इसमें शक नहीं कि ख़ुदा इन्साफ़ और (लोगों का) भला

करने और क़रीब के लोगों (परिजनों) को (कुछ) देने का हुक्म करता है, और बुरे कामों और भद्दे चलन करतूतें और सर उठाने को मना करता है और तुम्हें नसीहत करता है ताकि तुम उस पर चलो''

(सूरा 'नह्ल' (16) आयत–89)

कुरान की नज़र में इन्साफ़ की बात बहुत बड़ी अहम है कुरआन इसको इतना ऊँचा कर देता है कि नबियों के भेजने का मक़सद ही अद्ल खड़ा करने को ठहराता है।

कुरान कहता है:–

''हमने निश्चय ही अपने नबियों को खुले मोजिज़े (चमत्कार) देकर भेजा और उनके साथ–साथ किताब और (इन्साफ़ की) तराज़ू उतारी ताकि लोग इन्साफ़ पर खड़े रहें।''

(सूरा 'हदीद' आयत–24)

समाजी इन्साफ़ के सिलसिले में हज़रत अली (अ0) का विचार देखिये। इब्ने अब्बास कहते हैं कि एक दिन मैं हज़रत अली (अ0) के पास गया तो देखा कि आप अपनी जूतियों को टाक रहे हैं। मुझे देखकर फ़रमाया, ''इस जूती की क्या क़ीमत होगी?'' मैंने कहा, ''इसकी कोई भी क़ीमत नहीं है।'' इस पर कहा: 'इस पुरानी जूती की क़ीमत मेरी नज़र में तुम्हारी इस हुकूमत से ज़्यादा है सिवाए इसके कि मैं इस हुकूमत के ज़रिये इन्साफ़ खड़ा कर सकूँ।'

इस्लाम समाजी इस इन्साफ़ के लिए इतना कहता है कि अगर मुसलमानों में एक फ़िरक़ा (गुट) समाजी इन्साफ के रास्ते से हट जाए और दूसरों पर ज़ुल्म ज़्यादती करने लगे तो उनको ऐसा करने से रोकना होगा चाहे इसके लिए जंग ही करना पड़े।

इसलिए क़ुरान कहता हैः

और अगर मानने वालों (विश्वास वालों) में से दो गुट आपस में लड़ पड़ें तो उन दोनों में सुलह समझौता करा दो फिर उनमें से अगर एक गुट दूसरे पर ज़्यादती करे, तो तुम (भी) ज़्यादती करने से लड़ो यहाँ तक कि वह ख़ुदा के हुक्म की तरफ पलट आयें फिर जब पलट आयें तो दोनो गुटों में बराबरी के साथ सुलह समझौता करा दो और इन्साफ़ से काम लो बेशक ख़ुदा इन्साफ करने वालों को चाहता है।

(सूरा 'हुजरात' आयत–9)

इस आयत में एक ख़ास बात की तरफ़ ध्यान दिलाया गया है। जो लोग दोनों में सुलह (कम्प्रोमाइज़) करा रहे हैं, उन लोगों को इतना ज़्यादा जतन करना चाहिए कि झगड़ा पूरे–पूरे इन्साफ़ पर ख़त्म हो और किसी तरह से सच और इन्साफ़ में कमी न हो, क्योंकि जहाँ पर दो ऐसे गुटों में जंग होती है जहाँ एक की तरफ़ से दूसरे पर ज़्यादती हो, तो अगर समझौता कराने में ये बीच बराव करने वाले दबाव डाल कर एक पार्टी को इस बात पर राज़ी कर लें कि वह अपने हक़ को छोड़ दे तो हो सकता है कि ज़्यादती करने वाले और हद से बढ़ने वालों को बढ़ावा मिल जाये। इन्सानों के समझौतों में ज़्यादातर यही होता है कि ज़्यादती करने वाले को ही दे दिलाकर राज़ी किया जाता है।

कुछ हक़ में अधिकारों से आँख बन्द करना अपने एक अच्छी चीज़ ज़रूर है मगर इस तरह के मौक़ों पर ज़्यादती करने वालों के दिल में अच्छा असर नहीं पड़ता, जबकि इस्लाम यह चाहता है कि इस्लामी समाज में ज़ुल्म सितम को जड़ से उखाड़ फेंके और लोगों को यह यक़ीन हो जाए कि कोई इन्सान ज़ुल्म

और ज़बरदस्ती से कोई चीज़ पा नहीं सकता है। 'होने' के सिस्टम को दखकर हम ख़ुद भी ये तय कर सकते हैं कि इसमें एक ऐसा बैलेन्स और बराबरी है जो आसमानी सिस्टम पर राज करता दिखता रहा है। यही सारे ज़ाहिर होने वाले ज़र्रों, इलेक्ट्रानिक्स और सारे पिण्डों की चालों से पता चलता है। गैलेक्सियों की चाल, सितारों के चक्कर के साथ–साथ दौड़–धूप भी मिट्टी, पत्थर और पेड़–पौधों के बीच एक बैलेन्स है बल्कि एक ज़िन्दा के अंग–अंग में भी पूरा बैलेन्स है। इन सबसे तो यही साबित होता है कि ये सारी चीज़ें इस बात की दलील हैं कि सारी दुनिया में पूरा–पूरा गठा इन्तिज़ाम है।

हमारे प्यारे रसूल (स0) ने इस आम बैलेन्स और बराबरी और 'हर बात हर चीज़ में हिसाब ढंग' को ख़ास तरह यूँ कहा हैः ये न्याय ही है जो आसमान और ज़मीन को अपनी–अपनी जगह पर रोके हुए है।

क़ुरान मूसा (अ0) की ज़बान से कहलवा रहा हैः

''मूसा (अ0) ने कहा हमारा ख़ुदा वह है कि जिसने हर चीज़ को ढंग का रूप दिया है फिर उसी ने जीने के तरीक़े बताए हैं।''

(सूरा 'ताहा' (20) आयत–50)

जनाब मूसा (अ0) ने एक छोटी सी बात में ढंग और सजीलेपन से भरीपुरी इस दुनिया को जो ख़ुदा की निशानियों में है, फ़िरऔन से बता रहे हैं ताकि उस टेढ़ी सोच से छुटकारा हो जाए और पूरी दुनिया में अल्लाह के अदालत न्याय वाले पूरे सिस्टम के होने को समझ सके। सिस्टम और संतुलन तो प्राकृतिक तौर से चल रहा है। प्रकृति (Nature) का हर ज़र्रा प्रकृति के क़ानून नियम के चौखटे में अपने विकास के ख़ास ठिकाने की तरफ़ चल

रहा है। इस सिस्टम के बीच किसी तरह का उलटफेर पूरे सिस्टम में गड़बड़ी और बेकली की वजह बन जाता है तो बेचैनी की वजह बन जाती है।

प्राकृतिक तौर पर नज़र आने वाली चीज़ों में किसी भी तरह की गड़बड़ी ख़ुद उनमें रिएक्शन (Reaction) का पता देती है। अन्दर की या बाहरी रुकावटों को हटाकर ये चीज़े अपनी विकास का रास्ता साफ़ कर देती हैं और दोबारा सिस्टम को लागू कर देता है।

जब बदन पर बीमारियों का हमला होता है या माइक्रोब का हमला होता है, तो ख़ून के सफ़ेद सेल (W.B.C.) इस हमले को रोकने के लिए तैयार हो जाते हैं। दवाएँ इलाज उनकी बाहरी मदद करते है। यह बदन को पहले जैसी हालत में लाने की कोशिश में लग जाते हैं। लेकिन इन्सान पर लागू अद्ल, न्याय, इन्साफ़ का सिस्टम इससे अलग होता है क्योंकि इन्सान को अपने से करने की ताक़त दी गई है।

लेकिन मेहरबानी दया करने वाला ख़ुदा असल न्याय के ख़िलाफ़ कोई काम कर ही नहीं सकता। यही क़ुर्आन की आवाज़ हैः

''अल्लाह ही तो है जिसने तुम्हारे लिए ज़मीन को ठिकाना और आसमान को छत बनाया और उसी ने तो तुम्हारी सूरतें ढालीं और अच्छी सूरतें बनाई और उसी ने तुम्हें खाने को साफ़ सुथरी चीज़ें दीं, यही अल्लाह तो तुम्हारा पालनहार है।''

(सूरा 'मोमिन' (40) आयत–63)

संसार पर बुराई और बिगाड़ का राज क्यों?

लोगों के मन में ख़ुदा के न्याय से जुड़े कुछ सवाल पैदा होते हैं, जैसेः जब ख़ुदा अद्ल (इन्साफ़) करने वाला है तो संसार

के सिस्टम में ये आफतें, बिगाड़, घाटे है ही क्यों? समाज में कमियाँ, खोट, गड़बड़ियाँ क्यों है? बहुत से लोगों के मन में इस तरह के सवाल और एतेराज़ पैदा होते हैं जिससे वह छुटकारा नहीं पा सकते और इसे न सुलझने वाली गुत्थी समझ बैठते हैं।

वह लोग कहते हैंः यह कैसे हो सकता है कि संसार जब सूझबूझ से पैदा किया गया है तो फिर इसमें दुख और बुराइयाँ क्यों हैं? बर्बरता और भाग्य–बिगाड़ का चलन क्यों है? चारों ओर ख़राबियाँ और कमियाँ क्यों हैं? आख़िर दुनिया के कोने–कोने में भयानक हादसे इन्सानों पर क्यों धावा बोलते हैं? और हज़ारों सुनसानियाँ, तबाहियाँ, घाटे क्यों होते हैं?

क्यों ये सुन्दर है और वह क्यों भद्दा है? यह अच्छा, ठीक है, वह बीमार है? यह सब एक जैसे क्यों नहीं पैदा किए गए?

क्या यह नाबराबरी और भेद इस बात की दलील नहीं है कि कोई इन्साफ–न्याय इस जीती जागती दुनिया में नहीं है? जब तक दुनिया से बेइन्साफ़ी, अलगाव, आफ़त, दुख, बीमारी, मुसीबत, कमज़ोरी, फ़क़ीरी, बुराइयाँ इस तरह की सारी चीजें ख़त्म न हो जाएँ, अदालत के सिस्टम को माना नहीं जा सकता है।

सबसे पहले हमको यह मान लेना चाहिए कि हमारी खोजबीन हम को सामने की चीज़ों की गहराई की हद तक नहीं पहुँचाती और न इन बातों के कारणों का पता चलाने के लिए काफ़ी हैं। यह बात सही है कि पहली नज़र में बुरे हादसे और आफ़त की सच्चाई को समझे बग़ैर हम सिस्टम में अद्ल इन्साफ़ के न होने को सोच सकते हैं। इन्सान जब इस बात पर गहराई से ध्यान देता है तो उसकी सोच में बड़ी हलचल पैदा हो जाती है। इसी के असर में वह लगातार नासमझी से मसले हल करने लगता है।

लेकिन कुछ गहराई से और बुनियादी तौर पर ध्यान करें, तो हमको अपनी इस सोच की जड़ का पता चल जाएगा कि हमारे फ़ैसले हमसे डायरेक्ट या इनडाएरेक्ट जुड़े लोगों और फिर अपने और उनके भले की कसौटी पर होते हैं। जो भी हमको अपने फ़ायदे की लगे वही अच्छी, और जो नुक़सान वाली लगे, वही बुरी। हमारी छोटी आंखें और सिकुड़ी सूझबूझ इस फैले संसार को चलाने वाले चलन और नियमों को गहराई से समझे बिना अच्छाई बुराई की कसौटी बनाती है। बस क्या होने वाली बातों का रिश्ता हमसे है कि सिर्फ़ हम अपने ही को अच्छे और बुरे की कसौटी बनायें? नहीं, ऐसा नहीं है।

हमारी यह मैटरियल दुनिया बदलाव वाली है। जो बातें आज नहीं होती हैं कल हो सकती हैं। कुछ चीज़ें कभी थीं अब नहीं हैं, उनकी जगह दूसरी चीज़ें आ जाती हैं। आज जो चीज़ कुछ लोगों का भला करती है, हो सकता है वही कल रहे ही न। लेकिन हम इन्सान हैं, हमारे और संसार के बीच एक लगाव है इसलिए हमारे हाथों से चीज़ों का निकल जाना हमें बुरा और हाथ लग जाना अच्छा लगता है। इन्सानों और चीज़ों से इस लगाव को छोड़कर भी संसार में बदलाव की वजह से तरह–तरह की बातें पैदा होती रहती हैं। अगर यह बदलाव ख़त्म हो जाएँ तो कोई नई बात हादसा नहीं होगी और ऐसे में अच्छाई और बुराई का होना ही ख़त्म हो जाएगा।

फिर उस ख़याली दुनिया में न कमी होगी, न बुराई, न बाढ़, तरक़्क़ी होगी। इसी तरह उस ख़याली दुनिया में न कोई उलटा–सीधा होगा न अलगाव, न तरह–तरह की क़िस्में प्रकार, न बहुतात, न मेल, न जोड़तोड़, न ही चाल, न ही हिलना डुलना कुछ भी तो न होगा।

जिस ख़याली दुनिया में कमी न होगी किसी तरह का नियम क़ानून न होगा, न इन्सानी, समाजी या चाल–चलने के बन्धन होंगे। जब यह बाढ़ और बदलाव न रह जाएगा, तो ज़मीन, सूरज, चाँद, दिन, महीने, साल कुछ भी न रहेंगे।

जिस दुनिया में परेशानी दुख़ ही न होगा, हिलना, डुलना और कोशिश, जतन न होगी। जब ख़तरों का एहसास न होगा, तो चैन के माहौल में ख़ुशी का भी एहसास न होगा। जिस दुनिया में उम्मीदें और चाहतें न हों और जानवालों में प्यार मुहब्बत, दया मेहरबानी का असर ख़त्म हो जाए, वहाँ पर इन्सानों के रिश्ते और लगाव ही टिके नहीं रह सकते, वहाँ उठान और बाढ़ पाने की उमंग इन्सान के अन्दर की गहराईयों में डूब जाएगी।

पूरे फैले बड़े संसार को नज़र में रखते हुए गहराई से देखें। आज जो हमारे लिए नुक़सान की चीज़ है आज ही या कल दूसरे के भले वाली हो सकती है क्योंकि संसार का चलन सबके मिले जुले भले ही के लिए है। हो सकता है इस सिलसिले में किसी को किसी तरह का कुछ नुक़सान भी लगे, वह बात सबके मिले जुले फ़ायदे की न हो।

हाँ, अगर हम अपने ज्ञान साइन्स की मदद से ख़ुदाई बातों के राज़ों का पता लगाते तो बेशक हमारे लिए होने वाली बातों के नतीजे और उनकी फ़लासफ़ी खुलकर साफ़ हो जाती। लेकिन जब हम यह जानते हैं कि आज होने वाली बातें पहले के कारणों के सिलसिले का नतीजा हैं और यही आगे होने वाली बातों की वजहें और आने वाले नतीजों का कारण है तो फिर हम समझ सकते हैं कि हम जो कुछ भी देख रहे हैं और जो भी अच्छा या बुरा लग रहा है, ये कोई गहरा और भरपूर फैसला नहीं है। हाँ, अगर हम ऊपर से हर तरह पूरे युनिसर्व को, उसके 'हाँ' 'नां' को, उसकी

खुली और छुपी हुई बातों को देख सकते, पिछली और अगली बातों के असर और नतीजों को अच्छी तरह समझ सकते, सदा से पहले और सदा के बाद यानी पूरे समय के ओर छोर को पकड़ सकते, फिर यह देखते कि एक होने वाली बात के नुक़सान फ़ायदों से ज़्यादा हैं, तब हमारा यह कहना सही होता कि इस होने वाली बात में बुराई है, लेकिन क्या यह इन्सान के बस में है कि सारे संसार के हर राज़ को पूरी तरह से घेर सके? लेकिन जब हमारे पास ऐसी खोज की ताक़त ही नहीं है और इस सिलसिले में हमारी कोशिश अधूरी है, और इस आलम के छिपे हुए उलझे राज़ों से हम पर्दा उठा नहीं सकते है, तो फिर हमारे लिए ज़रूरी है कि जल्दबाज़ी से काम न लें, कोई नतीजा निकालने से अपने को रोक लेना चाहिए। हमारे लिए ये समझ लेना भी ज़रूरी है कि अपने ख़ास फ़ाएदे और भले को इस फैले हुए संसार के आम सिस्टम के लिए कसौटी न बनाकर ये फैसला करें: (सच न होकर) सच लगती चीज़ों पर बने हुए और ख़ास हदों में घिरे हुए अपने विचारों (सोचों) से हम आख़िरी फ़ैसला नहीं निकाल सकते।

कभी–कभी संसार के मक़सद की खोज में ख़ुद नेचर का काम ऐसा होता है जिसे आम तरह से इन्सान सोच भी नहीं सकता। हम क्यों ये न सोचें कि जिनमें बैलेन्स (Balance) न हो, बेतुकापन हो, वह बातें ऐसी ज़मीन बराबर करने के लिए कोशिश कर रहे हैं जिससे नया हो सके जो ज़मीन में ख़ुदा की जगह हो। हो सकता है समय और जगह (Time & Space) के रंग–ढंग ही इस बात की माँग करते हों।

अगर भयानक बदलाव और उलटफेर मतलब से न होते रहते और अलग–अलग समय में सदा से बाक़ी न होते, तो आज ज़मीन पर तरह–तरह के जान वालों और इन्सानों का वजूद भी

न होता।

आख़िर कुछ होने वाली बातों और अलग की लगने वाली चीज़ों को देखकर हम 'होने' के संसार को बेइन्साफ़ी, रुकावट और बेटिकाऊपन का झूठ क्यों थोपें? और कुछ हल्की बेढंगी बातों को देखकर (अपने एतराज़ की) उँगली क्यों उठाएं? समझ वाली ठीक बातों और अनोखे गहरे बिन्दु (प्वाइन्ट) भूल जायें जो बेहद सूझबूझ और पूरे–पूरे इरादे की निशानियाँ हैं।

इन्सानी ज्ञान साइंस अपने में मनोहर होते हुए भी बहुत थोड़ी, अधूरी और अपनी हदों में सिमटी हुई है। इन्सान तो अभी अपनी जानकारी की शुरुआत में है। साइंस पर यह घमण्ड सिर्फ़ लफ़्जों का खेल है, इसके अलावा कुछ नहीं है। जो इन्सान अभी तक अपने शरीर के छुपे हुए सारे राज़ों को पूरी तरह नहीं जान सका, वह काएनात के इस फैले हुए अथाह संसार के राज़ों को समझ लेने की कोशिश करने लगे तो यह बेवक़ूफ़ी के अलावा और क्या है?

कार्ल (Karl Marx) कहता है हमसे हमारे जिस्म से ज़्यादा कोई चीज़ क़रीब नहीं है इस पर भी हम अपने जिस्म के अन्दर छुपे हुए बहुत से राज़ों को अच्छी तरह नहीं जानते।

इन्सान जब संसार के सिस्टम में हर तरफ़ सोची समझी प्लानिंग को देखता है तो उसके लिए ज़रूरी है कि इस बात को माने कि संसार एक मक़सद वाला है जो अपने पूरेपन की तरक़्क़ी की और बढ़ता चला जा रहा है, उसकी हर चीज़ नपी तुली है और एक ख़ास कसौटी के अन्डर में है। अगर उसे कोई चीज़ नासमझी की और बेसहेजी लगे, तो उसको अपनी कम सूझबूझ का कारण समझे और यह समझ ले कि उसका हदों में बन्धा छोटा वजूद संसार के सारे राज़ और मक़सद को नहीं जान सकता लेकिन 'है'

के इस संसार की असल में कोई कमी या गड़बड़ी नहीं है।

संसार में कड़वी बातों का होना हमारी नज़र में उस देहाती के क़िस्से की तरह है जो एक शहर में गया तो उसने देखा बड़े–बड़े बुलडोज़र पुरानी इमारतों को गिराने में लगे हैं। उसने सोचा बिल्डिंगों को गिराना और उसे सुनसान खण्डहर कर देना बेवक़ूफ़ी के अलावा कुछ भी नहीं है। लेकिन क्या ऐसा गिराना किसी प्रोग्राम और किसी मक़सद के बिना था? और क्या देहाती का फैसला समझ का था? नहीं, वह तो सिर्फ इमारत का गिराना देख रहा था। उसे क्या मालूम इन्जीनियरों के नये प्लान के हिसाब से ये काम किया जा रहा है।

एक बुद्धजीवी का कहना है कि जो लोग सामने नज़र आने वाली चीज़ों को देखकर कमी, ख़राबी और बुराई की बात करते हैं वे उन बच्चों जैसे हैं जो एक ऐसे सर्कस को देख रहे हैं जिसको अपने प्रोग्राम के हिसाब से एक जगह दिखाकर दूसरी जगह दिखाना है। मगर बच्चों की नज़र में बल्लियों का उखाड़ना, तम्बुओं का उठाकर इकट्ठा करना, इन्सानों और जानवरों का वहाँ आना–जाना होना, यह सब बातें सर्कस के ख़त्म हो जाने का एलान होता है, जबकि वह दूसरी जगह दिखाया जाएगा। अगर हम खुली आँखों से गहराई में देखें तो मुसीबत और आफ़तें पड़ते हुए देखें और उससे सही काम लें तो हमको मालूम होगा कि यह सच में आफ़तें और मुसीबतें नहीं हैं बल्कि नेमत हैं। दो अलग–अलग लोगों के लिए एक ही चीज़ की अलग–अलग अच्छी या बुरी बात होती हैं।

इन्सान के लिए मुसीबत और दुख़ एक तरह की ख़तरे की घण्टी होती है जिससे इन्सान अपनी कमियों और ग़लतियों को सुधार सकता है। असल में यह दर्द और दुख नेचरल कन्ट्रोल है।

अगर धनी होना मौजमस्ती और जिस्म की पूजा हो तो यह दुर्गत और बदक़िस्मती है। अगर ग़रीबी, फ़क़ीरी अच्छी परवरिश और रूह की तरक़्क़ी का कारण हो तो नेमत है। इसलिए हरगिज़ अमीरी की ख़ुशक़िस्मती और गरीबी को बदक़िस्मती नहीं कहा जा सकता। यह बात नेचर की दी हुई हर चीज़ पर लागू होती है।

जिन समाजों को दुश्मन का सामना करना पड़ता है और अपने जीने के लिए कड़े जतन (Struggle for survival) करना पड़ता है वे मज़बूत बनकर उभरते हैं। जब हम अपने काम को जतन और सकारात्मक (Positive) कोशिश से सराहें, तब हमें वह कड़ा समय न भूलना चाहिए जो इन्सान को मक़सद की ओर बढ़ने में ताक़तों को बढ़ाता है। जो समाज दौड़धूप नहीं करते और चैन की बन्सी बजाते हैं वह आराम, आसानियों और मौज मस्ती में डूब जाने की वजह से बहुत जल्दी मात खा जाते हैं।

कभी–कभी तो इन्सान अपने बड़े मक़सद को पाने के लिए ऐसी बड़ी–बड़ी मुश्किलें और परेशानियाँ झेलता है कि अगर वह दुख और कड़ाई, सख़्तियाँ न होती तो मक़सद की बड़ाई का पता न चलता। इसीलिए बाढ़ और उठान के लिए रास्ता की आसानी से और अन्धे, मशीनी तरह से चलने से काम नहीं बन सकता। पक्के इरादे के बिना कोशिशें आदमी में बुनियादी बदलाव नहीं ला सकतीं। कड़ाई और खींचतान वह डण्डा है जिससे जानवरों को सीधे रास्ते पर चलाया जाता है। बेजान पत्थर आदि घुटन और दबाव से चूर–चूर हो जाते हैं मगर इन्सान दुखों, परेशानियों में घिरकर मज़बूत हो जाता है। चोट और घाटे में तपकर आदमी की समझ पर धार होती है।

दुनिया से मुहब्बत और बस मज़े को मक़सद बना लेना बहकावा और गिरावट है। सबसे बुरे अभागे लोग वही होते हैं जो

हर तरह ज़िन्दगी की कठिन से दूर रख कर दुनिया के ठण्डे गरम को चखाये बिना हर तरह की नेमतों में पाले जाएँ। मन की ग़ुलामी पक्के इरादे और लगातार कोशिश के साथ इकटठा नहीं होती क्योंकि मन के अडिगपन की ताक़त और बिगाड़ के मज़े एक दूसरे के उलटे हैं। जिस तरह दोनों एक साथ नहीं हो सकते, उसी तरह दोनों का 'ना' भी नहीं किया जा सकता इसलिए इन्सान के लिए लगातार कोशिश करते रहना ज़रूरी है जिससे निजी तरह इरादे की ताक़त (Will Power) और पांव की मज़बूती बढ़ती रहे और इसी हिसाब से मज़ा और मौज–मस्ती की चाहत कम होती रहे।

दुनिया की मीठी और कड़वी सच्चाई से अनजान लाड प्यार के पले हुए लोग बेहिसाब आसानियों में रहे हैं, भूक की कठिनाई कभी नहीं सही है, इसलिए न वे अच्छे से अच्छे खानों के मज़े के रसिाया हैं और न उन्हें ज़िन्दगी के चाव की समझ और न ही दुनिया की साज–सज्जा की चाह होती, क्योंकि कठिनाइयों से लगाव, नाकामियों और कड़वाहट का मज़ा चखना, परेशानियों को सहन कर सकना, मुसीबतों को झेलना यह वह चीज़ें हैं जो हर क़दम पर इन्सान के साथ होती हैं, बस ज़िन्दगी के मज़ों से फ़ायदा उठाने की शर्त है।

जब इन्सान आड़े वक़्तों और दुखों के बीच पिसता है और दुनिया की ऊँचनीच झेलता है तब वह अनमोल ज़िन्दगी में मैटरियल और रूहानी मज़े देख पाता।

मैटरियल ज़िन्दगी में चालू रहने की वजह से इन्सान दुनिया का ग़ुलाम बन जाता है, और अपने अन्दर के मन की आज़ादी को खो बैठता है, हमेशा रहने वाली ज़िन्दगी को भूल जाता है या भुलाने लगता है। जब तक चाहतों के पर्दे उसके सरों पर हैं और उसकी रूह अंधेरों में बन्दी है वह मैटरियल लहरों में

एक तिनके की तरह इधर–उधर मारा–मारा फिरेगा और ख़ुदा को छोड़ सबका ग़ुलाम रहेगा। इसलिए उसे ऐसे जगाने के तरीक़े की जिसमें "सोच के पक्केपन का कारण हो और सीधी (Positive) छाप हो" ज़रूरत है जो उसको मिट जाने वाली दुनिया की याद दिलाए और मन की आज़ादी –जो आसमानी शिक्षा का आख़री मतलब है– तक पहुँचाए और उन सारे रोड़ों से छुटकारा दिलाये जो इन्सानियत को ऊँचाई और बाढ़ से रोकते है।

यह सही है आसानी से मन को ठीक नहीं किया जा सकता बल्कि इसके लिए चाहतों की अनदेखी करना होती है जो बहुत ही कड़वा घूँट है, ये मानता हूँ कि इस अनमोल कोशिश से मन रूहानी सलाहियत के लिए तैयार हो जाएगा मगर ये भी सही है कि गुनाहों और मौजमस्ती से दूरी कहीं ज़्यादा कड़वा घूँट है, जो बिच्छू के डंक और साँप के काटने से ज़्यादा कड़ा है। इन्सान अपनी कठिनाइयों के हल करने और रोड़े हटाने के लिए इतनी आसानी से इतनी सकत नहीं जुटा पाता। तगड़े मुक़ाबले के बिना ऊँचाइयों तक नहीं पहुँचा जा सकता।

दुख जगाने और चलाने के कारण हैं

जो लोग कामयाबियों और ताक़त के नशे में चूर हैं, उनकी रूहों और अक़्लों पर चाहतें छाई होने ने उनसे इन्सानियत छीन ली है। संसार के कोने किनारे में होने वाली बातें कभी–कभी उनकी सोच को जगाने के लिए ज़मीन बराबर कर देते हैं और उनकी अक़्लों पर पड़े बेहोशी के पर्दे उठा देते हैं यहाँ तक कि वह इन्सानियत की ऊँचाई और सीधे रास्ते पर पांव बढ़ा सकते हैं और आने वाले कल में अच्छे और फल देने वाले नतीजे पा सकते हैं। बहुत से ऐसे लोग मिलते भी हैं जिन्होंने दुखों के नतीजे में ख़ूबसूरत और बढ़िया (आने वाले) कल की तरफ़ बढ़े हैं।

नुक़सान वाले असर, ख़तरनाक घमण्ड और लापरवाही और फिर इन्सान से सीख देने वाले दुखों के नतीजों से हम कह सकते हैं कि इन बुरे वक़्तों आफ़तों और दुखों में –यह और बात है इनमें बुराई भी लगती है– बहुत से भले, छुपी हुई नर्मियाँ और नेमतें भी मिली होती हैं। ये इन्सान को जगाने और इरादे को पक्का करने का काम करती हैं। बस नतीजा यह निकला कि कठिनाइयाँ बाढ़ और ऊँचाई की पहली सीढ़ी बनती हैं। ये मंज़िल की तरफ़ बढ़ते हुए क़दम हैं और इन्सान के लिए ज़मीन बराबर करने वाली है। इन्हीं परेशानियों से इन्सान में ख़ुलूस और ऊँचाई या गिरावट का पता चल जाता है।

कुरान कहता हैः–

''और हम तुम्हें कुछ डर और भूक से और मालों और जानों और फलों (बेटी–बेटों) की कमी से ज़रूर परखेंगे और (ऐ रसूल) ऐसे सहने वालों को जिन पर जब कोई दुख आ पड़ा तो वह बोल उठे 'हम तो ख़ुदा ही के हैं और हम उसी तरफ लौट कर जाने वाले हैं' ख़ुशख़बरी दे दो कि उन्हीं लोगों पर उनके ख़ुदा की तरफ़ से दान हैं और दया और यही लोग हिदायत (सही रास्ता) पा चुके हैं।'' (सूरा बक़रा (2) आयत 150–152)

मशहूर फिलास्फ़र इमरसन (Emerson) कहता हैः वह बदलाव जो कभी लोगों के सारे भले चकनाचूर कर देते हैं, वह बाढ़ और तरक़्क़ी के लिए पैदा की गई इसी नेचर की तरफ़ से वार्निंग है क्योंकि जब इन्सान की रूह में ख़ुदा की इबादतों की ललक पैदा हो जाती है तो रूहें धन दौलत और दोस्तों की बुनियाद पर अपने बने माहौल को छोड़ देती हैं जिस तरह छोटी मछलियाँ अच्छे बदलाव के लिए अपनी पहली जगह छोड़ देती हैं।

इन्सान के मन में दुखों के नतीजे बहुत देर ही में खुलते हैं। मुसीबत के नतीजे तब खुलते हैं जब मुसीबत को गुज़रे एक लम्बा ज़माना गुज़र जाता है। हिस्से का टूटना, धन की कमी, दोस्तों की मौत, ज़रूरत से ज़्यादा मुसीबत की वजह से बेआसी ये ऐसी चीजें हैं कि जिनका असर फ़ौरन नहीं होता। जब समय बीत जाता है तो इन के छुपे हुए तगड़े असर सामने आते हैं।

अपनों की मौत शुरु में तो दुख और सुनसानी को छोड़ कुछ नहीं होती लेकिन बाद में यही हमारे लिए अच्छा सबक़ बन सकती है, क्योंकि ऐसी बातों से हमारी ज़िन्दगी बदलती है, बचपन और जवानी को हर हाल में जाना होता है, इसको मन में बिठाती हैं। ज़िन्दगी और उसके कामों से दिल को उचाट कर देती हैं, इसकी जगह आदमी के अन्दर ऐसी उमंग और हिम्मत पैदा कर देती हैं जिसमें आगे बढ़ने और उठने की सकत कहीं ज़्यादा होती है।

जो इन्सान सूरज की गर्मी से बेपरवाह और किसी देखभाल के बग़ैर अगर गुलाब जैसी अच्छी ज़िन्दगी चाहता है, उसको इन्जीर के ऐसे पेड़ की तरह हो जाना चाहिए जिसको माली ने लापरवाही की वजह से छोड़ दिया हो और देखभाल न होने की वजह से बाग़ की दीवारें भी गिर चुकी हों फिर भी वह पेड़ कितना तगड़ा और घना हो जाता है, उसके फलों से और उसके साये से लोग फ़ाएदा उठाते हैं।

ख़ुदा तो बेशक ऐसे संसार को पैदाकर सकता है जिसमें बदक़िस्मती, दुख, तकलीफ़ तो न हो लेकिन इन्सान की सकत, आज़ादी और अख़्तियार न हो और दूसरी ज़िन्दा या बेजान चीज़ों की तरह इन्सान को भी उस बड़ी दुनिया के अन्दर बेइरादा और बेअख़्तियार और बेसमझ बना देता जो नेचर के असर से कोई रूप

अपना लेता तो क्या ऐसे को इन्सान कहना ठीक होता? क्या इन्सान अपनी सारी क़ाबलियत खोकर और अनमोल पूँजी देकर –यानी अपनी सारी आज़ादी खोकर– अपना कमाल पा सकता?

सूझबूझ वाले ख़ुदा जिसकी हिकमत पूरे संसार पर छायी है, उसने यह चाहा कि होने वाली बातों के बार–बार होने और इन्सान को अनमोल आज़ादी और अपना करने की सकत देकर चाहा कि उसकी भरपूर सकत और ऊँची सूझबूझ की तरफ़ लोगों का ध्यान हो।

इन्सान के अन्दर उसने अच्छाई और बुराई की सकत दी है और किसी भी चीज़, अच्छाई या बुराई पर मजबूर किये बिना इन्सान से हमेशा भला ही चाहता रहा क्योंकि बुराई को उसने कभी पसन्द नहीं किया।

हाँ, उसने अच्छे कामों को हमेशा पसन्द किया और बुरे कामों को छोड़ देने पर उसने बेहिसाब सवाब रखा है और पाजीपन और जानबूझकर बुराई करने से रोका है, बड़े अज़ाबों और सज़ाओं से डराया है। अब यह इन्सान के हाथ में है कि जी चाहे तो उसके बताए हुए रास्तों पर अपने से चले और उसका शुक्र अदा करने वाला बन्दा बने या उसकी बातों को न मानकर काफ़िर हो जाए। इन चीज़ों के साथ–साथ पाकी और रौशनी की तरफ़ पलटने का रास्ता खुला रखा है। कभी अगर इन्सान से कोई ग़लती हो जाए तो दोबारा ख़ुदा की रहमत के दामन में पनाह ले सकता है। यह ख़ुदा का बहुत बड़ा करम, दया, इन्साफ़ और महान कृपा है।

अगर नेक काम करने वालों को ख़ुदा फ़ौरन इनाम दे दे तो बुरे कामों और बुरे चलन पर अच्छे काम की कोई उँचाई–बढ़ाई नहीं होगी इसी तरह अगर बुरे काम पर फौरन सज़ा दे दे तो अच्छाई को ओछेपन पर, सफ़ाई को गन्दगी पर

कोई बढ़ावा न होगा।

यूनीवर्स की बुनियाद एक दूसरे की तोड़ और उलट पर है। मैटर के इसी बदलाव से ख़ुदा की कृपाएं दुनिया में चल रही हैं। अगर मैटर दूसरी चीज़ों से मिलकर अलग–अलग रूप न अपना लेता, उसमें नई सूरत में ढल जाने का गुण न होता, तो इस संसार में कभी भी रंग–बिरंगी सूरतें, नयापन और बाढ़ न पायी जाती। न बदलने वाली और जमी हुई दुनिया जमे धन की तरह है, जिससे कोई फ़ाएदा नहीं मिल सकता। हक़ीक़त तो यह है कि पैसे का घूमते रहना ही फ़ाएदे का कारण बनता है। हाँ, कोई ख़ास धन ख़र्च करने से नुक़सान पहुँचाने वाला हो सकता है। लेकिन दुनिया के सारे मैटर दुनिया की पूँजी की तरह हैं जो बेशक चलाने फिराने से फ़ायदा पहुँचाते हैं।

मैटर के रूपों में उलट–पलट का होना भी फ़ायदे वाला है, क्योंकि यही चीज़ उन्हें बाढ़ और ऊँचाई की तरफ़ ले जाती है। यह बात तो हम उस वक़्त कह रहे हैं जब दुनिया में जिस तरह बुराई का मतलब लिया जाता है उसी माने में लें। लेकिन अगर ध्यान दिया जाए तो बुरा करना असली गुण नहीं है, बल्कि बुराई के बढ़े हुए मानों में है। मिसाल के तौर पर आग उगलने वाला हथियार अगर हमारे दुश्मन के पास हो तो हमारे लिए बुरा है मगर यही हमारे हाथ में हो तो हमारे लिए भला है, बुरा नहीं है। अगर न हम हों और न हमारा दुश्मन हो तो यह हथियार न अच्छा है न बुरा है।

इसी के साथ यह भी देखिये कि संसार का सिस्टम एक हिसाब से चलता है। दुनिया का सिस्टम बनाने वाले ने कुछ इस तरह से बनाया है कि हमारी चाहतों का पूरा होना ज़रूरी नहीं है, जबकि हम यह चाहते हैं कि हमारी न ख़त्म होने वाली चाहतें

किसी रोक–टोक के बिना पूरी हो जाएं। नेचरल बातें हमारी चाहतों को पूरी करने के ज़िम्मेदार नहीं है, हमारी ख़ाहिशें भी बड़े मोल भाव वाली नहीं हैं। लेकिन जब हमारी ख़ाहिशें पूरी नहीं हो पातीं तो हमारे लिए बेवजह दुख का कारण बनती हैं। हम अपनी परेशानियों की वजहों को बुरा कह देते हैं। हमारा यह कह देना इस वजह से है कि हम दुनिया की असलियत के बारे में नहीं जानते और ख़ुद अपने अन्दर बाहर की वजहों को नहीं जानते हैं।

अगर किसी को मालूम हो कि चिराग़ में तेल नहीं है और चिराग़ जलाए, वह न जले तो जलाने वाला रोना धोना नहीं मचाएगा, ज़मीन और आसमान को गालियाँ नहीं देगा।

दुनिया अपने लगातार जतन से एक जाने पहचाने मक़सद की तरफ़ चल रही है और अपनी सारी वजहों में क़दम–क़दम बढ़ रही है। इन्सानों की ख़ाहिशें और उसका लालच दुनिया को अपने प्रोग्राम से नहीं रोक सकता।

इसलिए हमको यह मान लेना चाहिए कि दुनिया की कुछ रीतियाँ हमारी चाहतों के हिसाब से नहीं हैं। इसलिए अपने दुख और परेशानियों को दुनिया का अन्याय और अत्याचार नहीं कहना चाहिए और न फ़िलास्फ़ी के हिसाब से नाइन्साफ़ी समझना चाहिए।

एक बुद्धजीवी कहता हैः–

प्रकृति तेज़ चाल और बेकार की बातों को नहीं जानती। प्राकृति तो हमेशा सीधी सच्ची और बड़ी है। उसके काम में न कोई लड़खड़ाहट होती है, न ग़लती। जो कुछ ग़लती होती है और ठोकर लगती है, वह सिर्फ़ हमारी वजह से। प्राकृति कमज़ोरी और मजबूरी से हमेशा लड़ती रहती है और अपने सारे राज़ों को सिवाए तगड़े, पाक और परहेज़ वालों के किसी पर नहीं खोलती।

हज़रत अली (अ0) दुनिया की धिक्कार में कहते हैंः लेकिन

जो लोग दुनिया को बहुत अच्छी तरह पहचान चुके हैं, उनके लिए दुनिया को अच्छी जगह बताते हैं और आप ख़ुद पूरी ज़िन्दगी कठिनाइयों और मुसीबतों में घिरे रहे लेकिन लोगों को हमेशा ख़ुदा के इन्साफ़ को याद दिलाते रहे।

एक और बात पर हमें ध्यान करना ज़रूरी है कि दुनिया के सिस्टम में अच्छाई और बुराई एक दूसरे से अलग नहीं हैं। इनमें से हर एक अपना–अपना ख़ास रददा बना लेती है –बल्कि ख़ूबियाँ अच्छाइयाँ असल में हैं और बुराइयाँ असल नहीं हैं जहाँ से 'हैं' पैदा होते हैं वहीं पर 'न होना' भी एक सच्चाई है फ़क़ीरी, ग़रीबी, जेहालत, बीमारी यह चीज़ें अगल–अलग परमानेन्ट वजूद नहीं रखतीं क्योंकि फ़क़ीरी दौलत का न होना, अनजानपन न जानना है और बीमारी हेल्थ के न होने का नाम है।

ज्ञान तो एक सच्चाई और बाढ़ रखता है। फ़क़ीरी का मतलब वही दुनिया के धन दौलत से हाथ और जेब का ख़ाली होना है। बस, अनजानपन कोई टटोली जा सकने वाली चीज़ नहीं है और न ही फ़क़ीरी एक 'न होने' के सिवा कुछ है।

जब हम परेशानियों दुखों और फाड़ खाने वाले जानवरों को बुरा और बेतुकेपन का स्रोत समझते हैं तो बीच में एक तरह की 'कमी' और 'नहीं' होती है क्योंकि उनके बुरा होने की वजह किसी दूसरी चीज़ में न होने का पैदा होना है, वरना हर चीज़ इस हिसाब से कि 'है', उसको बेतुकी नहीं कह सकते। अगर ये चीज़ें अपने साथ बीमारी और मौत को न रखतीं और खोना या मिटना का 'होने' से रिश्ता न होता या बाढ़ में रुकावट न होता तो कुछ बुरा भी न होता। जो चीज़ अपने से बुरी है उसकी वजह से खोना या मिटना पैदा होता है।

बस दुनिया में जो कुछ है वह अच्छाई है। बुराई एक तरह

का 'न होना' है और 'न होना' 'होने' की क़िस्म नहीं है, इसलिए बुराई भी होने की क़िस्म से नहीं है।

'होना' और 'न होना' सूरज और उसके साए की तरह है। जब सूरज चीज़ पर पड़ता है तो उस जिस्म का साया पड़ता है। लेकिन ख़ुद साया क्या है? वह ख़ुद अपने में कुछ नहीं है। इसके न होने का कारण सूरज के न चमकने और उसका उस पर न पड़ने के अलावा कुछ नहीं है। ये ख़ुद कोई मुस्तक़िल चीज़ नहीं है।

सारी चीज़ों से पैदा होने का रिश्ता है इसलिए उनका 'होना' ख़ुद उनके लिए 'होना' है और उनका होना सही में 'होना' है। इस तरह से ये चीज़ें बुरी नहीं हैं बल्कि अल्लाह वाली सोच में 'होना' अच्छाई और भलाई के बराबर है। हर चीज़ अपने 'होने' में अच्छाई है और अपने लिए अच्छी है। अगर यह बुराई है तो यह अपने लिए नहीं है। अपने लगाव वाले 'होने' के हिसाब से दूसरी चीज़ों के लिए बुराई है। लगाव वाला 'होना' अपने में असली 'होना' नहीं है, बल्कि ये भरोसे वाला 'होना' है जिससे अपने में 'है' चीज़ जुड़ी नहीं है।

मलेरिया के मच्छर ख़ुद अपने लिए 'बुराई' नहीं हैं। उनको बुरा इसलिए कहा जाता है कि इन्सान को तकलीफ़ पहुँचाते हैं और उनकी मौत की वजह बनते हैं। जिससे 'होने' जुड़ा होता है वह अपने में 'है' चीज़ है और असली 'होना' है लेकिन जिन चीज़ों का 'होना' भरोसे और मानने की बुनियाद पर है, वह दुनिया के सिस्टम में टिकाऊ वाली नहीं हैं और यह 'होना' असली नहीं है इसलिए उनके बारे में यह सवाल नहीं किया जा सकता कि ख़ुदा ने 'लगे' वजूद और भरोसे वाले वजूद को क्यों पैदा किया? क्योंकि भरोसे वाले और खिंचाव वाले काम अपने लगाव के बन्धन से

अलग नहीं होते, इसलिए उनके पैदा होने के बारे में बात भी नहीं की जा सकती।

असली 'होने' वाले को ख़ुदा बनाता है। वह और उसके गुण भी असली हैं, क्योंकि उनका वजूद मन सोच के बने 'होने' से हट कर बाहर से भी है– लेकिन अलग के और 'लगते' गुण हमारे दिमाग़ की उपज हैं, दिमाग़ के बाहर ये नहीं होते इसलिए ये सवाल नहीं किया जा सकता कि उनका पैदा करने वाला कौन है?

दुनिया का मतलब उन चीज़ों के अलावा जिनका होना हो सकता है, वह सारी चीज़ें हैं जो अपने अटूट लगाव और गुणों के साथ हैं। ये सब मिलकर एक अटूट इकाई होते हैं जो चीज़ ख़ुदा की सूझबूझ के फ़ैसले से है, वह यह है कि या तो दुनिया का वजूद एक ठिकाने के सिस्टम से हो या फिर वह असल में 'है' ही नहीं।

वह दुनिया जिसका कोई ढंग न हो या जिसमें कारण–नतीजे का नियम या उसमें अच्छाइयाँ और बुराइयाँ अलग–अलग न हों, ऐसी दुनिया हो ही नहीं सकती। ऐसी दुनिया को सोचा भी नहीं जा सकता, क्योंकि यह बात भी बहेस के बाहर है कि सिस्टम के एक टुकड़े की बात हो और दूसरे की न हो। यह पैदा हुई दुनिया (सृष्टि) इसी तरह अपने में एक है जैसे इन्सान के शरीर के अंगों की एक ही बात होती है, उन्हें एक–दूसरे से छुड़ाया नहीं जा सकता।

ख़ुदा ऐसा भरापुरा है जिससे वह पैदा करता है और दुनिया पर दान दया करता रहता है। जैसे कोई दानवीर खुले हाथों देने वाला अपने देने के बदले में और उसे उसके बदले में कोई इनाम या शुक्रिये को भी नहीं चाहता या जैसे कलाकार (Artist) अपने काम, कला बनाने में लगा रहता है और उसके बदले में किसी से किसी तरह की कोई उम्मीद नहीं रखता। इसी तरह

नई–नई चीज़ें बनाना, पैदा करना ख़ुदा के निजी गुण हैं।

बराबरी का न होना:

मान लीजिए एक कारख़ाने के मालिक ने अपने कारख़ाने को चलाने के लिए और उससे पैसा कमाने के लिए कुछ मज़दूर और कुछ इन्जीनियर रखे। जब तन्ख़ाह देने का वक़्त आया तो उसने लेबरों को मज़दूरी कम दी मगर इन्जीनियरों को ज़्यादा दिया। यहाँ पर ये सवाल पैदा होता है कि क्या कारख़ाने के मालिक ने इस तरह तन्ख़ाह बाँट कर मज़दूरों के साथ अन्याय किया? सीधी सी बात है इस तरह उसका करना ग़लत नहीं है। यहाँ पर इन्साफ़ का मतलब ये बिल्कुल नहीं है कि मज़दूरों और इन्जीनियरों को बराबर दिया जाए बल्कि इन्साफ़ तो यही है कि हर एक को उसके हक़ के हिसाब से दिया जाए। इसी तरह से कारख़ाना तरक़्क़ी कर सकेगा, नहीं तो नहीं। ऐसे मौक़ों पर एक दूसरे में फ़र्क़ करना ही इन्साफ़ है और बराबरी अन्याय है।

इसी तरह अगर हम दुनिया को हर तरफ़ से गहराई से देखें और ध्यान दें तो पता चलेगा कि इसके हर हिस्से का एक ख़ास ढंग है और ख़ास जगह है। फिर गहरी खोज के बाद हम ख़ुद ही समझ लेंगे कि इस रंग और बू वाली दुनिया में उजाले के साथ अंधेरा है, जीत के साथ हार एक आम बैलेन्स के लिए ज़रूरी है। जब तक ये बात न होगी, आम सिस्टम का पता नहीं चल सकता।

अगर कहीं ऐसा होता कि दुनिया में किसी तरह का अलगाव न होता तो इसकी चीज़ों में रंगबिरंगापन और बहुतात का असर भी न होता जबकि दुनिया की बड़ाई इसी अलगाव और अगल–अलग तरह के होने में है। जब तक हम पूरे के बैलेन्स, कलेक्शन और उसके सामने बढ़ाने वाले और फ़ायदा पहुँचाने वाले

लगाव को अपनी नज़र में न रखें, उस वक़्त तक हमारा फैसला सही और अक़्ली (Logical), ध्यान देने और मानने वाला न होगा। सिर्फ़ एक ढाँचे के एक अलग किये हुए हिस्से को देखकर सही फ़ैसला नहीं किया जा सकता।

पैदाइश का सिस्टम बैलेन्स और हक़/पात्रता और क़ाबलियत की बुनियाद पर रखा गया है। इस सिस्टम में जो चीज़ साबित और मालूम है वह न अलग है न कि भेदभाव या छाँट। और इस तरह से बात ज़्यादा साफ़ और पहचाना हुआ हो जाएगा क्योंकि भेदभाव का मतलब ''बराबरी का हक़ और एक जैसी शर्तों के मौक़े पर अलग किया जाना है'' और अलगाव का मतलब बराबरी की और एक जैसी शर्तें न होने में अलग किया जाना है। यह कहना बिल्कुल ग़लत सोच है कि दुनिया में सारी चीज़ें एक जैसी होतीं और हर तरह के अलगाव और अन्तर से दूर होती, तो अच्छा था, क्योंकि चलना फिरना, बाढ़ होना, गर्मागर्मी, उमंग–तरंग, लेन–देन, छोड़–पकड़ वग़ैरा–वग़ैरा सबके सब अलगाव और भेद ही की वजह से उजागर होते हैं।

हम सुन्दरता, सुडौलपन और ख़ूबसूरती को भाँप न सकते अगर हमारे सामने भद्दापन और बेडौलपन न होता। इसी तरह अगर ज़िन्दगी में धोका, बुराई, बुरे काम न होते तो अच्छाई और ईमानदारी का कोई मोल न होता।

ऐसे ही अगर कलाकार अपने आर्ट में एक ही रंग देता तो फिर उसकी कोई क़ीमत न होती। कलाकार के बड़े होने की बात उसकी ड्राइन्ग में अलग–अलग रंगों से ही खुलती है।

किसी चीज़ को पहचानने के लिए उसका दूसरी चीज़ों से अलग होना ज़रूरी है क्योंकि चीज़ें और इन्सानों की पहचान अन्दर के या बाहरी अलगाव ही की बुनियाद पर होती है।

दुनिया की दिलचस्प बातों में क्षमताओं (और ज़िन्दगी की मेहरबानियों और उसके तोहफों का अलग–अलग होना है। इस सिस्टम में समाज के लोगों को एक ख़ास रूचि और चाह दी गई है जो समाजी जीवन के चलते रहने के लिए ठीक–ठीक है। समाज का हर मेम्बर एक–एक ज़रूरत पूरी करता है और एक–एक कठिनाई का हल निकालता है।

लोगों की ताक़तों में प्राकृतिक अलगाव सबके सब को बान्ध देता है। हर इन्सान अपनी सकत, क्षमता और रूचि के हिसाब से समाज के कामों में हिस्सा लेता है। फिर यह बात तो सब ही जानते हैं कि इन्सान की बाढ़, तरक़्क़ी समाजी जीवन के साये ही में हो सकती है।

मिसाल के लिए हवाई जहाज़ ही को ले लीजिए। इसमें सैकड़ों छोटे–बड़े कलपुर्ज़े हैं। इसे बड़ी गहरी सूझबूझ से बनाया गया है। इस हवाई जहाज़ के आपस में सारे हिस्से एक दूसरे से रंग–रूप और आयतन (Volume– जितनी जगह घेरे) में बिल्कुल अलग–अलग हैं। ये अलगाव हवाई जहाज़ के हिस्सों के अलग–अलग कामों की वजह से है। अगर हवाई जहाज़ के पुर्ज़ों और हिस्सों में यह अलगाव न हो तो वह उड़ ही नहीं सकता। फिर ये हवाई जहाज़ न होता बल्कि अलग–अलग धातों का बना हुआ एक ढाँचा होता है और बस।

अगर हवाई जहाज़ के अन्दर ये अलगाव उचित है, इन्साफ है अन्याय नहीं है, तो इस दुनिया की सारी चीज़ों में अलगाव चाहे वह इन्सानों में हों या किसी और में, वह भी ख़ुदा के इन्साफ़ न्याय से मेल खाता है।

इसी के साथ ये भी है कि 'होने' के सिस्टम में दूरी, अलगाव है, वह उनका अपना निजी है, क्योंकि ख़ुदा हर चीज़ को

अलग–थलग इरादों से नहीं पैदा करता बल्कि शुरु से आख़िर तक का पूरे का पूरा विश्व एक ही इरादे और निश्चय से पैदा किया है। बस जब ख़ुदा ने अपने दान दया से चीज़ों को 'नहीं' से 'है' किया तो उसी दान दया ने चीज़ों को एक ही इरादे से जगज़ाहिर कर दिया।

इस समझ से चीज़ों के पैदा होने का एक ख़ास सिस्टम और क़ानून है जो चीज़ों के सारे आयाम (Dimensions), सारे ओरों पर छाया हुआ है। कारण–नतीजे के कारख़ाने में हर चीज़ की अपनी जगह है। चीज़ों के पैदा होने और दुनिया के चलाने में ख़ुदा का संकल्प ही सिस्टम की बुनियाद है।

कुरान मजीद इस सच्चाई को इस तरह बयान करता है

''बेशक हमने हर चीज़ को एक ख़ास तय अन्दाज़ से पैदा किया है और हमारा हुक्म तो बस पलक झपकने जैसी (तड़पड़) बात होती है।''

(सूरा क़मर (54) आयत–50)

ख़ुदा के रचे अलगावों और जोड़सम्बन्धों के बारे में यह सोचना ग़लत कि यह समाज के बनाये गये रिश्तों की तरह है, क्योंकि सिरजनहार ख़ुदा की अपनी बनाई चीज़ों से रिश्ता लगाव कोई परम्परा या सोच की उपजी बात नहीं बल्कि ये उसी सिरजन से जुड़ा हुआ रिश्ता होता है। सारी चीज़ों में जो आर्डर क़ायदा है वह उसी का बनाया हुआ है और हर चीज़ अपने झोले की समाई के हिसाब से ही ख़ुदा की दी हुई सुन्दरता, साज और बाढ़ ले पाती है।

अगर दुनिया की चीज़ों के लिए ख़ास तय किया हुआ सिस्टम, क़ायदा न होता तो हर चीज़ से हर चीज़ निकल सकती। इसका मतलब था 'नतीजा' 'वजह' की जगह ले लेता। लेकिन

हमको यह समझ लेना चाहिए कि सब चीज़ों के बीच निजी रिश्ते टिकाऊ और अडिग हैं। वे अपने पाये हुए ठिकाने और हैसियत से अटूट तरह से जुड़ी बन्धी हैं। किसी भी चीज़ को यह हक़ नहीं कि वह अपने ख़ास ठिकाने और श्रेणी से आगे बढ़ जाए और दूसरे के ठिकाने या हैसियत को अपना सके। ये भेद अलगाव 'होने' का न छुटने वाला ज़रूरी बन्धन है, जो उनके बीच कड़ाई ढीलेपन, अधूरेपन, पूरेपन के हिसाब से लगा होता है।

इन्साफ़ के ख़िलाफ़ और अन्याय तभी कहा जा सकता है जब दो चीज़ों में बाढ़ का एक ख़ास दर्जा की खपत हो (उस दर्जे को पा लेने की सकत और समाई हो फिर भी किसी एक को वह क्लास दिया जाए और दूसरे को नहीं।

'होने' के सिस्टम की चीज़ों के दर्जे को इन्सानी समाज के माने हुए दर्जों जैसा समझा नहीं जा सकता है, क्योंकि चीज़ों के दर्जे एक हक़ीक़त हैं जो बदले नहीं जा सकते। जैसे जानवर अपने को इन्सान के दर्जे में नहीं कर सकता, उसी तरह हम लोगों के ठिकाने बदलकर उन्हें दूसरी जगह नहीं कर सकते। इसकी वजह यह है कि कारण–नतीजे का आपसी लगाव कारण–नतीजे की असलियत से पैदा होता है। अब अगर कोई चीज़ कारण है तो वह अपने निज/असलियत से अलग ही न हो सकने वाले ख़ास गुण से है। नतीजा भी किसी ख़ास वजह से नतीजा होता है जो उसके अपने निज/असलियत में छुपी हुई होती है। यह बात सिर्फ़ उस के 'होने' की हालत के अलावा और कुछ नहीं है।

इससे सारी 'है' चीज़ों के अन्दर एक गहरा और निजी सिस्टम मौजूद है और हर चीज़ का अपना दर्जा भी बस उसी का है। और जब तक अलगाव निजी कमियों की हदों तक हो उसको भेदभाव नहीं कहते, क्योंकि किसी भी काम के 'होने' के लिए सिर्फ़

ख़ुदा का दान कृपा ही काफ़ी नहीं बल्कि उसकी बुनियादी शर्त उसके लेने वाले के कटोरे की समाई यानी उसकी क्षमता का होना भी है। यही वजह है कि कुछ मौजूद चीज़ें जहाँ जैसी हैं उससे ऊँची नहीं पहुँच सकतीं। लेकिन यह बात किसी तरह भी नहीं हो सकती है कि कोई क़ाबलियत या दूसरी ऊँचाई और बढ़ने की सलाहियत रखता हो, लेकिन ख़ुदा उसे रोक दे। इसकी मिसाल गिनतियों जैसी है। हर गिनती अपनी ख़ास जगह पर है। दो हमेशा एक के बाद ही आता है। उसकी जगह बदल नहीं सकती, दो को एक के पहले नहीं किया जा सकता। अगर हम किसी गिनती की जगह बदलना चाहें तो सच्चाई यह है कि वह गिनती ही न रह जाएगी।

बस ये बात साबित हो गई कि सारी बातों के लिए ख़ास रंग–ढंग जो ठहरे और न बदलने वाले क़ानून के अण्डर है। लेकिन इसका मतलब यह भी नहीं कि पैदाइश के लिए ख़ुदा ने कोई ख़ास क़ानून बना दिये हैं बल्कि यह वही हैं जो हम 'होने' के ढब को देखकर समझ लेते हैं।

कुरान कहता हैः–

''तुम ख़ुदा के ढंग/क़ानून को बदलते न पाओगे।''

(सूरा 'फ़ातिर' (35) आयत–43)

बस यह साबित हुआ कि निजवाले क़ानूनों का एक सिलसिला है जिस पर 'होने' के सिस्टम की बुनियाद रखी गई है। इसमें हर चीज़ का ठिकाना, होने की बात और अवसर तय और निशान दिये हुए है। इसमें चीज़ों के अलग–अलग ठिकाने, दर्जे और हैसियत 'होने' के सिस्टम का एक ज़रूरी नतीजा है।

यह बात चीज़ों के बीच अलगाव और भेदभाव के दिखावे का कारण बनती ही है। यह अलगाव भेदभाव अपने में पैदा की हुई

चीज़ नहीं है बल्कि होने वाली बातों के नतीजों में है। इस दुनिया के हर हिस्से ने जिस जगह के क़ाबिल था, उसने वह ले ली। यह इस 'होने' वाले मेल के पनपने के लिए एक पहाड़े जैसा है। इसमें कुछ हिस्सों से बेइन्साफ़ी, अन्याय और भेदभाव नहीं किया गया है।

जो मैटिरियल सोच वाला नेचर के सिस्टम में अलगाव और भेदभाव को अन्याय, अत्याचार और नाइन्साफ़ी समझता है और पूरी दुनिया पर इन्साफ का राज नहीं मानता है, उसके लिए ज़िन्दगी बहुत कड़वी और बुरी लगने वाली है। उसका यह जल्दबाज़ी का फैसला उस बच्चे जैसा है जो बसन्त के मौसम में माली को हरे–भरे पेड़ों की टहनियों को काटते हुए देखकर फ़ौरन फ़ैसला कर देता है कि यह माली बेवकूफ है और उजाड़ मचाने वाला है क्योंकि वह उसकी समझ भांप नहीं सकता है।

अगर ऐसे इन्सान के हाथों में दुनिया भर के इनाम–तोहफे दे दिये जाएं, तब भी यह राज़ी नहीं होगा क्योंकि उसकी नज़र में दुनिया बेमक़सद है और पैदाइश की बुनियाद सितम और बेदर्दी पर रखी गई है। फिर इन्सान की इंसाफ़ की चाह लचर और बेमतलब है क्योंकि ऐसी बेमक़सद दुनिया से कोई मतलब रखना बेकार सी बात है।

मैटिरियलस्ट लोगों के कहने के हिसाब से इन्सान का आना–जाना अपने आप उगने वाली और मिट जाने वाली घास–फूस की तरह है, तो इन्सान से ज़्यादा नीच कोई नहीं है क्योंकि वह एक बेतुके और बुरा लगने वाले संसार में रह रहा है बल्कि सोचने समझने और भाँप लेने की ताक़त उसके लिए कठिनाइयों की शुरुआत है। उसके साथ नेचर की ये अटखेली है कि अभागापन और दुख उसकी कठिनाइयों को बढ़ा देते हैं जिससे वह कहीं

ज़्यादा भुगतता भी है।

अगर इन्सान बड़ी मेहनत और हिम्मत से, खरे मन से इन्सानियत की कोई सेवा करे तो उसको क्या फ़ायदा? क्योंकि उसकी याद चाहे जितने आदर और मान से मनाई जाए या उसकी क़ब्र पर कोई मेमोरियल यादगार बना दी जाए या उसके नाम पर कुछ रस्में की जायें तो उसको तो ज़रा सा भी फ़ाएदा नहीं मिलेगा और बस एक लचर नीच कहानी से ज़्यादा उसका मान न होगा क्योंकि मैटिरियलिस्ट लोगों के ही कहने से नेचर ने एक ढाँचा बनाया था, कुछ दिनों तक उससे खेल करती रही, उसको नचाती रही और दोबारा उसको मिट्टी कर दिया। अगर हम बहुत से ऐसे लोगों के नतीजों पर ध्यान दें जिन्होंने बड़ी–बड़ी परेशानियाँ और दुख सहे हैं और भाग्य के खोटे रहे हैं, तो फ़िर हमारे सामने एक बड़ा दुख और तकलीफ़ देने वाला सीन होगा।

इन्सानों का यह हाल देखकर क्या मैटिरियलिस्टों की जन्नत दुख भरे अज़ाब के अलावा और कुछ होगी?

इन्सानियत की बदनसीबी उस वक़्त अपनी चोटी पर पहुँच जाती है जब हम मैटर के पुजारी लोगों का यह नज़रिया पढ़ते हैं कि बेचारा इन्सान तो सिर्फ़ मजबूर है, उसके पास न अपना इरादा है और न अपनी सकत। इस सोच से इन्सान एक आटोमेटिक मशीन की तरह है जहाँ प्रकृति का मेकानिज़्म और डायनामिज़्म उसके सेल (Cell) में भी काम करता है।

अब बताईये क्या अक़्ल, नेचर और जीवन की सच्चाईयाँ इन्सानियत और उसके नतीजे का यह मतलब मानेगी? कभी नहीं।

अगर मान भीं ले तो इन्सान बच्चों की गुड़िया से ज़्यादा भाग्य वाला नहीं है। क्या यह इन्सान के लिए अच्छा न हो कि इन्सानी और मौलिक उसूलों को सिर्फ़ अपने निजी फ़ाएदे और

नुक़सान अपने सेक्स झुकाव की वजह से न समझे? मैटिरियल सोच के हिसाब से तो बेशक यह ज़्यादा अच्छा ही होगा। अगर उस के अलावा काम करे तो क्या नासमझ बेअक़्ल और पिछड़ा नहीं है?

भला जो गहरी सूझबूझ वाला आदमी बेलाग होकर अपनी ख़ुदग़रज़ी और जेहालत से हटकर, गहरी सोच समझ के साथ फ़ैसले के लिए बैठेगा वो इस तरह की कमसमझी और नीची खोटी सोच और ख़याल, चाहे वह कितना ही बड़ा फ़िलासफ़र और सोफिस्टिकेट वाला हो, चाहे जितनी साइंसी समझ से सजा हो, उसके मोल और भरोसे को मानेगा?

लेकिन मज़हबी एतेबार से मोमिन (ख़ुदा को मानने वाला/आस्तिक) दुनिया को अपने में जानने वाला, इरादे, संकल्प, समझ वाला और मक़सद वाला सिस्टम समझता है। वह ये भी जानता है कि वही बड़ी और इन्साफ़ भरी सूझबूझ इसके ज़र्रे—ज़र्रे को घेरे हुए है और इसके कामों देखरेख रखने वाली है। इसलिए वह समझता है कि पूरी दुनिया को कन्ट्रोल करने वाले, उस सूझबूझ वाले के हुक्म के सामने आगे हमको जवाब भी देना है और वह यह भी जानता है कि ख़ुदा का संसार सिर्फ़ और सिर्फ़ इकाई, मेल और अच्छाई का संसार है, बुराई और अलगाव का होना असली नहीं दुमछल्ला है।

दूसरी तरफ़ मज़हबी सोच इन्सानी ज़िन्दगी के लिए एक फैले हुए आसमान की बात सामने लाती है और यह बताती है कि इन्सानी ज़िन्दगी सिर्फ़ दुनिया ही तक सिमटी नही है और न दुनिया वाली ज़िन्दगी का मतलब यह है कि इन्सान हर दुख और परेशानी से दूर होकर आराम और मौजमस्ती में ज़िन्दगी बिताये। वह तो यह बताता है कि दुनिया एक रास्ता है और आख़ेरत

(परलोक) के अमर जीवन तक पहुँचने का एक पुल है। यह दुनिया तो एक लगातार कोशिश, इम्तेहान और लगातार काम करते रहने का एक मैदान है जिसमें ईमान विश्वास को सुधारने और चाल—चलन संवारने की जाँच होती है। लेकिन आख़ेरत की ज़िन्दगी के शुरु ही में सबसे कठिन तराज़ू है जिस पर इन्सान के विचार, विश्वास और कर्मों की अच्छाई और बुराई तौली जाती है। वहाँ पर ख़ुदा के इन्साफ़ की सही सूरत उजागर होती है और दुनिया के मैटिरियल और रूहानी पिछड़ेपन और हर तरह की उदासी, बेआसी का अच्छे से अच्छा बदला इनाम दिया जाता है।

(ख़ुदा को मानने वाला/आस्तिक) दुनिया को जानने वाला, इरादे संकल्प, समझ वाला और मक़सद वाला सिस्टम।

मैटिरियल दुनिया की पूँजी की असलियत के इस भद्दापन और गिरावट को देखकर इन्सान सोच समझ कर ख़ुदा की तरफ़ चल पड़ता है फिर उसका पूरा वजूद और मक़सद ख़ुदा के लिए जीते रहना और उसी के लिए मर जाना होता है फिर उसकी आँखों में दुनिया की ऊँचाई और गिरावट का कोई मोल नहीं रह जाता है, सारे कामों को सच्चाई की आँखों से देखने लगता है, किसी भी सुन्दर चीज़ पर दिल नहीं फेंकता क्योंकि वह जानता है कि अगर वह सुन्दरता के आगे झुक गया तो यह बात उसकी मानवता के सोतों को सुखा देगी और उसे बहकावे के बहुत गहरे कुँए में ढकेल देगी।

यह भी समझ लीजिए कि अगर चीज़ों का हक़ (पात्रता) नहीं बनता तो इन सब अलगाव और भेदभाव से अन्याय और नाइन्साफ़ी दलील (प्रमाण) नहीं बन सकता, अन्याय तभी होगा जब बराबर के हक़ वाली (पात्र/Deserving) चीज़ों के बीच भेदभाव किया जाए। पर, दुनिया की चीज़ें ख़ुदा पर कभी भी हक़

नहीं रखतीं, न ही किसी दिन किसी बात की मुस्तहेक़ (Deserving) थी। अगर ये होता तो कुछ पर कुछ को बढ़ा देने में अन्याय होता।

हम तो अपनी जान के किसी भी चीज़ के मालिक नहीं है, हमारी सासों का आना–जाना, दिल की धड़कनें, सोच और समझ एक ऐसे स्रोत से हमें मिलती है जिसके हम मालिक नहीं है, न ही इसको जुटाने में हमने कोई परेशानी झेली है। यह धन पूँजी ख़ुदा की वह नेमत और दया है जो उसने हमको जन्म होने के वक़्त ही से दे रखी है।

जब हमको मालूम हो गया कि हमारे पास जो कुछ भी है वह ख़ुदा का दिया हुआ है, तो ऐसे में अलगाव और भेदभाव जो सूझबूझ से है, न अन्याय है, न न्याय है क्योंकि इससे पहले किसी भी तरह का कोई हक़ नहीं बनता था।

ख़ुदा की तरफ़ से दी हुई इस घिरी सिमटी और वक़्ती ज़िन्दगी के तराजू को तै करने में वह पूरी तरह अख़्तियार अधिकार रखता है। वह आज़ाद है, हमारा उस पर कोई हक़ नहीं है, इसलिए हमको आपत्ति/एतेराज़ करने का हक़ भी नहीं है चाहे वह फ्री में दी हुई भेंट (Gift) कितनी ही थोड़ी और छोटी हो।

आज़ादी और बेबसी की बात

असल टॉपिक पर एक नज़र

बेबसी और आज़ादी का मसला उन बातों में से है जिसने इन्सान की नेचर और उसकी हालतों के बारे में सोच और विचार करने वालों का ध्यान हमेशा अपनी तरफ खींचा है और यह तरह–तरह के अक़ीदों, विश्वासों और सोचों के बीच हमेशा से एक

फ़ौजी तरह का मसला या परेशानी बना रहा है। मसला यह है कि क्या इन्सान अपने मैटिरियल और रूहानी जीवन में अपना बस रखता है और मक़सदों, जतनों और अपने कामों में आज़ाद और सेल्फ़ डिपेण्डेन्ट है? उसके अपने इरादे के अलावा इन चीज़ों में किसी और का कुछ लेना देना तो नहीं है? या इन्सान अपने काम और बर्ताव में मजबूर है और किसी भी काम के करने और अपने पक्के इरादे में वह सिर्फ़ मशीन की तरह दूसरे कारणों का आधीन (Dependent) है जिन्होंने उसे इस बात पर मजबूर कर दिया है?

इस मसले की अहमियत (Importance) समझने के लिए यह बात ध्यान में रखना चाहिए कि इकोनामिक्स के आधारों से जुड़े ज्ञान, मौलिक (Ethics, Laws आदि), रूहानी, मज़हबी शास्त्र और दूसरे वह सारे ज्ञान जो इन्सान से जुड़े हुए हैं उनसे जितना फ़ायदा उठाया जाएगा इस पहेली से उतना ही पर्दा उठता जाएगा।

आज़ादी और एख़्तियार (बस) को चर्चा का मुद्दा बनाना सिर्फ़ साइन्सी और फ़िलासफ़ी हद तक नहीं है बल्कि यह बात उन लोगों से भी जुड़ी हुई है जो इन्सान की ज़िम्मेदारियों के बारे में बताते हैं और इन्सान को इसे निबाहने और दूसरों से भी इसकी अपील करने का ज़िम्मेदार समझते हैं क्योंकि आज़ादी को असली न सही निचले दर्जे की भी न मानने से सवाब और अज़ाब का कोई मतलब नहीं रह जाएगा।

इस्लाम के ज़ाहिर हो जाने के बाद मुसलमानों की बीच इस मसले की इम्पार्टेन्स बहुत बढ़ गई, क्योंकि इस्लामी सोच इस मसले में बहुत ही गहरी सूझबूझ चाहती थी।

उलमा ने तौहीद (अल्लाह को एक अकेला मानना) के बाद इसी बात को सबसे ज़्यादा ध्यान देने का सवाल समझा, इसकी

बुनियादी बातों, गहरे मसलों और धुन्धले प्वाइन्टों को उजागर किया क्योंकि ये सवाल जहाँ एक तरफ़ तौहीद से जुड़ा हुआ है वहीं दूसरी तरफ़ ख़ुदा की अदालत और सकत से भी उसका रिश्ता है। इस मसले में आज तक के 'कलाम' (धर्म विश्वास की फ़लासफ़ी) के विद्वान दो गुटों में बंटे हैः

1– एक गुट इन्सान के कामों के अन्दर आज़ादी को किसी भी तरह मानने को तैयार नहीं। उसका मानना है कि जो काम और कोशिशें देखने में हमारे मन और सकत के नीचे लगती हैं, उसमें इन्सान की सोच की कमी और उसकी समझ का फेर है।

2– दूसरा गुट कहता हैः इन्सान अपना पूरा एख़्तियार वाला है (सब अपने से कर सकता है)। इस गिरोह का कहना है कि इन्सान अपने कामों में पूरी–पूरी आज़ादी रखता है और उसके चाहने की किरनें बहुत फैली हुई हैं उसमें किसी भी तरह कोई रोकने वाला या हटाने वाला नहीं है।

एक तरफ़ इन्सान अपनी पैदाइश के पहले से अपने आपको चारो तरफ़ से घेरे वजहों को देखते है अपनी बेबसी को महसूस करता है और इसी तरह जब ज़िन्दगी की होनी–अनहोनी के बीच फंसता है तब भी बेबसी को महसूस करता है। इन्सान यहाँ तक सोचने लगता है कि उसे किसी भी तरह की आज़ादी या छूट नहीं मिली हुई है क्योंकि उसका जन्म उसके बस में नहीं है और वह दुनिया में आकर बेबसी के सिस्टम में बंधकर रह जाता है, वह दुनिया में एक पत्ते के जैसा हवा के रहम पर रहता है, फिर इस दुनिया से विदा होने में भी बेबसी ही महसूस करता है। दूसरी तरफ यही इन्सान बहुत से कामों में अपनी आज़ादी और ठहराव को महसूस करता है जहाँ न कोई बन्धन होता है न मजबूरी। वह ख़ुद कठिनाइयों का सामना करता है, अपने पिछले तजुरबों की

रौशनी में नेचर पर ख़ुद का राज बढ़ा सकता है।

किसी भी मज़हब या मत का आदमी थ्योरी से या प्रैक्टिकली इस सच्चाई का इन्कार नहीं कर सकता कि हाथों और पैरों का हिलना डुलना इन्सान के अपने इरादे के आधीन है मगर दिल की धड़कन उसके बस के बाहर है इसी तरह जिगर और फेफड़े के काम में भी उसका कुछ लेना–देना नहीं।

बस इन्सान अपने इरादे, सकत, बस और उनकी पहुँच में जो इन्सानियत का राज़ भी है और ज़िम्मेदारियों का आधार भी –यह महसूस करता है कि वह अपने कुछ कामों में आज़ाद और अपने बस में है और अपने इरादे, सकत और एख़्तियार के इस्तेमाल में दूर–दूर तक बेबसी महसूस नहीं करता और यही इन्सान कुछ दूसरे शरीर और अपनी नेचर से जुड़े कामों में अपने को बन्धा हुआ और बेबस पाता है। उसकी ज़िन्दगी में इस तरह के सवालों की कमी नहीं है।

'बेबसी' के मानने वाले लोग

ऐसे लोग इन्सान को अपने कामों में बस मजबूर समझते हैं। अशअरी लोग यानी वह मुसलमान जो अबुल हसन अशअरी की राय को मानने वाले हैं इसी बात को मानते हैं।

सारी आयतों और हदीसों पर ध्यान न देकर ये लोग कुछ आयतों के सामने के माने के हवाले देते और उसे भरोसे वाला ठहराते हैं। यह लोग चीज़ों के असर डालने का इन्कार करते हैं और बू और रंग की इस दुनिया में किसी कारण को नहीं मानते हैं। उनका मानना है कि सारी होने वाली बातें बग़ैर किसी बीच के सीधे ख़ुदा की तरफ़ से होती हैं। यह लोग कहते हैं कि इन्सान के पास सकत और इरादा होते हुए भी इन्सानी कामों में उन दोनों का कोई असर या लेना–देना नहीं है, इन्सान के काम उसके

इरादों और उसकी सकत से नहीं बल्कि ख़ुदा ही के इरादे से होते हैं। इन्सान तो इस काम को अपने इरादे से एक रंग दे सकता है और बस। यही इरादा इसको अच्छे या बुरे काम की सूची में कर देता है। इस तरह इन्सान सिर्फ़ एक मशीन या हथियार है जिसको ख़ुदा जिस तरह चाहता है इस्तेमाल करता है।

यह लोग यह भी कहते हैं कि इन्सान को सकत वाला और एख़्तियार रखने वाला मानने से ख़ुदा की हुकूमत और सकत का घेरा छोटा हो जाएगा जबकि सिरजनहार होने की ख़ुदा की परम सकत हमें इस बात पर मजबूर करती है कि हम उसके आगे किसी भी इन्सान के लिए सकत को न मानें। ख़ुदा की हुकूमत का भरपूर होना और उसके एक होने को मानने की माँग यह हैः हम हर होने वाली बात को यहाँ तक कि ख़ुद इन्सान के काम को ख़ुदा की मर्ज़ी के बिना न हो सकने को मानें। अगर हम यह मान लें कि इन्सान ख़ुद अपने कामों का पैदा करने वाला है, तो हमने पूरे संसार पर ख़ुदा की भरपूर हुकूमत का इन्कार कर दिया। इसीलिए ये कहा जाता है कि चाहने की आज़ादी को मानना शिर्क (ख़ुदा या उसके कामों में साथ या साझेदारी मानना) तक पहुँचा देता है।

यह लोग यह भी कहते हैं कि होने वाली जगबीतियाँ अपने पहले की वजहों से सामने आती हैं और यह लगातार वजहें अपने एक असली और आख़िरी कारण तक पहुँचती हैं और वह असली परम कारण ख़ुदा है।

इन्सान जो देखने में अपने को आज़ाद समझता है उसकी हैसियत एक बेइरादा मशीन से ज़्यादा कुछ नहीं है। अक़्ल, नेचर, भावनाओं और एहसास (संवेदनाओं) से लेकर अनदेखी तरंगों, केमिकल तत्वों तक के असर और पानी, हवा, मिट्टी का असर समाज, शिक्षा, मीरास (Heriditary) और इन्सान के अलावा दूसरे

कारण, यह सब के सब इन्सान के बस, सकत की हदों से बाहर हैं। सच तो यह है कि इन्सान अन्दर के कारण और बाहरी कारणों की ज़न्जीरों में जकड़ा हुआ है जिनसे इन्सान को आज़ादी नहीं मिल सकती। कुछ लोगों ने जाने अन्जाने में मज़हब और मौलिकता (Morals) के ख़िलाफ़ काम करने की वजह से बहाने गढ़ने और उनसे अपने अलग–थलग रहने को जताने के लिए 'बेबसी' की बात को मान कर अपने विश्वास और कामों के बहकावे का रास्ता ढूँढ निकाला है। अपने बिगाड़ और उजाड़ने के कामों के लिए इसी को लाइसेन्स की तरह इस्तेमाल किया है। कुछ शायर भी ऐसे हुए हैं जिन्होंने 'बेबसी' को मान कर अपने गुनाहों के लिए एक परमिट बना लिया है। इस तरह वे अपनी समझ से अज़ाबों और कुनामी से बच गए हैं।

बेबसी के मानने वालों की सोच का यह तरीक़ा ख़ुदा की अदालत के साथ–साथ समाजी न्याय (Social Justice) दोनों के ख़िलाफ़ है जबकि हम ख़ुदा के इन्साफ़ को उसके सारे रंगरूपों में सारे जग के सिस्टम में देखते हैं और ख़ुदा के इसी गुण से उसकी सराहना और संस्तुति करते हैं। कुरान कहता हैः

''ख़ुदा ने ख़ुद इस बात की गवाही दी है कि उसे छोड़ कोई ईश्वर, भगवान नहीं और सारे फ़रिश्तों ने और ज्ञान वाले (नबियों, इमामों) ने जो इन्साफ़ पर टिके हैं, यही गवाही दी है कि उस ज़बरदस्त सूझबूझ वाले को छोड़ कोई ख़ुदा नहीं है, वही हर चीज़ पर छाया हुआ और सब जानकार है।''

(सूरा 'आले इमरान' (3) आयत–17)

इसी तरह ख़ुदा ने इन्सानी समाज में इन्साफ़ के ठहराने (लागू करने) को रसूलों और किताबों को भेजने का असल मक़सद

बनाया है। कुरान कहता है:–

"हम ने तो निश्चय ही पैग़म्बरों को साफ़ और रौशन मोजिज़े (चमत्कार) देकर भेजा और उनके साथ–साथ किताब और (इन्साफ़ की) तराज़ू उतारी ताकि लोग इन्साफ़ पर टिके रहें।"

(सूरा 'अल–हदीद' आयत–24)

इसी तरह ख़ुदा क़यामत के दिन बन्दों के साथ अपने इन्साफ़ से बर्ताव करेगा। इसलिए कुरान कहता है:–

"और क़यामत के दिन तो हम (बन्दों के भले–बुरे काम तौलने के लिए) इन्साफ़ की तराजुएँ लगा देंगे और फिर किसी पर कोई अन्याय न किया जाएगा।"

(सूरा 'अंबिया' आयत–46)

ज़रा सोचिए तो क्या यह इन्साफ़ है कि हम किसी इन्सान को मजबूर करके उसे सज़ा दें? ऐसा करना तो बेशक घोर अन्याय है और इन्साफ़ के उसूलों से हटकर है। अगर हम आज़ादी की जड़ का इन्कार कर दें और किसी भी सकारात्मक (Positive) छाप को इन्सानी इरादे के लिए ठहरा न माने तो इन्सान और दूसरी चीज़ों में कोई फ़र्क़ ही न रह जाएगा। जिस तरह दूसरी चीज़ों की चाल और हिलना–डुलना सदा से बेबसी के कारणों के एक सिलसिले का नतीजा है बेबसी के मानने की बुनियाद पर हमारे काम और चलन भी इसी तरह के हो जाएंगे।

अगर ख़ुदा ही इन्सान के अपने से किये कामों का पैदा करने वाला है और वही इन्सान के अन्दर अन्याय और बिगाड़ पैदा कराता है, वही शिर्क भी कराता है (ख़ुदा का साझी मनवाता है) तो फिर उसको इन चीज़ों से कैसे पाक रखा जा सकता है?

'बेबसी' की बात मानने से नबुवत, वह्यि, शरीयत के हुक्म,

अक़ीदे, सवाब, अज़ाब सब बेमतलब हो जाता है क्योंकि जब हम यह मान लेंगे कि लोगों के काम उनके इरादे के बग़ैर आटोमेटिक हो जाते हैं तो फ़िर नबियों और रसूलों को इन्सानों की अक़्लों की मदद के लिए भेजा जाना क्या है? जैसा कि हज़रत अली (अ0) का कहना है कि नबियों और रसूलों को ख़ुदा ने इन्सानों की अक़्लों की मदद के लिए भेजा। ख़ुदा का क़ानून और शरीयत के बन्धन इन्सान के इरादे और एख़्तियार से बाहर की चीज़ें हैं, तो फिर इन्सान पर शरीयत के क़ानून लगाने की क्या वजह होगी? इसी तरह जब बेबसी ही काम कर रही है, इन्सान के बर्ताव और उसकी ज़िन्दगी की धारा मशीनी तरीक़े से चल रही है, फिर समाज और लोगों को मूल्यों, अच्छे चाल–चलन पर रिझाने की सारी कोशिशें बेकार हो जाएंगी, तो फिर इन्सानों की इन कोशिशों का क्या फ़ायदा? क्योंकि इस मक़सद की कोशिश का कोई नतीजा न होगा। एक बेबस से सीख लेने, बदल जाने और सुधर जाने की उम्मीद करना बेमतलब ही है।

सच्चाई यह है कि अपनी गिरावट के लिए इन्सान ख़ुद ज़िम्मेदार है, अपने और दूसरों को छुटकारा दिलाना भी उसी की ड्यूटी (Duty) से है। उसके अपने कामों में उसकी आज़ादी ही उसके भाग्य बनाती है। वह बड़ी गहरी सूझबूझ से अपने काम करने के तरीक़ों को चुनता है और ख़ुदा पर भरोसा करता है, तब ख़ुदा अपनी सकत से उसको तौफ़ीक़ (ऊपर से मदद) देता है।

मशहूर फ़िलासफ़र सेन्ट हेलर (Saint Heller) कहता है:– जिस ज़ात ने इन संसारों को और 'होने' के क़ानूनों को बनाया है, उसने बड़ाई और आज़ादी के हिसाब से दिल जैसी चीज़ नहीं पैदा की है। यह दिल बहुत छोटा होते हुए भी सारी नेचर से बड़ा है, बल्कि जिसने अपने 'अपने' को पहचान लिया वह नेचर की किसी

भी चीज़ से उसकी अटकल नहीं लगा सकता क्योंकि रूहानी बड़ाई किसी दूसरी बड़ाई से बराबर समझी नहीं जा सकती है।

दुनिया के 'होने' वाली बातों से ज़्यादा साफ़ और रौशन ख़ुदा की सकत ख़ुद हमारे अपने में है। इसका अन्दाज़ा हम ख़ुद लगा सकते हैं। अन्दर के सिस्टम से एक दूसरा नतीजा यह निकाल सकते हैं कि इन्सान जब ख़ुद अपने से अक़्ल पर चलने या फिर पाप का फ़ैसला कर लेता है, तो वह अपने अन्दर यह एहसास भी पाता है कि 'परम शक्ति' (पूरी सकत वाले) के सामने अपने चाल–चलनों का जवाब भी देना है।

ख़ुदा के न्याय को मानने वाला उसके क़ानून तोड़े, तो उसके अज़ाब से डरते रहना ही चाहिए। अगर इन्सान अपनी ग़लती पर अपने पर ताव खाता है, उसे ये भी मानना चाहिए कि क़ानून बनाने वाले छोड़ सकता है फिर भी वह ग़लती करने वाले पर गुस्सा होगा।

जिसे इस ज़िन्दगी में मूल्यों और अच्छे चलन के उसूल में मज़ा लगता है उसे ख़ुद चाहिए कि इस मज़े का हिसाब चुकता कर दे क्योंकि समाज लोगों का हिसाब इसलिए नहीं ले सकता कि सिर्फ़ वह उन पापों की सज़ा देता है जो समाज को नुक़सान पहुँचाते हैं। समाज के लोग भी पापियों जैसे रखवाली नहीं कर सकते क्योंकि इन्सान के मन में क्या है और उनके भेदों को न समाज जान सकता है न समाज के लोग, लेकिन नीयत, मक़सद या जो भी चीज़ समाजी इन्साफ़ से छुपी हुई हो उस पर बहरहाल क़ानून तो लगना चाहिए है। इसलिए ख़ुद इन्सान को चाहिए कि अपना हिसाब आप करे।

अब यहाँ पर दो ही बातें हैं:–

1– क़ानून, मूल्यों, अच्छे चलन की बड़ाई, ऊँचाई, इन्सान की

आज़ादी और उसकी ज़िम्मेदारी का इन्कार कर दे।

2– इस ज़िन्दगी के अलावा एक दूसरी ज़िन्दगी को माने जहाँ ख़ुदा अपनी अदालत के हिसाब से फ़ैसला ज़रूर करेगा। अगर अच्छे चलनों का क़ानून इस बात को माने, आख़ेरत में एक आख़री अदालत का होना हर हाल में है, तो वह अपनी हदों से बढ़ा नहीं।

ऐतराज़ (आपत्ति) और जवाब

'बेबसी' के मानने वाले कहते हैं: ख़ुदा हमेशा से हमेशा तक के होने वाली छोटी बड़ी पूरी अधूरी बातों को अच्छी तरह जानता है। यह भी सभी मानते हैं कि दुनिया के किसी कोने में जो कुछ भी छोटा बड़ा हो सब ख़ुदा की जानकारी में रहता है, इसलिए लोगों से कुछ भी बदले बिना इन सारी बुराइयों और पापों का होना ज़रूरी है। इन्सान किसी भी तरह इनको छोड़ नहीं सकता वरना ख़ुदा का जानना झूठ हो जाएगा।

इसका जवाब यह है कि यह बात बेशक सही है कि संसार में होने वाली सारी घटनाओं और वाक़ियों की जानकारी ख़ुदा को है, लेकिन इस जानने का नतीजा ये नहीं है कि इन्सान अपने कामों में बेबस है क्योंकि ख़ुदा का जानना कारण–नतीजे के असल सिस्टम पर है, होने वाली बातों से इसका कोई रिश्ता नहीं है। लोगों के काम वजह और नतीजे के घेरे से बाहर नहीं है। जो जानकारी कारण–नतीजे के चलन से जुड़ी होती है वह बेबसी और मजबूरी की वजह नहीं हुआ करती। क्योंकि जो ख़ुदा जग में कल होने वाले बहाव का जानकार है, वह यह भी जानता है कि इन्सान अपने इरादे और सकत से काम करेगा। इन्सान का अपने इरादे और चुनाव में आज़ाद होना कारण और नतीजे के सिलसिले का हिस्सा है। इन्सान ख़ुद अच्छे और बुरे काम करता है और अपने से अपनाने की वजह से बिगाड़ और भटकने का कारण बनता है।

अब अगर किसी समाज में असत्य, और ज़ुल्म का राज हो जाए तो यह ख़ुद लोगों की वजह से होगा, इसके किसी भी तरह ख़ुदा का कुछ भी लेना देना नहीं होगा। ख़ुदा का जानना इन्सानों के अच्छे और बुरे कामों के अपनाने में असर नहीं डालता।

यह बात सही है कि इन्सान की आज़ादी में माहौल, प्राकृतिक लगाव, ख़ुदा की ओर से रास्ता दिखाना कारण बनकर थोड़ा बहुत असर डालते हैं। लेकिन इनके असर डालने का मतलब सिर्फ़ दिल बढ़ाना, रास्ता खोलना है और इन्सान के इरादे में ललक भरना है, लेकिन ये बेबसी मजबूरी नहीं पैदा करते। इन बातों के होने का मतलब यह नहीं कि इन्सान इन कामों के चंगुल में फंस जाता है बल्कि वह इन बढ़ावे पर चलने या न चलने या उन्हें कम करने और रास्ता बदलने में पूरी तरह आज़ाद है। इन्सान ख़ुद अपनी खुली सूझबूझ उनके सहारे उन रास्तों से फ़ायदा उठाकर अपना रास्ता बना सकता है और उनको कन्ट्रोल कर सकता है। इन्सान की नेचर में उमंडती हुई भावनाओं के तूफ़ान को न तो बिल्कुल सुखाया जा सकता है, न बेलगाम छोड़ा जा सकता है।

मान लीजिए कार का एक्सपर्ट कार को देख कर बता देता है कि इसमें यह ख़राबी है इतने क़िलोमीटर चलने के बाद कार रुक जाएगी। अगर ऐसा ही हो जाए तो कार के रुकने की वजह उसमें पैदा हुई ख़राबी है या एक्सपर्ट का जानने से? साफ़ जवाब यही मिलेगा कि अन्दर की ख़राबी की वजह से कार रुकी है, एक्सपर्ट का बता देना इस बात की वजह नहीं और न कोई समझदार एक्सपर्ट को पहले से भाँप लेने को इसकी वजह नहीं बताएगा।

इसी तरह एक टीचर अपने क्लास के हर लड़के को अच्छी

तरह जानता है। उसे पता है कि यह लड़का पढ़ता नहीं है, कामचोर है, सुस्त है, सालाना इम्तेहान में फेल हो जाएगा। जब सालाना इम्तेहान का रिज़ल्ट आया तो वह बच्चा फेल था तो क्या उसके फेल होने की वजह टीचर का जानना था या बच्चे का न पढ़ना और मेहनत न करना? सामने की बात है टीचर के जानने को कारण नहीं कहा जा सकता। इसकी वजह तो लड़के की सुस्ती और न पढ़ना है।

इसी तरह ख़ुदा बन्दों के बारे में जानता है तो बन्दों के कामों की वजह ख़ुदा का जानना किसी भी तरह नहीं हो सकता है। इस बात के लिए इतना कहना काफ़ी है।

'बेबसी' मानने का समाज पर एक मनहूस असर यह भी हुआ कि इस मानने ने सिरफिरे ज़ालिम अत्याचारी लोगों को बेचारों पर ज़ुल्म करने का एक लाइसेन्स दे ही दिया साथ ही साथ मज़लूमों को अपना बचाव करने से भी रोक दिया।

बेबसी के मसले को बहाना बनाकर ज़ालिम अपने पत्थरदिल कामों और घोर ज़ुल्म की ज़िम्मेदारी से ख़ुद को यह कहकर बचा लेता है कि यह ज़ुल्म हममें नहीं, ख़ुदा ने किया है। वह अपने हाथ को ख़ुदा का हाथ और अपने ज़ुल्म को ख़ुदा पर थोप देते हैं कि यह मैंने जो कुछ किया है इसमें मेरा दोष नहीं है सब कुछ ख़ुदा ने मेरे हाथों करवाया है। इस तरह ज़ुल्म के मारे को ज़ुल्म सहना ही पड़ेगा। अत्याचार का मुक़ाबला किया ही नहीं जा सकता क्योंकि ज़ालिम तो ख़ुदा ठहरा जो मिल नहीं सकता।

मेटरियलिस्ट लोग तो बेबसी के और आज़ादी के मसले में सोच की फेर के मारे हुए हैं यह लोग एक तरफ़ तो इन्सान को मैटर मानते हैं और तर्क (Logic) के फेरों का ग़ुलाम मानते हैं यानी इन्सान घिरे कारणों, हिस्ट्री के दबाव और पहले से तय किये हुए

तरीक़ों के सामने एक बेअसर काम करने वाला और मजबूर बेबस है। अपने कामों के चुनाव बल्कि अपनी सोच और जीने के ढंग में नेचर के बस में है। इन लोगों का कहना है कि कोई भी चाल, ढाल या समाजी बदलाव सब माहौल के मैटरियल ढंगों के नेचुरल नतीजे हैं। इसमें इन्सान का कोई लेना–देना नहीं होता, क्योंकि इन्सान का कोई अपना निजी इरादा ही नहीं है। इरादा समाज और माहौल के मैटरियल और माली (Economic) हालतों के सांचे में ढलता है। इरादा तो क्या इन्सान की सोच समझ को भी हिस्ट्री के बहाव में बेबस बहना पड़ता है। इन्सान के लिए ज़रूरी है कि वह वही तरीक़ा अपनाये जिसको समाज की माँगों और उसकी सोच ने उसके लिये तय कर दिया है। इसलिए इन्सान के सामने अपने इरादे और आज़ादी जताने का रास्ता बिल्कुल बन्द है, न ही उसकी अपनी ज़िम्मेदारियों को समझ पाने का कोई काम है।

(इन्सान समाज और माहौल से बेबस मजबूर और बेसोच है।)

दूसरी तरफ़ ये लोग कहते हैंः समाजी सिस्टम में इन्सान की शख़्सियत (Personality) बहुत ही असर रखती है। इसीलिए ये लोग मज़हबी और गुट के बन्धन पर सबसे ज़्यादा भरोसा करते हैं, साम्राज्यवाद की मारी संस्थाओं को हथियारबन्द बग़ावत पर उकसाते हैं, आज़ादी और चुनने की आज़ादी का फ़ायदा उठाकर जनता के विश्वास में बदलाव पैदा करना चाहते हैं और ख़ुद तो जो करते हैं करते ही हैं।

इन लोगों का इन्सान या व्यक्ति को मानना तर्क–मेटरियलिज़्म (Dielectic Materialism) का खुला विरोध है। जैसे ये मान लेना है कि सकत और आज़ादी इन्सान तक के पास है, समाज की तो बात ही नहीं।

अगर यह लोग यह कहें कि ज़ुल्म अन्याय की मारी जनता

को चलाना और उनके इन्क़ेलाबी आन्दोलनों को मजबूती पहुँचाने के मतलब सिर्फ़ यह है कि घिसे पिटे चलनों में से नये सिस्टम को उभारा जाए। इसका जवाब यह है कि यह बात समझ और लाजिक वाली नहीं है क्योंकि हालतों का बदलाव और इन्क़ेलाब अपनी हद से बाहर और बेतुका नहीं हुआ करता है क्योंकि नेचर अपने तर्क और परख से हर आदमी से अच्छा काम कर लेगी। सोच का प्रचार और आन्दोलन असल में नेचर के कामों में ग़लत हाथ डालना है।

यह कहना कि आज़ादी का मतलब ज़रूरत की समझ, प्राकृति के क़ानूनों की पहचान और तय किये हुए मक़सदों को पाने के लिए इन चीज़ों से फ़ायदे उठा पाना है, न कि यह प्राकृति के क़ानूनों से मुक़ाबला। इससे भी तो शक सन्देह दूर नहीं होता क्योंकि क़ानून की पहचान और उनसे तय किये हुए मक़सदों में फ़ाएदे उठाने के बाद भी यह शक रह जाता है कि मैटर और नेचर उन ख़ास मक़सदों को तय करते हैं या इन्सान ख़ुद। अगर इन्सान तय करता है तो क्या उसके तय किए हुए मक़सदों में उसकी चाहतें और नेचर की शर्तों की तस्वीर है या उनके बहाव उलटे भी जा सकते हैं।

मैटरियलिस्ट लोगों का ख़याल है कि इन्सान मैटर वाला है बल्कि उसका मानना और उसकी सोच भी मैटर और धन के बदलावों का नतीजा होते हैं ऊँच–नीच पैदा करने वाले ढर्रों पर चलते हैं और समाज के पैदाइशी लगावों के पैदा किये होते हैं और इन्सान के जीवन की मैटरियल ज़रूरतों और ख़ास ढंगों के रिऐक्शन के रूप में होते हैं। इन्सान मैटर की चीज़ है, उस पर समाज के मैटिरियल लगावों और प्राकृतिक, भौगोलिक और भौतिक (Physical) रिश्तों का असर होता ही है, लेकिन इसी के साथ

दूसरे कारणों का भी जिनका स्रोत ख़ुद आदमी का अन्दर और उसका नेचर है वह भी इतिहास में इन्सानों के लेखेजोखे पर असर करते रहे हैं, फिर भी इन्सान की सोच समझ वाली ज़िन्दगी सिर्फ़ मैटर और मैटर के लगावों का ही नतीजा नहीं हो सकती है। फिर इन्सान के रास्ता चुनने में मज़हब और रूहानी भावनाओं के कारणों के काम करने की अनदेखी नहीं की जाकती। यूँ इन्सान का चाहना करने या छोड़ने के कारणों की आख़री कड़ी होता है।

बेशक इन्सान प्राकृतिक कामों और बदल–कामों (Reactions) के असर में दबा हुआ है, इतिहास (History) और पैदा करने के कारण होने वाली बातों के लिए ज़मीन तैयार करते हैं। लेकिन अकेले यही न इतिहास की बातों के कारण हैं और न ही इन्सान की जीवन–पोथी में अस्ली छाप रखते हैं और न इन्सान से उसके इरादे और आज़ादी को छीन सकते हैं क्योंकि यह कारण ऊँचाई के उस दर्जे पर पहुँच गया है कि उसने अपने नेचर के ऊपर की क़ीमत को पहचान लिया है और उसके साये में अपनी समझ और ज़िम्मेदारी को पहँचा गया है। इसी लिए वह मैटर का बन्धुवा नहीं है बल्कि उसके पास ऐसी ताक़त और पावर है जिससे प्राकृति पर राज कर सकता है और मैटर के लगावों को उलट–पलट सकता है। कार्ल मार्क्स ने अपने विचार में आख़री छाप को एकानामिक्स का आधार बनाया है और उसे तय करने वाले के रूप में पहचनवाया है। लेकिन उसके दोस्त ने नोट लगाया हैः मेटरियल इतिहास को देखने से आख़री विचार असल में जीवन को नया करना है। मैंने और मार्क्स ने इससे ज़्यादा और कुछ नहीं कहा है। लोगों ने कार्ल मार्क्स के विचार को बिगाड़ कर यह मतलब कर दिया कि एकोनामिक कारण ही अकेला तय करने वाला है। इस तरह

उसकी बात को बेमाने बना दिया।

हाँ, एकोनामिकल तरीक़ा ही बुनियाद है, लेकिन उसमें कुछ ऐसी वजहें भी है जो ऊपरी हिस्से को पूरा करती है, जैसे ऊँचनीच का झगड़ा और उसके नतीजों के लिए राजनैतिक हालत, जीत के बाद सामने आने वाले राज–ढंग, अधिकारों (Rights) के रूप, यहाँ तक कि सामना करने वालों की सोच में उस का बदला, राजनैतिक और फ़िलासफ़िकल और अधिकार वाले नज़रिये और मज़हबी सभ्यताएँ (कल्चर) और इन मामलों का इस मैदान में डटे उस कल्चर की ओर पलट जाना जो इतिहास की लड़ाई के बहाव में असर करता है और जो बहुत सी हालतों में सच्चा से उसके रूप को तय करता है। यह सभी वजहें लगातार काम और बदल–काम (Action-Reaction) में रहती हैं और लगातार आर्थिक (Economical) चलन ऐसे रास्ते खोलते रहते हैं जो एक अन्तिम (Final) ज़रूरत की तरह कभी ख़त्म न होने वाले बखेड़ों को जन्म देते रहते हैं।

अब हम कहते हैं कि अगर ऊपरी हिस्से को पूरा करने वाली वजहें ही एतिहासिक लड़ाइयों के रूप ढंग तय करने वाली हैं, तो आप एक ही तरफ़ वाले अर्थ (Economy) को तय करने पर क्यों भरोसा करते हैं? अगर ऊपरी हिस्से को पूरा करने वाले कारण ही तय करने वाले हैं, तब तो यह हमारी सोच की बुनियाद पर हैं।

इसके अलावा अगर दो चीज़े एक दूसरे के होने की शर्त (Condition) हैं और आपस में जुड़ी हुई है तो बुनियाद को ही आगे करने का क्या मतलब है? जिस तरह नेचर के बदलाव बाहरी कामों और कारणों के गुलाम हैं, उसी तरह इन्सानी समाज में भी कुछ चलन और क़ानून हैं, जिनकी बुनियाद पर समाजों की उठान, बाढ़ या गिरावट हुआ करती है। इस वजह से एतिहासिक घटनाएँ

(Historical Events) तो अंधी बेबसी के अण्डर में हैं न कि संयोग (अचानक हो गए हैं) के यह सब बदलाव तो दुनिया के सिरजन के क़ानून और चलन से होते हैं और इन चलनों में इन्सान के इरादे की ख़ास जगह है। कुर्आन की बहुत सी आयतें साफ़ बताती हैं कि समाजों का इतिहास बदलने में ज़ुल्म/अत्याचार, विद्रोह और उफ़ान का बहुत बड़ा हाथ रहा है। यह अल्लाह का चलन (सदावृद्धि) है जो पूरे इन्सानी समाज में चलता रहा है। अल्लाह का कहना हैः

1— ''और हमको जब किसी बस्ती की नास (विनाश) करना होती है तो हम वहाँ के ख़ुशहाल/समृद्ध लोगों को इताअत (भक्ति) का हुक्म देते हैं तो वह लोग इसे नहीं मानते, तो वह बस्ती ऐसी हो गई जिस पर अज़ाब उतारा जाए और उस वक़्त हमने उसको अच्छी तरह बर्बाद कर दिया।''

(सूरा 'बनी इस्राईल' (17) आयत—16)

2— ''क्या तुमने नहीं देखा कि तुम्हारे ख़ुदा ने 'आद' (एक समाज) के साथ क्या किया, इरम वाले लम्बे डील जिनकी तरह पूरी दुनिया के शहरों में कोई पैदा ही नहीं किया गया और 'समूद' के साथ (क्या किया) जो (कुरा) घाटी में पत्थर काटते (कर घर बना) थे और फिरऔन के साथ (क्या किया) जो सज़ा के लिए कीलें रखता था। यह लोग अलग—अलग शहरों में सर उठा रहे थे और इनमें बहुत से बिगाड़, दंगा फैला रहे थे तो तुम्हारे पालने वाले ने उन पर अज़ाब का कोड़ा लगाया, बेशक तुम्हारा पालने वाला ताक में है।''

(सूरा 'फ़ज्र' (89) आयत 5—13)

(इस आयत में भी अज़ाब की वजह कहना न मानना बताया गया है।)

कुरान इस पर ज़ोर देता है कि जो ज़ालिम, अत्याचारी अपने मन की चाहतों की ग़ुलामी करते हैं वह इतिहास में तकलीफ़ दुख देने वाली बातों के सामने लाने का कारण बनते हैं। कुरान कहता हैः

3— ''बेशक फ़िरऔन ने मिस्र की धरती पर बहुत सर उठाया था और उसने वहाँ के रहने वालों को कई गिरोह में कर (बाँट) दिया था उनमें से एक गिरोह (बनीइस्राईल) को परेशान कर रखा था, उनके बेटों को मरवा देता था और उनकी औरतों (बेटियों) को जीता छोड़ देता था। इसमें कोई शक नहीं कि वह भी बवालियों में से था।''

(सूरा 'क़सस' (28) आयत—3)

4— ''(फ़िरऔन ने बातें बनाकर) अपने समूह की समझ मार दी और वह लोग उसके कहने पर चलने लगे। बेशक वह लोग दुष्ट (बुरे काम करने वाले) थे ही।''

इन चारो आयतों में ध्यान कीजिए तो नतीजा आपके सामने आ जाएगा।

इन्सानों से समाज बनता है और इन्सान समाज का हिस्सा होने की वजह से पूरे समाज से पहले ही होता है। इन्सान अपनी अक़्ल, सूझबूझ और नेचर की देन इरादे के साथ अपने आप में समाजी 'होने' से पहले होता है और एक इन्सान की रूह समाज की रूह के आगे बेबस और बेआज़ादी नहीं है।

'बेबसी' के मानने वालों ने यह सोच लिया कि कई लोग

मिलकर समाज में इस तरह घुल जाते हैं जैसे वही पूरे में 'हिस्सा'। फिर वह एक नई सच्चाई बनकर निकलते हैं जैसे ''शकर और पानी मिलकर शरबत बन जाता है'' यानी अगर असली मेल को मानते हैं तो हम या तो समाज के असली मेल को न मान कर लोगों की आज़ादी और ठहराव को मान ले और या इसको समाज को असली मेल मानकर इन्सान की आज़ाद और ठहराव से हाथ उठाने का एलान कर दें। इन दोनों बातों –कि समाज असली मेल हो और इन्सान आज़ाद और ठहरे हों– को एक साथ माना नहीं जा सकता है। समाज इन्सानों से ज़्यादा तगड़ा होता है फिर भी ऐसे में समाजी काम और इन्सानों के मसलों में लोग समाज की छतरछाया में और बेबस नहीं हैं, क्योंकि इन्सान के असल नेचर के बल पर फलने वाले इन्सानी स्वभाव की असलियत ही इन्सान को आज़ादी, चुनाव की छूट और इरादा देती है। इसलिए हो सकता है कि समाज उस पर जो कुछ लादना चाहता है उसी को मानने से इन्कार कर दे।

इस्लाम यूँ तो समाज के लिए ज़िन्दगी, मौत और सकत, बल को मानता है। जैसे इसको एक ज़रूरी चीज़ समझता है मगर इस पर भी समाज में सुधार और बिगाड़ का मुक़ाबला करने के लिए इन्सान ही को असल और ख़ास केन्द्र (Centre) वाला मानता है और समाज के ऊँचनीच के ढंगों को किसी सोच या ख़ास विश्वास के लिए बेबस करने वाला कारण नहीं मानता।

अच्छाईयों का हुक्म देना समाज को ढर्रे पर लाने का तरीक़ा है और बुराइयों से रोकना समाज में फैले बिगाड़ के ख़िलाफ़ एक जंग है।

कुरान कहता हैः–

''ऐ मानने वालो! तुम अपनी ख़बर लो जब तुम सीधे

रास्ते पर हो तो कोई भटका हुआ, हुआ करे तुम्हें कुछ भी नुक़सान नहीं पहुँच सकता।''

(सूरा 'माएदा' (5) आयत–104)

''बेशक जिन लोगों की रूह फ़रिश्तों ने उस समय निकाली जब वह अपनी जानों पर जुल्म (अत्याचार) कर रहे हैं तो फ़रिश्ते रूह क़ब्ज़ करने के बाद हैरत से कहते हैं तुम किस हालत (भुलावे) में थे तो वह (पछतावे के लहजे में) कहते हैं हम तो ज़मीन पर बेचारे बेसहारा थे तो फ़रिश्ते कहते हैं कि ख़ुदा की ऐसी लम्बी चौड़ी ज़मीन में इतनी भी जगह न थी कि तुम (कहीं) हिजरत (विस्थापन) करके (जगह बदल कर) चले जाते। बस ऐसे लोगों का ठिकाना जहन्नम (नरक) है और वह बुरा ठिकाना है।''

(सूरा 'निसा' (4) आयत–96)

यह आयत उन लोगों की बातों को पसन्द नहीं कर रही है जो यह बहाना करते हैं कि अरे भाई हम अपने माहौल और हालतों से बेबस हैं। आयत उनका बहाना सुनने के क़ाबिल भी नहीं समझती। जब तक इन्सान सकत और आज़ादी वाला नहीं है उस वक़्त तक तक़वा या संयम शब्द बेमतलब है। इन्सान का मान–सम्मान उसकी आज़ादी से ही है किसी भी इन्सान की पावर और उसका मान उसी वक़्त माना जा सकता है जब मालूम हो जाए कि यह सीधे रास्ते पर चलने वाला है और अपने मन की चाहतों के बहाव में न बहने वाला है लेकिन अगर मन की चाहतों के सामने सर झुका दे तो फिर उसका कोई मान नहीं।

इस तरह कोई भी कारण ऐसा नहीं है जो इन्सान को तय किया हुआ रास्ता अपनाने पर मजबूर, बेबस कर दे और न ही कोई

ऐसी ताक़त है जो इन्सान को किसी काम के न करने पर मजबूर कर दे।

अगर इन्सान अपने पहले से तय किये हुए प्रोग्राम के हिसाब से अपनी बिगड़ी आदत को बदलने का इरादा सोच समझ कर नहीं बल्कि हल्के से यूँ ही करे, तो वह अपने को आप बनाने वाला, तक़वा (संयम) वाला कहला नहीं सकता। हाँ अगर उसके सारे काम पक्के मन से समझ बूझकर इरादे और आज़ादी के साथ हों तब वह अपने को तक़वे वाला (संयमी) कहला सकता है।

'आज़ादी और चुनाव' मानने वाले

इस विचार के लोग कहते हैं कि इन्सान ख़ुद ही इस बात को समझता है कि वह अपने कामों में आज़ाद है। उसका जो दिल चाहे वह कर सकता है, अपनी चाहत के हिसाब से अपनी ज़िन्दगी में जिधर चले चल सकता है। ऐसे नियम क़ानून का होना जो इन्सान को यह समझ देते हैं कि वह उनके सामने जवाब देने वाला है, कुछ कामों पर पछतावा और सज़ाएं जो क़ानून से मुजरिमों के लिए तय की हैं, इन्सान के वह काम जिन्होंने इतिहास का धारा बदल दिया है और साईन्स व टेक्नालोजी के मैदान में इन्सानी अविष्कार यह सारी चीज़ें इस बात का सबूत हैं कि इन्सान अपने कामों में आज़ाद है।

इसी तरह धर्म–क़ानून का बन्धन, नबियों का आना और इन्सानों के लिए ख़ुदा के क़ानून पहुँचाना और क़यामत, यह सारी चीज़ें इन्सान के कामों में उसके आज़ाद होने की दलीलें हैं। यह एक बेमाने बात है कि ख़ुदा अपने बन्दों को क़ानून से बान्धे और उनको उनके कामों पर बेबस करके इनाम या सज़ा दे।

इसी तरह यह बात भी इन्साफ़ के ख़िलाफ़ है कि दुनिया को पैदा करने वाला अपनी सकत और इरादे से हमको जिस रास्ते

पर ले जाना चाहता है ले जाए और फ़िर उस काम की वजह से जो हमारे बस में न हो, हो गया, हमको सज़ा दे। अगर सच में, लोगों के सारे काम ख़ुदा के काम हैं, इन्सानों का उसमें कोई बस नहीं हैं तो सारी बरबादियाँ, ज़ुल्म, अन्याय सब कुछ ख़ुदा ने किया है जबकि ख़ुदा हर तरह के ज़ुल्म, अन्याय और विनाशकारी से पाक है। अगर किसी भी काम में हमारे चुनाव और सकत का लेना–देना नहीं है तो हम पर उसका क़ानून लागू करना एक नाइन्साफ़ी वाला काम होगा। फिर दुनिया के ज़ालिम और ज़्यादती करने वालों को धित्कार नहीं दी जा सकती, न इन्साफ़ करने वाले सराहे जाने वाले होंगे क्योंकि ज़िम्मेदारी तो सिर्फ़ बस वाली वाली चीज़ों में हुआ करती है। इन्सान उसी वक़्त बुरा कहे या सराहा जा सकने वाला होता है जब उसे अपने इरादों और कामों में आज़ादी हो और वे उसके बस में हों, वरना वह न बुरा कहा जा सकता है न ही अच्छा।

इन्सान के आज़ादी के बारे में यह गुट हद से आगे बढ़ गया है। इसका मानना है कि इन्सान बिना रोकटोक पूरी तरह से आज़ादी वाला है। जैसे इस का सोचना है कि ख़ुदा इन्सानों के कामों से जुड़ी हुई बातों में अपने हुक्म नहीं लगाता और न ही इन्सानों के अपने से किये कामों से ख़ुदा की सकत का कुछ करना–धरना हो सकता है।

इन लोगों के मानने की बुनियाद इस बात पर है कि ख़ुदा ने दुनिया और उसमें होने वाली बातों को एक नेचुरल सिस्टम के अण्डर बनाकर अपना काम ख़त्म कर दिया। दुनिया को पैदा करने के बाद उसमें होने वाले वाक़ेयों और बातों का डाएरेक्ट ख़ुदा से कोई लेना–देना नहीं। बन्दों के काम भी दुनिया के वाक़ियों और बातों में से हैं, इसलिए इनका भी ख़ुदा से डाएरेक्ट कोई वास्ता

नहीं, इन्सानो के काम में किसी तरह ख़ुदा हाथ नहीं डालता, Interference नहीं करता।

यही इन्सान की आज़ादी मानने वालों के विश्वास और नज़रिये का निचोड़ है जिसे हमने आपके सामने पेश किया।

जो इन्सान यह कहता है कि दुनिया की चीज़ों को नेचर के चलन और इन्सान का इरादा पैदा करता है और दुनिया के चलाने और काम के बीच ख़ुदा का कोई हाथ नहीं, वह दुनिया पर असर को एक दूसरे सेण्टर से जोड़ता है जो ख़ुद पैदा किया हुआ है। बस ऐसा इन्सान पैदा की हुई चीज़ को ख़ुदा का साथी साझी जानता है और ख़ुदा के मुक़ाबले में एक दूसरे ख़ुदा को मानता है और जाने या अनजाने में ख़ुदा के साथ दूसरी चीज़ों के भी टिकाव को मानता है।

किसी के लिए, चाहे वह इन्सान हो या इन्सान के अलावा, पूरी तरह की आज़ादी को मानना शिर्क (ख़ुदा का साझी मानना) से जुड़ता है। यानी किसी चीज़ को ख़ुदा के साथ कामों में और ताक़त, सकत में साथी–साझी मानना है। बेशक यह बात अपने में दो तरफ़ की पूजा है जो इन्सान को तौहीद (ख़ुदा को एक मानना) की ऊँचाई से गिराकर शिर्क की अन्धी खाई में ढकेल देती है क्योंकि इस मानने का नतीजा यह है कि मानो ख़ुदा से 'सारी दुनिया पर छाए' राज का कन्ट्रोल छीन लिया जाए और इन्सान को उसकी आज़ादी में किसी दूसरे साथी साझी के बिना बेरोकटोक अकेला तानाशाह (Monarch) मान लिया जाए। कोई भी सच्चा एकेश्वरवादी (ख़ुदा को एक मानने वाला) दुनिया और इन्सान के काम में इस तरह पैदा करने की बात को चाहे वह कितना ही कम हो नहीं मान सकता। नेचर की वजहों और नतीजों को भी मानते हुए एक अकेले ख़ुदा के हर मानने वाले के लिए ज़रूरी है कि

सारी बातों और चीज़ों में सिर्फ़ ख़ुदा को ही असली असर डालने वाला माने। ख़ुदा को एक मानने वाले को यह भी मानना चाहिए कि अगर ख़ुदा इन्सान के कामों में, उसके इरादे और आज़ादी को लेना चाहे तो ले सकता है।

जिस तरह दुनिया की ये चीज़ें अपने में टिकाऊपन नहीं रखतीं जबकि ख़ुदा से लगाव रखती हैं, उसी तरह ये कारण और नतीजे में भी टिकाऊ नहीं हैं। इसी को 'कामों में तौहीद' कहा जाता है। इसे यूँ समझये कि हम नेचर के सिस्टम में अपने सारे कारणों नतीजों और चलनों के साथ ख़ुदा का काम भी मानते हैं, उसी के चाहने से यह हुआ और होता है, उसी तरह कारण और नतीजे का होना और उनका काम करना और असर डालना ये सब ख़ुदा का वरदान (देन) है।

इस समझ से 'काम में तौहीद' का नतीजा यह नहीं कि हम दुनिया के कारण नतीजे के चलन की नहीं कर दें और यह कहने लगें कि हर असर सीधे ख़ुदा की ओर से है और नतीजे कारण का होना नहीं के बराबर है।

हाँ दुनिया से ख़ुदा का लगाव ऐसा ही है जैसे आर्ट से आर्टिस्ट का होता है। एक मूर्ति बनाने के लिए मूर्तिकार की ज़रूरत होती है। लेकिन जब मूर्तिकार ने मूर्ति बना डाली फिर उसकी ज़रूरत चली जाती है। मूर्ति अपनी सुन्दरता से लोगों का ध्यान खींचती रहेगी, चाहे मूर्तिकार मर भी जाये। अगर कोई इसी तरह ख़ुदा और उसकी बनाई चीज़ को माने तो वह बेशक शिर्क है और तौहीद के ख़िलाफ़।

इसके बाद जो चीज़ों में और इन्सानों के कामों में ख़ुदा की छाप की 'नहीं' करता है वह ख़ुदा की सकत को घेर ही तो देता है जो लॉजिक से भी दूर है। इससे दो तरह की ख़राबी पैदा होती है–

1— जहाँ ये बात खुदा की सकत के आम होने की नहीं कराती है वहीं उस अथाह बेघिरे अनन्त ख़ुदा को घेर देती है।

2— इससे यह भी लगता है कि पैदा की हुई चीज़ों को ख़ुदा की ज़रूरत नहीं रहती, संसार भगवान से बेपरवाह है यह समझ आदमी को सर उठाने पर तैयार करती है जबकि भगवान के सामने पूरी तरह झुक जाने, उससे लगाव और उस पर भरोसा करने का पूरा—पूरा असर इन्सान के अपने व्यक्तत्व (Personality), चाल—चलन, बरताव और रूहानी गुणों पर पड़ता है। उसके सामने पीछे, अन्दर बाहर ख़ुदा को छोड़ कोई और हुक्म लगाने वाला नहीं होता, इसीलिए मन की चाहतें उसे अपनी पकड़ में, न कोई इन्सान उसे अपनी गुलामी में ले सकता है।

खुदा ने कुरान में दुनिया के पैदा करने के इरादे में किसी भी चीज़ के साथ होने की बिल्कुल से नहीं की हैः—

''और कहो कि हर तरह की सराहना उस ख़ुदा के लिए (ठीक) है जो न तो कोई सन्तान (बेटे—बेटी) रखता है और (सारे जग के राजकाज में) न कोई उसका साझी है, और न उसे किसी तरह की कमज़ोरी है कि कोई उसका रखवाला हो उसी की बड़ाई अच्छी तरह करते रहा करो।''

(सूरा 'अस्रा' (97) आयत—110)

कुरान ने बहुत सारी आयतों में ख़ुदा की भरपूर कुदरत, सकत को साफ़—साफ़ बयान किया है जसैः—

''सारे आसमान और ज़मीन और जो कुछ उसमें है सब ख़ुदा ही का राज (प्रभुत्व) है और वह हर चीज़ पर कुदरत, सकत रखने वाला है।''

(सूरा 'माएदा' (5) आयत—120)

''और ख़ुदा ऐसा (गिरा—पड़ा) नहीं है कि उसे कोई चीज़ बेबस कर सके, (न) आसमानों में न ज़मीन में। बेशक वह बड़ा जानकारी रखने वाला है और बड़ी कुदरत, सकत रखने वाला है''

(सूरा 'फ़ातिर' (35) आयत—44)

याद रखिये संसार की सारी चीज़ों को जिस तरह अपने बचे रहने में ख़ुदा की ज़रूरत है, उसी तरह अपने होने और अपनी पैदाइश में भी उसी की ज़रूरत है। सारी दुनिया के जुट को हर वक़्त ख़ुदा से अपने होने के वरदान (देन) का फ़ाएदा उठाते रहना चाहिए वरना यह सिस्टम तितर—बितर हो सकता है क्योंकि दुनिया की ताक़तों से जो भी होता है वह सिरजनहार पैदा करने वाले ख़ुदा की वजह से होता है। चीज़ों की असलियत को ख़ुदा के इरादे से जोड़े रखना ज़रूरी है। इस से किसी भी असलियत को निजी टिकाव मिला हुआ नहीं है। ये ऐसा ही है जैसे बिजली के बल्ब के लिए ज़रूरी है कि शुरु में वह पावर हाऊस से बिजली ले और रौशनी को बचाये रखने के लिए भी पावर हाऊस से बिजली लेता रहे। कुरान साफ़—साफ कहता हैः

''लोगो! तुम सबके सब को ख़ुदा की (हर वक़्त) ज़रूरत है और (सिर्फ़) ख़ुदा ही (सबसे) बेपरवाह, ज़्यादा सराहना वाला है।''

(सूरा 'फ़ातिर' (35) आयत—15)

इस तरह सारी सच्चाईयाँ उसके इरादे से पैदा हैं और उससे जुड़ी हुई हैं। हर वजूद हमेशा से उसी से मदद चाहता है। होने का पूरा सिस्टम सिर्फ़ एक धुरी के चारो तरफ़ घूमता है। इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) फ़रमाते हैंः—

''ख़ुदा लोगों को ताक़त से ज़्यादा तकलीफ़ नहीं

देता (चलाता) और ख़ुदा के राज में वह चीज़ नहीं हो सकती जिसको वह न चाहे''

('उसूले काफ़ी' भाग–1 पे–160)

अगर ख़दा हम पर हर वक़्त चाहने की आज़ादी, सकत, बल, ज़िन्दगी की मेहरबानी न करता रहे तो हम कोई भी काम नहीं कर सकते क्योंकि उसके न बदलने वाले अडिग इरादे ने हम से यह चाहा है कि हम अपने चाहे कामों को अपनी सकत और आज़ादी से किया करें और जो चीज़ उसने हमसे चाही है उसको पूरा करें। उसने यह चाहा कि इन्सान अपनी चाह और पहचान के हिसाब से अपना आने वाला कल अच्छा या बुरा, सुनहरा या काला ख़ुद बनाए।

बस इस पूरी चर्चा का निचोड़ यह है कि हमारे चाहे समझे कामों का लगाव ख़ुदा से भी होता है और हमसे भी। यही शिया इस्ना अशरिया (बारह इमामों को मानने वालों) का मानना भी है। जो बल, सकत का धन ख़ुदा ने हमें दिया है उसको हम चाहें तो जानबूझकर अपने बनाने में और अच्छे कामों में उसी तरह ख़र्च कर सकते हैं जिस तरह बिगाड़ और नास के लिए फेंक सकते हैं। यह और बात है कि यह ख़ुदा की तरफ़ से एक ख़ास चौखटे के अन्दर ही हो सकता है। इसे यूँ समझये कि बल, सकत ख़ुदा की दी हुई हैं, उसका इस्तेमाल करना और फ़ायदा उठाना हमारा काम है।

मान लीजिए एक आदमी के सीने में बनाया हुआ दिल लगा दिया जाए। एक बैटरी से जो उस दिल के पास है इस बनाये दिल में धड़कन पैदा की गई है। बैटरी का कन्ट्रोल हमारे हाथ में दे दिया गया है। हम जब चाहें चाबी लगाकर दिल को चला दें या रोक दें। चलते दिल को आज़ादी दे दें, जब तक चले जो चाहे करे। यहाँ पर जो चीज़ हमारे हाथ में है वह एक इनर्जी है। अब

अगर दिल अच्छा या बुरा काम करे तो यह उसकी चाह और सकत की बात है। वह इस ताक़त से किस तरह फ़ाएदा उठा सकता है, यह वह जाने इसका हमसे कोई लगाव नहीं है, लेकिन वह ताक़त हमारे कन्ट्रोल में है।

इसी तरह हमारी ताक़त ख़ुदा की दी हुई है। हम जैसे चाहें उसे इस्तेमाल करें यानी उससे फ़ाएदा उठाएं या नुक़सान बिल्कुल हमारे काम हैं। लेकिन वह ताक़त ख़ुदा के कन्ट्रोल में है। जब तक चाहे वह ताक़त हमारे पास रखे और जब चाहे हटा ले। यह वही बीच वाला मत या मज़हब है जो 'बेबसी' के विश्वास और आज़ादी के विचार दोनो से अलग है।

बीच की बात

दुनिया की चीज़ें जितनी बाढ़ तक पहुँच जाएं, उस के बताये ख़ास रास्ते से फ़ाएदा उठाती हैं। चीज़ों के तरह–तरह के क्लास के हिसाब से हर जगह की रास्ता बताने की ख़ासियत भी पूरी तरह अलग–अलग होती है।

इस दुनिया की तरह–तरह की चीज़ों के बीच हम जहाँ चाहें अपनी जगह ठहरा सकते हैं। हम जानते हैं कि पेड़–पौधे, नेचर की ताक़तों के बस में क़ैद हैं और बेबस हैं। लेकिन इसी के साथ–साथ दुनिया के बदलावों पर थोड़ी सा बाढ़ वाला अपना रिएक्शन भी दिखाते हैं।

हमें जानवरों की ख़ासियत पर ध्यान करने से पता चलता है कि जानवर के गुण पेड़ पौधों से पूरी तरह अलग होते हैं। जानवर के लिए ज़रूरी है कि वह अपने खाने पीने का सामान ख़ुद ढूँढें। नेचर जानवरों के लिए दस्तरख़ान नहीं बिछाती, न उन के लिए खाना तैयार करती है। खुली बात है कि खाना पानी पाने के लिए जानवरों को बहुत सी चीज़ें चाहिएं। इसलिए ख़ुदा ने उसको

वह सभी चीज़ें देकर पैदा किया। जबकि जानवर स्वभाव के बहुत ज़्यादा खिंचाव के कारण एक झुकने वाला और आज्ञाकारी (बात पर चलने वाला) होता है। इस बारे में एक हद तक आज़ाद भी हैं और किसी हद तक नेचर की कड़ाई और बन्धन से भी अपने को छुड़ा लेता है। जानवरों के जानकार (बायलाजिस्ट) लोगों का मानना है कि जब तक जानवर अपनी नेचुरल बनावट और हाथ पाँव और उनकी ताक़त से कमज़ोर होता है, उस वक़्त तक अपने स्वभाव के हिसाब से ज़्यादा मज़बूत होता है, और सीधे नेचर की देखरेख और मदद से ज़्यादा से ज़्यादा फ़ाएदा उठाता है। जितना–जितना सोचने समझने और महसूस करने वाली ताक़तों से मज़बूत होता जाता है, उतना–उतना स्वभाव से कमज़ोर होता जाता है। जैसे बच्चा शुरु में सीधे माँ–बाप की देखरेख, मदद, और ध्यान के साये में होता है, फिर धीरे–धीरे जितना–जितना अक़्ल और समझ बढ़ती जाती है माँ–बाप की सीधी देखभाल से उतना–उतना दूर होता जाता है।

इन्सान जो तरक़्क़ी के ऊँचे दर्जे पर है और वह अकेला ऐसी चीज़ है जो इच्छा की ताक़त (Will Power) और पहचान करने वाली समझ का मालिक है, वह भावनाओं के लेहाज़ से सबसे ज़्यादा नीचा है। हालांकि आज़ादी की सीढ़ी पर पेड़–पौधों और जानवरों से कहीं आगे आख़री हद तक पहुँच चुका है।

पेड़–पौधों की सारी ज़रूरतों को अलग–अलग तरीक़े से नेचर ख़ुद पूरा करती है। जानवरों की ज़रूरतों के बारे में माँ की ज़िम्मेदारी इतनी होती है कि वह उसको पेट में रखे, पैदा करे और उसके खाने पीने का इन्तेज़ाम करें और उसकी देखरेख करे। लेकिन जानवरों में भावनाएं बचपन ही से जागरुक और चालू होती हैं। फिर माँ उन्हें सिखाने और उनकी चाल की देखभाल करने की

ज़िम्मेदार नहीं होती, इस बारे में वह बिल्कुल बेखटके होती है। लेकिन हम इन्सान को देखते हैं, वह नेचर की ताक़तों का मालिक नहीं होता, आड़े समय और कठिनाइयों का सामना करने में वह जानवरों से कई गुना ज़्यादा कमज़ोर है। इसीलिए जब तक अपने बलबूते अपना नहीं कर पाता और अपने पैरों पर नहीं खड़ा हो जाता, उसे सालों साल दूसरों का ख़ासकर माँ–बाप की ज़रूरत रहती है। कुरान मजीद इन्सान के कमज़ोर होने के बारे में कहता है:–

"आदमी तो बहुत कमज़ोर पैदा किया गया है।"

(सूरा निसा (4) आयत–27)

नेचर इन्सान को जानवर के हिसाब से बहुत पहले आज़ाद कर देता है। बढ़ने के साथ–साथ एक तरफ़ तो उसके अधिकार, उमंगें और आज़ादी बढ़ती जाती हैं और दूसरी तरफ़ ज़रूरतें, मेल और लगाव भी बढ़ते चले जाते हैं। उसी के साथ यह भी है कि इन्सान अपनी आज़ादी और सकत से जितना फ़ाएदा उठाता है उसकी ज़रूरतें और दूसरों के सहारे रहने की बात भी बढ़ती जाती हैं।

यह ख़ास–ख़ास बातें दुनिया की चीज़ों को घेरे हुए हैं और विचारकों की नज़र में यह बाढ़ के कारण हैं। कोई जितना ज़्यादा बाढ़ की सीढ़ी से ऊपर चढ़ता जाए आज़ादी की तरफ़ ज़्यादा से ज़्यादा बढ़ता है। यह बाढ़ ज़रूरतों के साए में पलती है।

लेकिन इन्सान में आज़ादी के जगमगाने के लिए उनके नेचर के मुक़ाबले में उसके उलटे कारण का होना ज़रूरी है जिससे इन्सान अपने आपको दो ऐसी उलटी ताक़तों के बीच महसूस करे जिनमें की हर एक ताक़त उसका अपनी तरफ़ खैंच रही हो। ऐसे में इन्सान बेबस होकर अपनी आज़ादी और सकत से,

बिना किसी दबाव के, मन चाहे किसी एक को अपनाए। फिर किसी थोपे हुए कारण और पहले से सोचे रास्ते से अलग वह अपने को ख़ास क़ानून ढंग पर बनाना और बढ़ाना शुरु करे। फिर इस खींचातानी में इन्सान ख़ुदा की अमानतों और उसकी मेहरबानियों का बोझ (जो कि इतना भारी है जिसे ज़मीन और आसमान ने उठाने से इन्कार कर दिया) उठाकर या तो मन की चाहतों का क़ैदी हो जाए और बर्बादी के गढ़े में जा गिरे, या फिर अपनी सोच पर भरोसा करते हुए बाढ़ के रास्ते पर चल पड़े और आसमान से बातें करने लगे।

अगर इन्सान मन की चाहतों की ग़ुलामी करने से आज़ाद हो कर, हाथों और पैरों में पड़ी हुई इन ज़न्जीरों को तोड़कर अपने अन्दर की ताक़तों को इस्तेमाल करे और उनसे फ़ाएदा उठा सके तो उसकी भावनाओं के राज कमज़ोर पड़ जाते हैं, चाहतों, जज़्बों के दीप अक़्ल की चमक के सामने मद्धम पड़ जाते है क्योंकि हर ज़िन्दा चीज़ की हर वह ताक़त या उसका हर वह अंग जो बग़ैर इस्तेमाल छोड़ दिया जाए तो वह ताक़त या हिस्सा कमज़ोर हो जाता है। इसके उलटे जब किसी हिस्से या ताक़त को बुनियादी तौर पर इस्तेमाल किया जाए तो उसमें ऊँचाई और तरक़्क़ी पैदा हो जाती है।

इस वजह से जिस वक़्त इन्सान की जानकारी और इरादा पैदा करने वाली ताक़त अक़्ल और समझ के साथ उसे रास्ता दिखाने लगे और उसका चाहा उसे चलाने लगे, तो आदमी की सूझबूझ और उसकी सोच सच्चाइयों और हक़ीक़तों तक पहुँचने का सहारा बन जाती है।

इसके अलावा एक दूसरे के उलट दो चीज़ों के बीच फंस जाने की बेकली आदमी को सोचने और ध्यान करने पर लगा देती

है जिससे वह अक़्ल के सहारे सही और ग़लत रास्ता पहचान ले। इसी चाह और ज़रूरत की वजह से सोच और ध्यान अपना काम करने लगते हैं और इन्सान की सोच समझ और जानकारी का कसबल बढ़ता है। उमंग, ताक़त, सकत ज़्यादा होने के साथ वह आगे बढ़ता है।

इरादे की अज़ादी, घुमाव और बेकली की क़ैद से निकलने की चाह, जीने से मुहब्बत यह चीज़ें आशा पैदा करने की वजहें होती हैं और इन्सान की चाहतों और मक़सदों को पूरा करने का रास्ता बनती है। यही लगातार इच्छा शक्ति (Will Power / चाह का बल) से फ़ाएदा उठाते हुए उसे मक़सद तक पहुँचा देती हैं। इसीलिए जो अपनी भावनाओं के आगे स्वभाव मिज़ाज से बेबस हैं उनमें चाह और आशा जैसी कोई चीज़ ही नहीं होती क्योंकि आरज़ू आशा और चाहत वहीं मिल सकती है जहाँ चाहने की आज़ादी हो।

इसी तरह ज्ञान, सभ्यता, आज़ादी की चाह, और मालिक होने वग़ैरा का हक़ भी वही मिल सकता है जहाँ चाहने की आज़ादी मिले। इन्सान अपनी आज़ादी और लगातार कोशिश के सहारे ज्ञान और समझ बल्कि नेचर के हर फैलाव में तरक़्क़ी कर सकता है। अपनी सकत, होनहारी, बल और ऊँची नेचर को काम में लाकर ऐसी जगह तक पहुँच सकता है जहाँ वह दान और भलाइयों का स्रोत और समाज को फ़ाएदा पहुँचाने का फला हुआ पेड़ बन जाए। यह सब चीज़ें चाहने की आज़ादी के फल हैं जिन्हें हम हर जगह देख सकते हैं।

चाहने की आज़ादी मानने और न मानने वालों के बीच खींचातानी ख़ुद ही गवाह है कि इन्सान में चाहने की आज़ादी थोड़ा बहुत सब ही मानते हैं। अब हम देखना चाहते हैं कि इन्सान

में इसकी हदें और शर्तें क्या हैं? इन्सान किस हद तक चाहने में आज़ाद है?

इस 'बेबसी' और चाहने के मसले में शियों ने क़ुर्आन मजीद से और अपने मज़हबी इमामों (अगुवाओं) से जो धर्म–विश्वास पाया है वह न सिर्फ़ 'बेबसी' ही है और न सिर्फ़ आज़ादी है बल्कि एक बीच की सोच है जिसमें न तो 'बेबसी' के मानने की कमियाँ है जो सोच समझ और ध्यान, चाल–चलन और समाज के स्टैण्डर्ड का उलटा हैं और जो सारी बुराइयों को ख़ुदा की तरफ़ कर देता है (उससे जोड़ देता है) और आख़िर में ख़ुदा के इन्साफ़ का इन्कार कर देता है। इस बीच के नज़रिये में चाहने की खुली छूट मानने की ख़राबियाँ भी नहीं हैं जैसे इस बात का इन्कार कि ख़ुदा हर काम कर सकता है, सभी कामों में और हर चीज़ को पैदा करने में ख़ुदा का इन्कार कर देना जैसी ख़राबियाँ हैं। वह बीच का नज़रिया पूरी–पूरी 'बेबसी' और पूरी–पूरी आज़ादी के बीच एक रास्ता है।

बीच का मज़हब

यह बात साफ़ है कि हमारे चाहे हिलने–डुलने, चलने–फिरने और सूरज, चाँद, ज़मीन और जानवरों के घूमने–चलने में बहुत फ़र्क़ है। हमारे अन्दर से एक चाह उबाल लेती है जो किसी काम को करने या छोड़ देने का रास्ता खोल देती है और हमें करने या न करने में चुनने की आज़ादी का तोहफ़ा दे देती है।

अच्छे कामों और बुरे कामों का करना हमारा अपना मन बनाने, (अच्छे बुरे की) पहचान, समझ की ताक़त और हमारी मर्ज़ी (सहमति) से हुआ करता है। अपनी सूझबूझ और सोच समझ को काम में लाकर ख़ुदा के इस तोहफे से फ़ाएदा उठाना चाहिए। पहले तो उसे पहचानना चाहिए, नाप–तौल करना चाहिए तब

अपनाना चाहिए और ख़ुदा यही चाहता है कि हम उसके राज में इस आज़ादी का फ़ायदा लें।

याद रखिये हम जो भी काम करते हैं वह सच में ख़ुदा के जानने और उसके पहले से इरादे के बाहर नहीं होता है। सभी काम जीवन के बहाव और चलन और इन्सानों की क़िस्मत का लिखा सब कुछ उस ख़ुदा की जानकारियों से घिरा बन्धा हुआ करता है। हम एक पल भी उससे बेपरवाह नहीं हैं यानी ऐसा नहीं है कि हमें उसकी ज़रूरत नहीं है। ख़ुदा की लगातार मदद के बिना अपने अन्दर छुपी हुई ताक़त से फ़ायदा उठाया नहीं जा सकता।

ख़ुदा अपनी महान सकत और पूरी सूझबूझ से हमारी नीयतों और हमारे चाल–चलन को अच्छी तरह जानता है। उसकी हुकूमत और देखरेख हमारी सोच समझ के ऊपर है। वह जिस समय चाहे मेहरबानियों को रोक सकता है। हमारी आज़ादी और हमारा बस उसके जनरल सिस्टम से बाहर नहीं। इसलिए इससे ख़ुदा को एक मानने के बारे में कोई हिचक सामने नहीं आती।

पूरे जग में अपनी ताक़त और इरादे के साए में असर रखने वाला इन्सान ख़ुद भी नेचर के नियमों की जंजीर में जकड़ा हुआ है। इन्सान अचानक और बेबस पैदा होता है और अपनी चाह और बस के बिना मर जाता है। नेचर उसको ज़रूरतों की ज़ंजीरों में जकड़ कर अपनी तरफ़ खींचता है और इसी हालत में वह अपनी पहुँच, सकत और टेलेन्ट (Talent) से फ़ायदा उठाने वाला है। आज़ादी और मन से धनी होने की बात उसके अन्दर एक ऐसी बनाने और रचने की ताक़त पैदा करती है जिसके सहारे वह नेचर को अपने बस में कर सके और उसके कारणों (Effects) पर छा सके। इसीलिए इमाम जाफ़रे सादिक़ (अ0) फ़रमाते हैं कि न

'बेबसी' है न 'बस' है बल्कि असल बात इन दोनों के बीच की है।
(काफ़ी भा0–1 पे–160)

इन्सान का बस तो है लेकिन हर तरह का नहीं क्योंकि पैदा की हुई सारी चीज़ों के लिए पूरा–पूरा बस सकत चाहे वह एक घिरा हुआ ही क्यों न हो ख़ुदा के कामों में शिर्क (किसी को उसका साझी मानना) है लेकिन यह घिरा हुआ 'बस' जो पैदा करने वाले की मर्ज़ी के हिसाब से हो और जिसमें ख़ुदा के हुक्म राज करने वाले चलनों की तरह नेचर पर, जिसमें इन्सान भी है, खुले हैं, वह शिर्क नहीं है। इस्लामी विचार में इन्सान न तो ऐसी चीज़ है जो भाग्य का बेबस ग़ुलाम हो और न ऐसी चीज़ है जो बिला वजह अंधेर में बिन्दास छोड़ दी गई हो बल्कि वह होनहारी (Talent), जानकारी और तरह–तरह की ख़्वाहिशों में डूबा हुआ है और एक नेचुरल लीडरी और आत्मा की अगुवाई के साथ है।

'बेबसी' मानने वालों को इस विचार से शक यूँ हुआ कि इन्सान के लिए सिर्फ़ दो ही रास्ते हैंः–

1– इन्सान के कामों को ख़ुदा की तरफ़ लगा दें तो इन्सान की आज़ादी के चले जाने और बेबसी का मसला सामने आता है।

2– इन्सान के कामों को सिर्फ़ इन्सानों का समझें तो इसका ज़रूरी नतीजा ख़ुदा की सकत का घिरी होना होता है।

हमारे चाहने की आज़ादी ख़ुदा की सकत के आम होने में असर नहीं करती है क्योंकि यह तो ख़ुदा ने चाहा ही है कि ख़ुदा के चलन की बुनियाद पर आज़ादी के साथ अपने आप हर काम को हम कर सकें।

इन्सान के कामों को एक तरफ़ तो यह कहा जा सकता है कि उसका ज़िम्मेदार ख़ुद इन्सान है और दसूरी तरफ़ उन्हें ख़ुदा के काम कहना भी सही है। बस फ़र्क़ इतना है कि इन्सान के काम

सीधे इन्सान के कहे जा सकते हैं, पर उन्हें ख़ुदा के कहने में बीच में घुमाव आता है। दोनों तरह कहना सच और ठीक है। ऐसे में इन्सान की चाह और इरादा ख़ुदा की चाह और इरादे से नहीं टकराता।

अपने नतीजों पर कारणों के असर करने को मानना और दुनिया के सिस्टम को दुहरी पैदा की हुई चीज़ों का मानना न सिर्फ़ यह कि ख़ुदा के साथ शिर्क नहीं है बल्कि ख़ुदा का पैदा करने वाला होने का भरपूर विश्वास है क्योंकि उससे सारी दुनिया पर, जिसमें इन्सान भी शामिल हैं, ख़ुदा की पूरी हुकूमत (प्रभुत्व) की बात रहती है।

अगर हम (ख़ुदा के अलावा) दुनिया के सिस्टम में सिरे से किसी असर को न मानें तो मैटर के चलन को ऐसे नहीं समझा समझाया जा सकता जो माना जा सके। चीज़ों का एक दूसरे पर असर करने की नहीं करने देने से कारण और नतीजों के होने की बात ठहर न पाएगी।

यह कहना भी लाजिकल नहीं है कि सभी बातें मैटर के चलते पैदा होती हैं और हमेशा से लगातार पैदा करने के अपने गुण से ख़ुदा मैटर में हर पल चाल पैदा करता रहता है, क्योंकि चलना एक सच्चाई है इसलिए यह अपने आप मैटर के तरह–तरह के बदलाव की वजह नहीं हो सकती, बल्कि अपनी चाल के सहारे तरह–तरह के रूप अपनाने वाले मैटर के लिए ज़रूरी है कि उन तरह–तरह के रूपों का होना ख़ुदा से हुआ हो जिससे चीज़ों का तरह–तरह के होने का पता चले। यहाँ पर एक सवाल हो सकता है कि चीज़ों में और होने वाली बातों में मैटर का कोई असर होता है कि नहीं? अगर मैटर का कोई असर नहीं होता तो 'होने' के सिस्टम में यह तरह–तरह के असर कहाँ से आए? और अगर मैटर का असर होता है तो फ़िर यह मानना पड़ेगा कि ख़ुदा सभी होने

वाली बातों को सीधे नहीं पैदा करता। जैसे कारण मैटर के अपने नतीजे को सीधे पैदा करता है, ख़ुदा ऐसा नहीं करता है। मैटर असर तो करता है, लेकिन वह अपनी सारी ताक़तों और फैलाव को ख़ुदा से लेता है और ख़ुदा न मैटर है न मैटर में चाल। यह मान लेना कि ख़ुदा ने मैटर के अन्दर ऐसी सकत और होनहारी दी हैं जिससे मैटर ख़ुद अपने अन्दर और दूसरों के अन्दर बदलाव पैदा कर सकता है इस बात को मान लेना ख़ुदा के असली पैदा करने वाला मानने में कोई शक नहीं पैदा करता। ज़रूरत और कमी इन्सान को पूरी तरह घेरे हुए है, यह मानकर उसे किसी हद तक काम करने वाला मान लेना ख़ुदा के इरादे और चाह के ख़िलाफ़ नहीं जाता, न ही इससे ख़ुदा की पैदा करने की अपार और बेहद गुण में कोई खोट पड़ती है, न ही इससे कोई शक समझा जा सकता है।

इमाम जाफ़र सादिक़ (अ0) की दुहराई (किताब ''काफी'' की जिल्द एक के पेज न0 183 पर) एक हदीस (हज़रत मुहम्मद साहब की सूक्ति) मिलती है कि ''ख़ुदा चाहता है कि चीज़ें कारणों के नीचे चलें इसलिए उसने हर चीज़ के लिए वजह ठहरा दी है।

ख़ुदा की पैदा की हुई चीज़ों में एक कारण इन्सान और उसकी चाह है। इस दुनिया में हर चीज़ की पैदाइश के लिए ख़ुदा की तरफ़ से ख़ास वजहें ठहरा दी गई हैं। जब तक वह वजहें न होंगी नतीजे न होंगे। यह एक आम क़ायदा है। इसमें हमारे अपने चाहे, हमारे बस वाले काम भी आते हैं। दूसरी वजहों से हटकर हमारा इरादा इस सिलसिले की आख़री कड़ी होना चाहिए।

क़ुरआन मजीद की वह आयतें जिनमें हर चीज़ को ख़ुदा की तरफ़ जोड़ा गया है वह आयतें असल में ख़ुदा के हमेशा वाले इरादे के बारे में हैं। उनका मक़सद 'होने' के आम रूप का बताना

है और उसकी पूरी–पूरी सकत, क़ुदरत और कन्ट्रोल और भरपूर घेरे का मनवाना है। यह भी उद्देश है कि उसके हुक्म बिना छूट सारे सन्सार पर लागू हैं। लेकिन लागू होने की यह खुली, फैली, मिलाने वाली, आम और भरपूर पहुँच इन्सान के चाहने की आज़ादी की काट नहीं है, क्योंकि इन्सान का चाहना भी तो पैदा की हुई चीज़ है। उसी ख़ुदा ने यह आज़ादी इन्सान को दी है जिससे वह अपने जीने का ढंग अपना सके। उसने किसी भी एक को या किसी भी समाज को दूसरे की ग़लती का ज़िम्मेदार नहीं ठहराया है। अगर यही हट है कि इन्सान को बेबस माना जाए तो फिर इन्सान के चाहने की आज़ादी होने पर भी बेबस मानना चाहिए। इन्सान की आज़ादी ख़ुदा चाही पैदा होने का नतीजा है, न कि ख़ुदा के हुक्म चलन का नतीजा।

इसी वजह से जब हम किसी अच्छे काम के करने का मन बनाते हैं तो यह दी हुई ताक़त तो ख़ुदा की है लेकिन उससे फ़ायदा उठाना हमारा अपना काम है ख़ुदा का नहीं। ख़ुदा क़ुरआन में इन्सान के चाहने वाला होने को और इन्सान के काम को इन्सान का ही बता रहा है और 'बेबसी' मानने वालों की काट कर रहा है। वह इस तरह कि दुनिया की कठिनाइयों और दुखों को इन्सान ही के कामों का नतीजा बताता है। वह सभी आयतें जो ख़ुदा के इरादे के बारे में हैं उनमें एक जगह भी ऐसा नहीं है जहाँ पर इन्सान के चाहे कामों को ख़ुदा का कहा गया हो। आप देखें कहा जाता हैः–

> *''तो जिस इन्सान ने ज़र्रा बराबर नेकी की है वह उसे देख लेगा और जिसने ज़र्रा बराबर बुराई की है वह उसको देख लेगा।''*

(सूरा ज़िलज़ाल (99) आयत 7–8)

"और जो कुछ तुम (दुनिया में) किया करते थे उसकी पूछताछ तुमसे ज़रूर की जाएगी।"

(सूरा नहल (16) आयत–93)

"बहुत जल्दी मुश्रिक (ख़ुदा का साझी मानने वाले) लोग तुमसे कहेंगे कि अगर ख़ुदा चाहता तो हम लोग शिर्क न करते (ख़ुदा का साझी न मानते) और न हमारे बाप–दादा और न ही हम कोई चीज़ (अपने ऊपर) हराम (निषेध) करते। इसी तरह (बातें बना–बना के) जो लोग इनसे पहले गुज़रे हैं वह (पैग़म्बरों को) झुठलाते रहे यहाँ तक कि उन लोगों ने हमारे अज़ाब (प्रकोप) को चखा, (ऐ रसूल) तुम कहो कि क्या तुम्हारे पास कोई दलील है (अगर है) तो हमारे (दिखाने के) वास्ते उसे निकालो (दलील तो क्या पेश करोगे) तुम लोग तो सिर्फ़ अपने कच्ची सोच पर चलते हो और अटकलपच्छू बातें करते हो।"

(सूरा अन्आम (6) आयत–147)

अगर इन्सान का सही रास्तों पर चलना और भटकना ख़ुदा के चाहने की वजह से होता तो ज़मीन पर बिगाड़ का नाम निशान तक न होता।

"अगर ख़ुदा चाहता तो सभी को हिदायत (सही रास्ते पर लगा) कर देता।"

(सूरा 'रअ्द' आयत–31)

भटके हुए लोग यह दावा करते हैं कि हर तरह का बिगाड़ ख़ुदा के चाहने से पैदा होता है। जैसा कि कुरान कहता हैः–

"और वह लोग जब कोई बुरा काम करते हैं तो कहते हैं कि हमने इसी तरीक़े पर अपने बाप–दादाओं को

पाया और ख़ुदा ने (भी) यही हुक्म दिया है (ऐ रसूल) तुम साफ़ कह दो कि ख़ुदा हरगिज़ बुरे काम का हुक्म नहीं देता। क्या तुम लोग ख़ुदा पर (झूट लगाकर) वह बातें कहते हो जो तुम नहीं जानते?।"

(सूरा 'अअ्राफ़' (7) आयत–28)

ख़ुदा ने जिस तरह अच्छे काम के लिए सवाब, पुण्य, इनाम रखा है उसी तरह ग़लत कामों और बिगाड़ पर सज़ा भी रखी है। गुनाहों पर सज़ा रखने का मतलब यह नहीं है कि उसने गुनाह करने को भी कहा है। अगर कोई समझदार आदमी मिट्टी के तेल के स्टाक में माचिस की तीली जलाए और तेल को आग लग जाए तो हो सकता है ख़ुद जलाने वाला भी उसमें जल जाए। यह एक नेचर का आम क़ानून है जो पूरी दुनिया पर चलता हैं। आग जलाने वाले ने अगर इस क़ानून को जानते हुए यह बात की है तो उसका यह काम न सिर्फ़ यह कि नेचर वाली ज़रूरतों के अन्दर नहीं है बल्कि समझ वाले इन्सान के नेचर के भी ख़िलाफ़ है।

बेबसी और बस होने के मसले में इन्सान का 'होना' और उसके सभी काम के Natural Effects तो ख़ुदा के इरादे से होते हैं मगर उसके चाहे काम ख़ुद उस इन्सान के अपने चाहने से होते हैं।

शियों के हिसाब से इस्लामी नज़रिया यह है कि इन्सान उस तरह के भरपूर चाहने का मालिक नहीं है कि संसार में फैले हुए लागू क़ानूनों और चलनों के रूप में ख़ुदा की मर्ज़ी और चाहने की हद से बाहर निकल कर कुछ कर सके। क्योंकि मआज़ल्लाह (अल्लाह की पनाह) ख़ुदा न तो अपनी पैदा की हुई चीज़ों के मुक़ाबले में कमज़ोर है न बेबस है, न उसके हाथ बंधे हुए हैं और न आदमी ही इतना बेबस है कि वह ज़रूरत के हिसाब से अपना

मनचाहा जीने का रास्ता भी न चुन सके और जानवरों की तरह भावनाओं का बन्धुवा हो।

कुरान मजीद ने साफ़ कह दिया है कि ख़ुदा ने लोगों को सही और सीधा रास्ता दिखा दिया है। लेकिन उसने इन्सान को इस बात पर बेबस नहीं किया है कि वह सही, सीधा और भलाई का रास्ता ही अपनाए और न ही इस पर बेबस किया है कि भटकने वाला रास्ता अपनाए। कुरान कहता है किः—

"हमने इन्सान को रास्ता भी दिखा दिया (अब वह) चाहे शुक्र (धन्यवाद) करने वाला बन जाए या 'नहीं' करने वाला बन जाए।"

(सूरा 'दहर' (76) आयत—3)

बस साबित हुआ कि इन्सान के चाहे कामों को ख़ुदा का चाहा हुआ काम कहना कुरान की नज़र में ग़लत है।

भाग्य का मसला

क़ज़ा और क़द्र

भाग्य उन उलझे हुए मसलों में से है जिसमें कई वजहों से बहुत फेर बदल हो गया है। इसकी एक वजह तो यह है कि लोगों ने इसको ज़्यादा ध्यान से समझा ही नहीं। जिन लोगों ने इसे समझा भी उनको उनकी ग़लत सोच और ख़राब नियत ने उलझा दिया। इस लिए हम यहाँ पर इसके बारे में कुछ चर्चा करेंगे और अपनी सकत भर इसे समझने और समझाने की कोशिश करेंगे।

देखिये इस दुनिया में हर चीज़ को Calculation, Logic, और सिस्टम की बुनियाद पर रखा गया है। हर चीज़ अपनी पहचान की हदें उन कारणों और ज़रूरतों ही से लेती है जिससे वह जुड़ी होती है। जिस तरह कोई चीज़ अपने 'होने' को अपने

कारण से पाती है उसी तरह सभी ऊपरी और अन्दर की ख़ुसूसियतों को भी वजह ही से लेती है और उसी को समझती है। हर वजह और नतीजे में एक तरह का भाईचारा होता है इसलिए नेचुरल तरह से हर वजह अपने उचित असर को अपने नतीजे में ट्रांसफर करती है।

इस्लाम की नज़र में ख़ुदा के फैसले और भाग्य का मतलब ख़ुदा का वह आख़िरी हुक्म है जो दुनिया के कामों के और उन कामों के चलन और उनकी हदों और अन्दाज़े के बारे में हो। दुनिया में होने वाली हर चीज़ उसी में जिसमें इन्सान के काम भी आते हैं, अपनी वजह की तरफ़ से आख़िरी हुक्म पाती है। इसका मतलब यह है कि वजह का आम नियम हर चीज़ पर लागू है, हर चीज़ उसके घेरे में है। हद यह है कि इन्सान के चाहे किये काम भी वजहों (Reasons) के आम क़ायदे के अन्दर आते हैं। (हर नतीजे के लिए वजह ज़रूरी है।)

क़ज़ा (फैसला) यानी वह मज़बूत और ठोस काम जो पलटे न। यह काम ख़ुदा का काम होता है यानी पैदा करना।

क़द्र (भाग्य) के माने अन्दाज़ा/अनुमान है। यानी दुनिया का सिस्टम और क़ानून के हिसाब से होना और है इसी को दुनिया के चलन या बहाव का हाल चाल बताने वाला भी कहा जाता है। इस के यह मानी होंगे कि ख़ुदा ने एक सिस्टम से दुनिया को पैदा किया और क़द्र उसका पैदा करने वाला होने का 'पाया हुआ' है जिसका असर हर चीज़ में है। तक़दीर (अन्दाज़ा करना) से बाहरी और देखने में अन्दाज़ा लगाना है। वैसा अन्दाज़ा नहीं जिस तरह आर्कीटेक्ट मकान का नक़्शा और ढांचा अपने दिमाग़ में मकान तैयार हाने से पहले बना लेते हैं कुरान इन्हीं ढाँचों को उनकी सभी ख़ास बातों के साथ और हर चीज़ के अन्दाज़ को 'क़द्र' के नाम

से याद करता है।

“बेशक हमने हर चीज़ एक तय किये हुए (ठोस) हिसाब से पैदा की है।”

(सूरा ‘क़मर’ (54) आयत–49)

ख़ुदा ने हर चीज़ का एक अन्दाज़ा तय कर रखा है।

(सूरा ‘तलाक़’ (65) आयत–2)

अक़्ल वाली और नेचुरल सभी ज़रूरतों को और वजहों के उन सभी हिस्सों को जो होने वाली बातों के पैदा करने के लिये ज़रूरी होते हैं, उनके ख़ुदा ने “क़ज़ा” (ख़ुदा का फैसला) कहा है। अपनी तय शर्तों के साथ जब तक वह हिसाब पूरे न हो जाएं क़ज़ा नहीं हुआ करती। ख़ुदा समय और जगह वाले वाक़ियों और होने वाली बातों की हदों को देखते हुए उसी बुनियाद पर क़ज़ा का हुक्म लागू करता है। ऐसे में जो भी करने वाला सामने आता है वह ख़ुदा के जानने और उसके इरादे का ज़ाहिर करने वाला होता है और उसकी क़ज़ा के लागू होने का ज़रिया (माध्यम) होता है।

हर चीज़ के अन्दर बढ़ने और पूरा होने की सलाहियत हुआ करती है। मैटर जो चलने के क़ानून (Laws of Motion) के अण्डर में होता है तरह–तरह के रूप अपना सकता है और वजहों के असर से अलग–अलग हालतें और दशायें ले सकता है। यही मैटर कुछ वजहों से ऐसा ईंधन लेकर जो उसको चलने पर तैयार कर सके कुछ दूसरी वजहों से टकराकर उनके रूप में होकर अपना ‘आपा’ ख़त्म कर देता है। कभी यह अपनी तरक़्क़ी को चालू रखते हुए तरक़्क़ी की आख़री हद तक पहुँच जाता है। कभी–कभी बढने को चालू न रखकर रुक जाता है। कभी तो जल्दी में अपने चलने में तेज़ी पैदा करता है और कभी आगे बढ़ाने के लिए जिस तेज़ी की ज़रूरत होती है उसको ख़त्म कर देता है और बहुत ही

धीमी चाल से चलता है। इस तरह उसका पलटना एक ही तरह की क़ज़ा और क़द्र से जुड़ा नहीं है क्योंकि वजह ही नतीजे की क़िस्मत का फ़ैसला करती है। चूँकि मैटर वाली चीज़ों का लगाव अलग–अलग ‘वजहों’ से होता है, इसलिए एक दूसरे के पलट फिरन के रास्ते में अन्तर होता है। हर ‘वजह’ नतीजे को एक ख़ास ढर्रे पर लगा देती है।

मान लीजिए कि एक आदमी को आतें बढ़ने का रोग हो जाता है तो यह बीमारी किसी ख़ास वजह से हुई होगी, और इसका अन्त दो तरह का हो सकता हैः–

1– आपरेशन करा के ठीक हो, अगर ऐसा होगा तो उसका ढर्रा इलाज की वजह से बदल गया।

2– दूसरा रास्ता यह होगा कि आपरेशन न कराए और मर जाए। इससे पता चला कि मरीज़ के रास्ते ठीक करने के कई अलग–अलग और बदले हुए है और मरीज़ जो चाहे वह तरीक़ा अपना सकता है। लेकिन मरीज़ जो चाहे या उसकी जो भी मर्ज़ी हो ख़ुदा के आख़िरी फैसले के बाहर नहीं है।

यह बात शरीअत (धर्म के क़ानून) और अक़्ल से बिल्कुल ग़लत है कि मरीज़ यह कहकर बैठ जाए कि अब तो जो लिखा होगा वही होगा, अगर क़िस्मत में जीना लिखा है तो ज़िन्दा रहूँगा चाहे इलाज करूँ या न करूँ। अगर क़िस्मत में मौत लिखी है तो चाहे जितना इलाज करूँ मर जाऊँगा। अगर मरीज़ इलाज कराके अच्छा हो जाता है, तो यही उसकी क़िस्मत है और अगर इलाज न करा के मर जाता है, तब भी उसकी यही क़िस्मत है। दोनों रूप उसकी क़िस्मत है।

जो लोग सुस्ती करते हैं और किसी तरह का कोई काम नहीं करते, पहले से ही काम न करने की ठान लेते हैं। हाथ पर

हाथ धरे बैठे रहते हैं और जब रखा हुआ पैसा ख़त्म हो जाता है, वह कंगाल हो जाते हैं तो अपनी कंगाली को किस्मत के सर थोप देते हैं। अगर यही लोग काम करते, मेहनत मज़दूरी करते और पैसे वाले हो जाते, तब भी वह क़िस्मत का ही करिश्मा होता। इसलिए इन्सान चाहे काम करे या न करे सब क़िस्मत है, क़िस्मत के अलावा कुछ नहीं।

इसी से क़िस्मत के लिखे का बदलना कारण—नतीजे के क़ानून के ख़िलाफ़ नहीं है। जो चीज़ भी क़िस्मत बदलने की वजह बनती है, जो करने वाला या कारण भी दुनिया में असर करने वाला है वह कारण के नियम के घेरे के बाहर नहीं है। जो चीज़ भाग्य के लिखे को बदलती है वह भी 'कारण' के नियम के घेरे में एक घेरा है और अल्लाह की 'क़ज़ा' (फैसला) और 'भाग्य' को दिखाने वाली है। इसे यूँ समझिये कि एक क़िस्मत का लिखा जिससे बदल जाता है वह भी क़िस्मत का लिखा ही होता है।

हाँ होने वाली बातों से पराभौतिक (Metaphysical) नियमों का लगाव साईन्स जैसा एक तरह का नहीं होता। ये नियम होने वाली बातों पर राज तो करते हैं फिर भी उन्हें 'ओर' देने में बेपरवाह होते हैं। होने वाली बातों, सामने की चीज़ों और उनके ओर देने में यही फैले हुए भरपूर नियम लागू होते हैं। होने वाली बातों का मुँह चाहे जिधर हो वह इन क़ानून के घेरे से बाहर नहीं होते। यूँ समझिये कि होने वाली बातें, घटनाएं, वाक़िए एक तरह की ज़िन्दा चीज़ें हैं जो एक बड़े जंगल में चर रही हैं, वह चाहे जिधर मुँह करें, जिधर जाएं, रहेंगी तो उसी जंगल में। ख़ुदा का फैसला (क़ज़ा) और भाग्य एक तरह वही कारण—नतीजे नियम के असल का हर जगह होना है। यह एक मेटाफिज़िकल मामला है जिसे साइन्स के फैसलों जैसा नहीं जा सकता है।

कारण नियम की जड़ सिर्फ़ इतना बताती है कि हर बात के लिए एक दलील ज़रूरी होती है, उसके बाद होने वाली बातों के सिलसिले में इससे ज़्यादा पहले से कुछ नहीं बता सकती। मेटाफ़िज़िकल क़ानून में असलियत से यह बात नहीं होती।

मेटाफ़िज़िकल क़ानून का दुनिया के तरह—तरह के वाकियों और बातों के लिए एक ज़मीन है। यूँ समझिये यह क़ानून एक सड़क की तरह है जिस पर लोग चलते हैं। इसको इससे कुछ लेना देना नहीं कि कौन किस तरह और किस तरफ़ जा रहा है।

हज़रत अली (अ0) एक टूटी दीवार के साए में बैठे थे। अचानक वहाँ से उठे और दूसरी दीवार के साए में बैठ गए। लोगों ने कहा, ''ऐ अली! आप ख़ुदा की क़ज़ा (फैसले) से भागते हैं?'' तो मौला ने फ़रमाया कि उसकी क़ज़ा से क़द्र (भाग्य) की पनाह (शरण) लेता हूँ। यानी एक भाग्य से दूसरे भाग्य की तरफ़ मुड़ता हूँ। बैठे रहना और उठकर दूसरी दीवार के साए में भाग जाना दोनो ही भाग्य हैं। अगर टूटी दीवार गिर जाए और मुझे नुक़सान पहुँचे तो यह भी क़ज़ा और क़द्र और अगर उस ख़तरे की जगह से उठ जाऊँ तो यह भी क़ज़ा और क़द्र है।

न बदले जा सकने वाले बहावों के साथ, पूरी दुनिया पर राज करते नेचर के क़ानूनों और सिस्टम को कुरान ख़ुदा के चलन कहता है:

''और तुम ख़ुदा की सुन्नत (चलन/सदावृत्ति) में हरगिज़ बदलाव न पाओगे।''

(सूरा 'अह्ज़ाब' (33) आयत—63)

इसे भी ख़ुदा की सुन्नत कहता है:

''ऐ विश्वास रखने वालों! तुम में से जो लोग ईमान लाए और अच्छे—अच्छे काम किये उनसे ख़ुदा ने वादा

किया है कि वह उनको (एक न एक दिन) ज़मीन पर नायब (उत्तराधिकारी) बनाएगा जिस तरह उन लोगों को नायब बनाया जो उनसे पहले गुज़र चुके हैं, और जिस मज़हब को उसने उनके लिए पसन्द फ़रमाया है (इस्लाम) उस पर उन्हें पूरी–पूरी कुदरत (पावर) देगा और उनके डर जाने के बाद (उनके डर को) अम्न (शान्ति) से ज़रूर बदल देगा कि वह (इत्मिनान से) मेरी इबादत (पूजा/उपासना) करेंगे और किसी को हमारा शरीक (साथी/साझी) न बना लेंगे और जो इन्सान इसके बाद भी नाशुक्री करे तो ऐसे ही लोग बुरे हैं।''

(सूरा 'नूर' (24) आयत–55)

ऐसे ही इसे भी भगवान का चलन बताता हैः–

''जब तक लोग ख़ुद अपनी हालत को न बदलें, ख़ुदा हरगिज़ समाज की हालत को नहीं बदलता।''

(सूरा रअ्द (13) आयत–11)

इस्लाम की नज़र में किसी वाक़ेए का होना या न होना सिर्फ़ मैटरियल वजहों ही पर टिका नहीं है। एहसास समझ (Senses) और मैटर के आयामों (Dimensions) तक ही नज़र को बन्धी न रखना चाहिए। क्योंकि रूहानी (आध्यात्मिक या मेटाफिज़िकल) कारण भी उस हद तक हैं जहाँ मैटर वाले कारण पहुँच नहीं सकते। रूहानी वजहों का वाक़ियों और बातों के होने में बड़ा हाथ है। दुनिया के तराज़ू में अच्छाई और बुराई में फ़र्क़ है। इन्सान की ज़िन्दगी में हर अच्छे काम का एक असर (बदला) होता है जैसे इन्सान के साथ नेकी, भलाई, सेवा और प्यार मुहब्बत यह वह चीज़ें है जो इन्सान के नतीजे को भलाई, शुभ और सदा की

नेमतों वाला बना देती हैं। ज़ुल्म, अन्याय, हद से बढ़ जाना, सर उठाना, मन की चाहतों की गुलामी और ग़लत अपनी–अपनी करना, जैसी चीज़ों का नतीजा सदा कड़वा और बुरा होता है। इस तरह देखा जाए तो ऐसा लगता है कि जैसे दुनिया ही कामों के नतीजे देती है। जैसे यह दुनिया सूझबूझ वाली और सुनने समझने वाली है।

कामों के नतीजे भी क़ज़ा और क़द्र के घेरे में आते हैं जिससे भागा नहीं जा सकता। तुम जहाँ भी जाओगे वह तुम्हें पकड़ लेगा। एक बुद्धजीवी कहता हैः– ''दुनिया को नासमझ न कहो वरना तुम यह नासमझी अपनी ओर जोड़ोगे क्योंकि तुम दुनिया से पैदा हुए हो। अगर दुनिया में समझ नहीं है तो तुममें कहाँ से आ गई।''

कुरान रूहानी कारणों के बारे में कहता हैः–

''और अगर इन बस्तियों के रहने वाले ईमान (विश्वास) लाते और परहेज़गार (संयमी) बनते तो हम उन पर ज़मीन और आसमान की बरकतों (समृद्धियों) के दरवाज़े खोल देते मगर (अफ़सोस) उन लोगों ने (हमारे पैग़म्बरों) को झुठलाया तो हमने भी उनकी करतूतों की वजह से उनको (अज़ाब में) जकड़ दिया।''

(सूरा 'आराफ़' (7) आयत–95)

फिर कहा जाता हैः–

''और हम तो बस्तियों को बर्बाद करते ही नहीं जब तक वहाँ के लोग अत्याचारी न हों।''

क़ज़ा और क़द्र का यही मसला 'बेबसी' मानने वालों की एक दलील है। वह कहते हैं कि इन्सान से अपने से कोई भी काम नहीं होता क्योंकि ख़ुदा ने इन्सान के हर काम को चाहे वह पूरा

हो या अधूरा, अच्छा हो या बुरा उसके भाग्य ने कर दिया है इसलिए इन्सान के अपने चाहे काम की कोई बात नहीं रह जाती। लेकिन ऐसी 'बेबसी' और ठोस नतीजे में यह फ़र्क़ है कि हर बात का होना उस वक़्त ज़रूरी हो जाता है जब उसकी सभी सही वजहें खोज ली जाएँ। इन वजहों में ख़ुद इन्सान का इरादा भी हैं। इन्सान एक चाह और सकत वाला है इसलिए उसके काम एक तय मक़सद के साथ होते हैं। इन्सान बारिश की बूँदों की तरह नहीं है क्योंकि बारिश की बूँद एक ख़ास जगह से चलकर ज़मीन के खिंचाव (Gravitation) के सहारे एक ख़ास जगह पर ही गिरती है। लेकिन इन्सान अपने कामों में अपने क़ानून के हिसाब से नेचर का लगा बन्धा नहीं है। अगर वह बारिश की बूँद की तरह नेचर का लगा बन्धा होता तो अपने उन मक़सदों में जिसके बारे में ग़ौर करता रहता है अपना चाहा कुछ नहीं कर सकता था। जबकि बेबसी वाला क़ानून इन्सान को ऐसा मानता है जो आज़ाद तो है मगर इरादे से लुन्ज और बेकार है। वह यह भी मानता है कि सभी वजहें इन्सान से अलग हैं और सिर्फ़ ख़ुदा से जुड़ी हुई हैं।

बस क़ज़ा और क़द्र उस वक़्त बेबसी को ज़रूरी करेंगी जब यही क़ज़ा और क़द्र इन्सान की सकत और इरादे की जगह पर काम करें, इन्सान के कामों में उसके इरादे और उसके चाहने का कुछ भी लेना–देना न हो। क़ज़ा और क़द्र तो कारण–नतीजे वाले सिस्टम के अलावा कुछ और नहीं है।

यह बात सही है कि हमारा सभी चाहा पूरा नहीं हो पाता लेकिन यह इन्सान के बेबस होने की भी दलील नहीं है, क्योंकि यह इन्सान को चाह और सकत वाला मानना और इसी के साथ उसकी चाह सकत को सिर्फ़ उसके कामों तक घेर देने में कोई टकराव नहीं है। चाहने और सकत की दलीलें इन्सान के बेहद

इख़्तियार को साबित नहीं करतीं।

ख़ुदा ने वजूद (होने) की ज़मीन पर बहुत से कारण पैदा किये हैं। कभी ये इन्सान पर खुल जाते, कभी छुपे रह जाते हैं। अगर इन्सान क़ज़ा और भाग्य की बात गहराई से सही तरह समझ ले, तो अपनी जानकारी के घेरे के अन्दर अपनी ताक़त से बहुत ज़्यादा फ़ायदा उठाने के लिए पहले से ज़्यादा कोशिश करने लगेगा। इससे होने वाली बात की ज़्यादा से ज़्यादा पहचान मिल जायेगी और इसके नतीजे में ज़्यादा सफलता पा सकेगा। अपने चाहे का पूरा न होना इन्सान की घिरी हुई सिमटी ताक़तों की वजह से है, सफलता के कारणों तक पहुँच न हो पाने से चाहतें पानी की लकीर हो जाती है।

मालूम हुआ कि हर चीज़ का नतीजा होना अपनी पिछली वजहों से जुड़ा होता है, मगर वह भी कारण के आम नियम होने को मान लेने की बुनियाद पर होता है, चाहे हम ख़ुदा के स्रोत को मानें या न मानें क्योंकि आज़ादी के नतीजे के बारे में यह असर नहीं करता। यानी चाहे इन्सान की सोच यह हो कि जग का कारण–नतीजे का सिस्टम सब ख़ुदा के इरादे और चाहतों से जुड़ा है या फिर यह सोच हो कि यह जग का यह सिस्टम अपने से टिकाऊ है, ख़ुदा से इसका कोई लगाव नहीं है। दोनों तरह से 'बेबसी' का मानना क़ज़ा और क़द्र का नतीजा नहीं है। इसका निचोड़ यह है कि अपने कारणों से होने वाली हर बात का लगाव अटूट है। इन्हीं कारणों में इन्सान का चाहना, उसकी सकत, और इरादा भी है, न कि कारण–नतीजे की नहीं करना।

ख़ुदा की क़ज़ा और क़द्र हर सामने आने वाली चीज़ को कारण के ख़ास स्रोत (Source) से पैदा करती है। ख़ुदा का चाहना एक आम क़ानून की तरह पूरे जग पर छाई हुई है। हर बदलाव भी

ख़ुदा के चलन के आधार पर होता है। इसके अलावा किसी तरह से क़ज़ा और क़द्र का पता नहीं चलता। जो भी साइन्सी सोच, कारण के आम क़ानून को मानता है, वह इस तरह के लगावों को मानने में बेबस है, चाहे वह ख़ुदा वाले मज़हब का मानने वाला हो या मैटरियल सोच का मानने वाला हो।

किसी भी होने वाली बात का सामने आना (इसमें इन्सान के काम भी आते हैं) कारण की बुनियाद तय हो ही जाए और यह होना बेबसी के फ़ाएदे के लिए हो तो दोनों तरीक़ों का नतीजा 'बेबसी' होगा अगर होने वाली बातों का हो ही जाना 'बेबसी' के काम का नहीं है, तो ख़ुदा वाले और दुनिया वाले मत (मज़हब) में क्या फ़र्क़ है? हाँ, जो फ़र्क़ है, वह यह है कि मज़हब की सोच यह है कि यहाँ पर रूहानी कामों की एक चेन है जो उन काम करने वालों का हिस्सा है जो होने वाली बातों के पैदा करने में बहुत असर के (प्रभावशाली) हैं। यह मज़हबी सोच यह भी कहती है कि वजूद में कुछ ऐसे रूहानी राज़, रहस्य हैं जो मैटर से कहीं ज़्यादा गहरे और गुथे हुए हैं। यह मज़हबी सोच ज़िन्दगी को आत्मा, मक़सद और माने देती है। यही आदमी को आनन्द, सोचने की सकत, सूझबूझ की गहराई और उसके मैदान (पहुँच) के फैलाव पैदा करती है। यही इन्सान को भयानक रुकावट के गढ़े में गिरने से बचाती है और उसके बे रोक–टोक ऊँचाई की ओर पहुँचा देता है। यह बातें मैटरियल सोच में नहीं पाई जाती। इसी वजह से एक ख़ुदा वाला जो क़ज़ा और क़द्र के हो जाने को मानता है और इस बात को समझता है कि इन्सानों और दुनिया के पैदा करने में बहुत से सूझबूझ भरे मक़सद छुपे हुए हैं, वह सीधे रास्तों पर चलने और अपने कामों में उसकी मदद और अपनी पीठ की मज़बूती पर भरोसा रखता है। इसी से वह ज़्यादा ही और ज़्यादा जम के अपने

कामों के फल और नतीजों की आशा रखता है।

लेकिन जो इन्सान मैटर की दुनिया के मायाजाल में फंसा है और एक ख़ास सोच की हद में मैटर वाले फैसलों और भाग्य को मानता है वह अभागा उस ऊँचाई को नहीं पहुँच सकता क्योंकि उसे अपनी आशाओं के पूरा होने पर भी चैन नहीं आता। इन दोनों सोचों में सिखाने के और समाजी व रूहानी लेहाज़ से खुली हुई बहुत बड़ी दूरी है।

एनेटॉल फ्रांस (Anatole France) कहता हैः– यह मज़हब की सकत और भलाई पुण्य है जो इन्सान को उसके कामों और नतीजे की वजहें बताता है। जिस वक़्त हम ख़ुदा वाले विश्वास के फ़लसफ़े के सिद्धान्तों से दूर जाएंगे, जैसा कि हम आज कल इस साइन्स और आज़ादी वाले ज़माने में हैं, तो हमारे पास कोई ऐसा दूसरा रास्ता नहीं रह जाएगा जिससे हमको पता चले कि हम दुनिया में क्यों आए हैं या किस मक़सद से यहाँ पाँवं रखा है।

क़िस्मत के लिखे का राज़ हमें अपनी तगड़ी पहेलियों में घेरे हुए है। वाक़ई हमें किसी चीज़ में ग़ौर नहीं करना चाहिए ताकि दुख भरी ज़िन्दगी की धुन्ध का एहसास ही न कर सके। हमारे दुखों की जड़ें हमारी इस भरपूर अनजानपन से ही हैं कि हमें इस ज़िन्दगी में अपने 'होने' की वजह भी नहीं पता है।

अगर हम शरीर वाले दुखों और रूह व एहसास (Feelings) के जकड़ने के फ़लसफ़े को समझ लें और ख़ुदा के एक इरादे को मान लें तो इन कड़ाइयों, परेशानियों को सह लेंगे।

मोमिन (आस्तिक) दबावों और अपनी रूहानी तकलीफ़ों में भी एक मज़ा पाता है। हद यह है कि मोमिन से जो गुनाह और ग़लतियाँ हो जाती हैं उसकी वजह से उदास, निराश नहीं होता। लेकिन जिस दुनिया में ईमान की चिन्गारी बिल्कुल बुझ चुकी है

वहाँ दुख और पीड़ा अपने माने खो चुकी है और ये बेतुकी हंसी, बेढंगी खिल्ली और भोंडे मज़ाक भद्दी चंचलता के अलावा कुछ नहीं हैं।

क़ज़ा और क़द्र का ग़लत मतलब

'नई रौशनी' की टोपी वाले लोग क़ज़ा और क़द्र के बारे में अपनी ग़लत सोच की वजह से कहते हैं:— क़द्र का मानना इन्सान को ठस बना देता है और इन्सान को ज़िन्दगी में किसी भी तरह की कोशिश और काम करने से रोक देता है।

पच्छिम में इस सोच के आम होने की वजह क़ज़ा व क़द्र के मसले को सही से न जानना है और ख़ास तौर पर इस्लामी शिक्षाओं के सत्त और असलियत से अनजान होना है। इस ग़लत पच्छिमी सोच का पूरब के लोगों में फैलने की वजह ये है कि पूरब अभी पच्छिम से पीछे है।

हर वह आदमी या समाज जो अपने मैटर या रूह वाली चाहतों तक नहीं पहुँच पाते वह दिल को बहलाने के लिए क़ज़ा व क़द्र जैसे शब्दों का सहारा लेते है। रसूल (स0) का कहना है:— ''मेरी उम्मत (समुदाय) और मेरे मानने वालों पर एक समय ऐसा भी आएगा जब वह गुनाहों और बिगाड़ में डूबे हुए होंगे और इसकी वजह क़ज़ा व क़द्र (ख़ुदा की मर्ज़ी) बताएंगे और कहेंगे इसमें हम क्या करें यह सब भाग्य का लिखा हुआ है। अगर तुम ऐसे लोगों से मिलो तो उनसे कहना मैं उन लोगों से राज़ी/ख़ुश नहीं हूँ।''

क़ज़ा व क़द्र ज़िन्दगी में इन्सान को अपने मक़सद को पा लेने के लिए लगातार कोशिश से कभी नहीं रोकती। और तो और इस मसले में इस्लामी सोच के जानकार लोग जानते हैं कि

इस्लाम ने लोगों से रूह के साथ अपनी मैटरियल ज़िन्दगी के बनाने संवारने के लिए ज़रूरत से ज़्यादा कोशिश जुटाने को कहा है। यह इस्लाम का ऐसा कहना है जो इन्सान की कोशिशों में तेज़ी पैदा करता है।

पच्छिमी विचारकों में भाग्य का ग़लत मतलब निकालने वालों में एक जीन पॉल सार्टर (Jean Paul Sartre) कहता है: ''ख़ुदा के क़ज़ा व क़द्र के मसले के साथ—साथ इन्सान के अपने कामों में आज़ादी और सकत को माना नहीं जा सकता। या तो ख़ुदा और उसकी क़ज़ा और क़द्र है या फिर इन्सान की आज़ादी और सकत। मैं इन्सान की आज़ादी और सकत का मानने वाला हूँ। इसलिए ख़ुदा का विश्वास नहीं रख सकता, क्योंकि अगर मैं ख़ुदा को मानूँ तो उसकी क़ज़ा व क़द्र को मानना होगा। अगर इसे मान लूँ तो इन्सान की आज़ादी से हाथ धोना पड़ेगा। मैं इन्सान की आज़ादी को मानता हूँ। इसलिए ख़ुदा का विश्वास नहीं रख सकता।''

जबकि ख़ुदा की आम क़ज़ा व क़द्र और इन्सान की आज़ादी में कोई टकराव नहीं है।

कुरान जो ख़ुदा की मर्ज़ी को आम कहता है इसी के साथ इन्सान की आज़ादी भी मानता है और उस में अपने को बनाने की समझ और सकत देखता है। वह कहता है कि अच्छे बुरे की पहचान सही और ग़लत की समझ और उनमें से एक को चुनना यह ख़ुद इन्सान का काम है।

> *''हमने इन्सान को रास्ता भी दिखाया (अब वह) चाहे शुक्र (धन्यवाद) करे या न करे (फिर जाए/नकार दे)।''*

(सूरा 'दह्र' (76) आयत—3)

फिर कहता है:–

"और जो लोग आख़िरत (परलोक) की तमन्ना रखते हों और उसके लिए जैसी चाहिए वैसी कोशिश भी करें और वह ईमान (विश्वास) भी रखते हों तो यह लोग वह हैं जो अपनी कोशिश में धन्य (कामयाब) होंगे (जिनकी कोशिश धन्य है)।"

(सूरा 'असरा' (17) आयत–19)

और जो लोग क़यामत में यह कहेंगे उनको फिटकारता है:

"अगर ख़ुदा चाहता तो न हम ही उसके अलावा किसी और चीज़ की भक्ति करते और न हमारे बाप–दादा और न हम बग़ैर उस (की मर्ज़ी) के किसी चीज़ को हराम (निषेध) कर बैठते।"

(सूरा 'नह्ल' (16) आयत–34)

कुरान की किसी भी आयत में बिगाड़ और भटकने को या सुधार की रोक को ख़ुदा की ओर का नहीं कहा गया। कोई ऐसी आयत नहीं मिलेगी जिसमें इन्सान के इरादे में ख़ुदा के इरादे के हाथ डालने की बात हो और न ही यह कुरआन में कहा गया कि किसी इन्सान को इसलिए परेशानियों में डाला गया क्योंकि ख़ुदा की यही मर्ज़ी थी। हाँ, कुरआन ने यह ज़रूर कहा है कि 'किसी' को ख़ुदा का प्रकोप घेर लेगा या ख़ुदा सर उठाने वालों को दुखद अज़ाब देगा।

ख़ुदा अपने बन्दों पर मेहरबान है। वह दया, कृपा करता है। उसने अनगिनत, बेहिसाब नेमतें (भलाइयाँ) दी हैं। इसलिए अगर कोई गुनाहों का रास्ता छोड़कर सुधार और पाकी की ओर पलट जाये तो वह तौबा, पछतावों को क़बूल (स्वीकार) करने वाला है। वापसी के सारे रास्ते खोल देता है। यह उसकी बहुत बड़ी

रहमत (दया, करुणा) है।

इन्सान के चाहने और सकत का घेरा सारे जानवरों से तो बहुत बड़ा है फ़िर भी उतना सिमटा है जितना ख़ुदा ने तय कर दिया है। इसलिए अपनी पूरी ज़िन्दगी में हर चाहे को पूरा नहीं कर पाता। इसलिए कभी–कभी ऐसा होता है कि अपनी पूरी कोशिशों के बाद भी इन्सान अपने नतीजे तक नहीं पहुँच पाता। इसका मतलब यह नहीं कि ख़ुदा का इरादा उसके इरादे के आड़े आ गया बल्कि ऐसे मौक़ों पर कुछ अन्जानी बाहरी वजहें होती हैं जो इन्सान की समझ सकत के बाहर होती हैं और वह इन्सान के मक़सद के रास्ते का रोड़ा बन जाती हैं और उसके चाहे को पूरा नहीं होने देतीं। जब हम यह जानते हैं कि कोई भी चीज़ वजह के बिना नहीं हो सकती और कोई वजह नतीजे के बिना नहीं हो सकती, और हमारे समझ के हथियार छोटे और खोटे हैं, तो हमें मान लेना चाहिए कि हम अपनी सारी चाहतों को पूरा भी नहीं कर सकते।

ख़ुदा ने वजूद के सिस्टम में करोड़ों कारक/करने वाले/कारण पैदा किये हैं। कुछ तो ऐसे हैं जिनको इन्सान समझता है और बहुत से ऐसे हैं जिन्हें इन्सान जानता भी नहीं। इसलिए क़ज़ा और क़द्र इन्सान की चाह सकत को न छीनती हैं और न उसके काम करने और भले जीवन तक पहुँचने में रोक पैदा करती हैं। बल्कि इन्सान की सोच और समझ को आगे बढ़ाने में रास्ता दिखाती हैं, अपनी कोशिश भर इन्सान को चलाती है जिससे वह अपनी समझ को बढ़ाये और जीवन की सफलताओं के लिए रास्ता साफ़ करने वाले और भी छोटे से छोटे कारणों को पहचाने। बस इस तरह क़ज़ा और क़द्र का मानना ख़ुद इन्सान के लिए अपने मक़सदों में बढ़ने और उन्हें पूरा करने में असर करता है।

इस चर्चा और पिछली चर्चा से इन्सान के बुरे–भले होने का मसला भी हल हो जाता है क्योंकि इन्सान की भलाई या बुराई उसके अपने अपने से ही किये कामों और चालों की वजह से ही पैदा होती है। यह भलाई–बुराई न ही इन्सान के अपने चाहे और अपने किये कामों का गुण बनती है, न नेचर के उन कारणों का गुण बनती है जो इन्सान के होने में असर वाला रोल करते हैं।

याद रखिये माहौल और विरासत (Heridity) और वह सब चीज़ें जो इन्सान में प्राकृतिक तरह निकलती और बढ़ती हैं उनमें से कोई भी चीज़ इन्सान की अच्छाई और बुराई में अनिवार्य/ज़रूरी असर नहीं रखतीं। यह चीज़ें इन्सान के फल को तै नहीं करतीं, बल्कि जो चीज़ इन्सान का आने वाला कल बनाती है और उसको उँचाई या गिरावट की तरफ़ ले जाती है वह ख़ुद इन्सान की अपनी चाह सकत है। यह और बात है कि वह अपनी समझ और चाह, सकत से कितना फ़ायदा उठा सकता है।

भलाई और अच्छे भाग्य का इस बात से कोई लगाव नहीं कि इन्सान ने नेचर की देन से कैसे और कितना फ़ायदा उठाया। जिसके हाथों में बहुत धन है उसकी ज़िम्मेदारी भी बड़ी Sensitive और समझ को परखने वाली होती है। किसी का कहना है 'जिसका छज्जा ज़्यादा बड़ा उसकी बर्फ़ भी ज़्यादा, उसका बहकना भटकना एक कमज़ोर बेपैसे वाले के बहकने, भटकने के बराबर नहीं है क्योंकि उसका हिसाब उन्हीं सकतों, समाइयों और समझ से होगा जो उसके पास हैं।

यह बात भी हो सकती है कि किसी के अपने में छिपी सकत और पूँजी कम है और देखने में (नेचर से भी) कोई ख़ास

मालामाल नहीं है, लेकिन अपनी ज़िम्मेदारियों के हिसाब से ढंग और मौक़ा बना सकता है, तो वह इन्सान के स्थान (Position) वाली भलाई तक पहुँच सकता है। इन्सान जिस भलाई तक पहुँचा है वह अपने अन्दर जमा रखी होनहारी के सही इस्तेमाल की वजह से है।

वैसे इसका उलटा भी हो सकता है यानी धनी भलाई तक न पहुँच सके और सही फ़ायदा न उठाकर भटक जाए और बुरा हो जाए और कभी भलाई न पा सके:–

''हर कोई अपने कामों का गिरो (Mortgage) है।''

(सूरा 'मुदस्सिर' (74) आयत–38)

क़ुरान का नज़रिया यही है कि हर इन्सान की अच्छाई और बुराई का लगाव उसके बस वाले काम से है, नेचर या मन की बनावट से नहीं। यह ख़ुदा के न्यायवाली निशानियों में से एक है।

'बदा' भी शियों का एक ख़ास विश्वास है। इसका मतलब है कि कारण बदलने से नतीजा भी बदल जाता है। जो चीज़ सामने से तय और हमेशा वाली मालूम होती है, वह इन्सान के काम और उसके चाल–चलन के बदलने से बदल जाती है। जिस तरह मैटर वाले कारण कभी इन्सान के नतीजे को बदल देते हैं, उसी तरह चीज़ों में रूहानी कारण भी कभी–कभी अपना असर डालते हैं। यह भी हो सकता है कि जो चीज़ें पर्दे के पीछे हैं और सामने नहीं आ सकती हैं, ये रूहानी कारण उनको हमारे लिए सामने कर दें। असल में कारणों और शर्तों के बदलने से हमारे लिए नई–नई बातें खुलती हैं। पहले वाले काम के पीछे जो सोच (मसलहत) या Policy होती है, उसके ख़त्म होने से दूसरे काम

की सोच, मसलहत जन्म लेती है जैसे (शरीयत/धर्म–विधान में) नस्ख़ (धर्म का कोई आर्डर बदलना) में होता है कि बाद वाले नियम पहले वाले नियम को हटा देते हैं। इससे ख़ुदा का अनजानापन या पछतावे को साबित नहीं किया जा सकता। बल्कि 'नस्ख़' शरीयत के पिछले हुक्म के हटने, ख़त्म होने को बताता है। बस यही बात असली हुक्मों में 'बदा' की होती है।

बदा का मतलब यह लेना कि 'एक चीज़ की सच्चाई ख़ुदा से छुपी हुई थी और उसके बाद सामने आई, इसलिए ख़ुदा ने हुक्म बदल दिया' बिल्कुल ग़लत है। ऐसा मानना ख़ुदा के भरपूर जानने के गुण के छाये होने पर उँगली उठाता है। कोई भी मुसलमान ऐसा विश्वास नहीं रख सकता।

दुआ भी रूहानी कारणों में है। इसकी अहमियत/महत्व को कम नहीं करना चाहिए। ख़ुदा लोगों के दिलों के हाल और राज़ों का जानने वाला है। रूहानी दुनिया में अपने पालने वाले से बन्दे का दुआ करना और बन्दे में ख़ुदा की लगन वैसे ही है जैसे काम के सिस्टम में इन्सान का नेचर से लगाव होता है। दुआ बन्दे को ख़ुदा से क़रीब कर देती है। फिर दुआ ख़ुद वह काम है जो करते रहना चाहिए।

इसलिए इन्सान के लिए ज़रूरी है कि अगर कठिनाइयों में घिर जाए तो उदास, बेआस, निराश न हो क्योंकि ख़ुदा के दरवाज़े कभी किसी के लिए बन्द नहीं होते। हो सकता है आने वाला कल एक ऐसी नई बात लेकर आए जिसके बारे में इन्सान आज सोच भी नहीं सकता।

क़ुरान कहता हैः–

''वह हर रोज़ (हर वक़्त) अपनी पैदा की हुई के एक न एक काम में है।''

(सूरा रहमान (55) आयत–28)

इसीलिए किसी भी हाल में दुआ नहीं छोड़ना चाहिए। दुआ के साथ–साथ कोशिश करना भी बहुत ज़रूरी है क्योंकि कोशिश के बिना दुआ करने के बारे में हज़रत अली फ़रमाते हैंः–

''काम के बिना दुआ करने वाला ऐसा है जैसे डोरी के बिना कमान (धनुष) से तीर चलाने वाला।''

बल्कि इन्सान के लिए ज़रूरी है कि अपनी कोशिशों के साथ–साथ बहुत ख़ुलूस, खरे मन और उम्मीद के साथ अपना मामला ख़ुदा के हवाले कर दे और परम शक्ति ख़ुदा से मदद माँगता रहे। इसमें कोई शक नहीं कि ख़ुदा अपने मोमिन (मानने वाले) बन्दे की मदद करता है। क़ुरान कहता हैः–

''(ऐ रसूल!) जब मेरे बन्दे मेरा हाल तुमसे पूछे तो (कह दो कि) मैं उनके पास ही हूँ और मुझसे कोई दुआ माँगता है तो मैं हर दुआ करने वाले की दुआ (सुनता हूँ और जो मुनासिब हो तो) क़बूल करता हूँ, बस उन्हें चाहिए कि वह मेरा भी कहा मानें और मुझ पर ईमान लाएं ताकि वह सीधे रास्ते पर आ जाएं।''

(सूरा 'बक़रः' (2) आयत–185)

हाँ यह ज़रूर है कि रूह इसी तरह पूरी ऊँचाई तक पहुँचती है और इन्सान को भलाई दे देती है, जब इन्सान बेकली और पिछड़ेपन के गढ़े में गिरे बिना अपने को वजहों, कारणों से अलग करके ख़ुदा से लौ लगाए तब वह अपने को अपने ख़ुदा के

साथ देखेगा और ख़ुदा की बेहद ख़ास मेहरबानियों, दयाओं और वरदानों को महसूस करेगा।

इमाम ज़ैनुलआबिदीन (अ0) दुआए अबुहमज़ा समाली (अबूहम्ज़ा को बताई हुई इमाम की दुआ) में फ़रमाते हैं:–

"ऐ ख़ुदा! (अपनी) माँगों के दरवाज़े तेरी तरफ खुले हुए पाता हूँ और तेरी तरफ़ उम्मीदों के घाट भरे हुए देखता हूँ, तेरी दया और तेरी मेहरबानियों से मदद चाहने को उन लोगों के लिए जो तुझसे लौ लगाए है, मुबाह (सही) देखता हूँ, दुआ के दरवाज़े चीख़ चिल्लाने वालों और मज़लूमों (अत्याचार अन्याय के मारे हुए) के लिए खुले हुए हैं। मैं जानता हूँ तू उम्मीद करने वालों (की दुआ) को क़बूल (स्वीकार) करता है और मज़लूमों की मदद करता है।"

रिवायत (रसूल या इमाम के कहने को दुहराना) में है कि अपने गुनाहों की वजह से मरने वालों की गिनती अपनी मौत से मरने वालों से बहुत ज़्यादा है। इसी तरह रिवयात में यह भी है कि एहसान, भलाई की वजह से ज़िन्दा रहने वालों की गिनती अपनी नेचुरल उम्र के हिसाब से ज़िन्दा रहने वालों से कहीं ज़्यादा है। इसी तरह यह भी है कि गुनाहों की वजह से मौत नेचुरल मौत से ज़्यादा है। नेचरल उम्र से भलाई की वजह से इन्सान का जीना ज़्यादा होता है।

(सफ़ीनतुल बिहार भाग–1 पेज–488)

दुआ और उसकी बरकत से ख़ुदा ने जनाब ज़करिया नबी (अ0) को बेटा यह्या (अ0) दिया। तौबा करने और लौ लगाने की

वजह से जनाबे यूनिस (अ0) इब्ने मती और उनकी उम्मत (समुदाय) को अज़ाब और मरने से बचा लिया।

ख़ुदा ने संसार में जिन क़ानूनों को लागू किया है वह क़ानून ख़ुदा की बेहद क़ुव्वतों, शक्तियों को घेर नहीं सकते, उसकी आम सकत को उससे छीन नहीं सकते। जिस तरह ख़ुदा पैदा कर सकता है, उसी तरह उनके बदलाव भी कर सकता है और मिटा या टिका सकता और उन्हें चालू रख सकता है। क़ानून और नेचर के जलवों के सामने उसके हाथ बंधे हुए नहीं हैं। लेकिन कुछ नेचुरल चीज़ों के हर समय बदल सकने का यह मतलब नहीं है कि ख़ुदा ने संसार के सिस्टम में जो चीज़ें तय कर दी हैं, उनको तोड़ता ही रहे और अपने क़ानून और चलन में उलट–पलट करता ही रहे, बल्कि ख़ुद यह बदलाव भी कुछ उसूल, सिद्धान्तों और क़ानूनों से बन्धा है जिसको हम कभी महसूस ही नहीं कर सकते।

□□□